रक्त दान

हरिकृष्ण प्रेमी

रक्तदान

१८५७ के स्वतंत्रता-संग्राम में अंतिम मुग़ल सम्राट बहादुरशाह 'ज़फ़र' ने जो सराहनीय त्याग किया और उस संग्राम में क्रियात्मक सहयोग दिया, प्रस्तुत नाटक इतिहास के उसी रक्त-रंजित अध्याय की एक झांकी प्रस्तुत करता है।

नाटककार हरिकृष्ण 'प्रेमी' के इस नाटक की सबसे बड़ी विशेषता यह है, जहां यह इतिहास के एक महत्त्वपूर्ण घटना-काल की मार्मिक नाटकीय अभिव्यक्ति प्रस्तुत करता है, वहां आज की परि-स्थितियों में धर्म, जाति, भाषा, सम्प्रदाय और प्रादेशिकता को लेकर जो झगड़े हो रहे हैं, उनके विरुद्ध भी ज़ोरदार चेतावनी देता है। नाटककार ने अभिनेयता का भी पूरा ध्यान रखा है।

४.५०
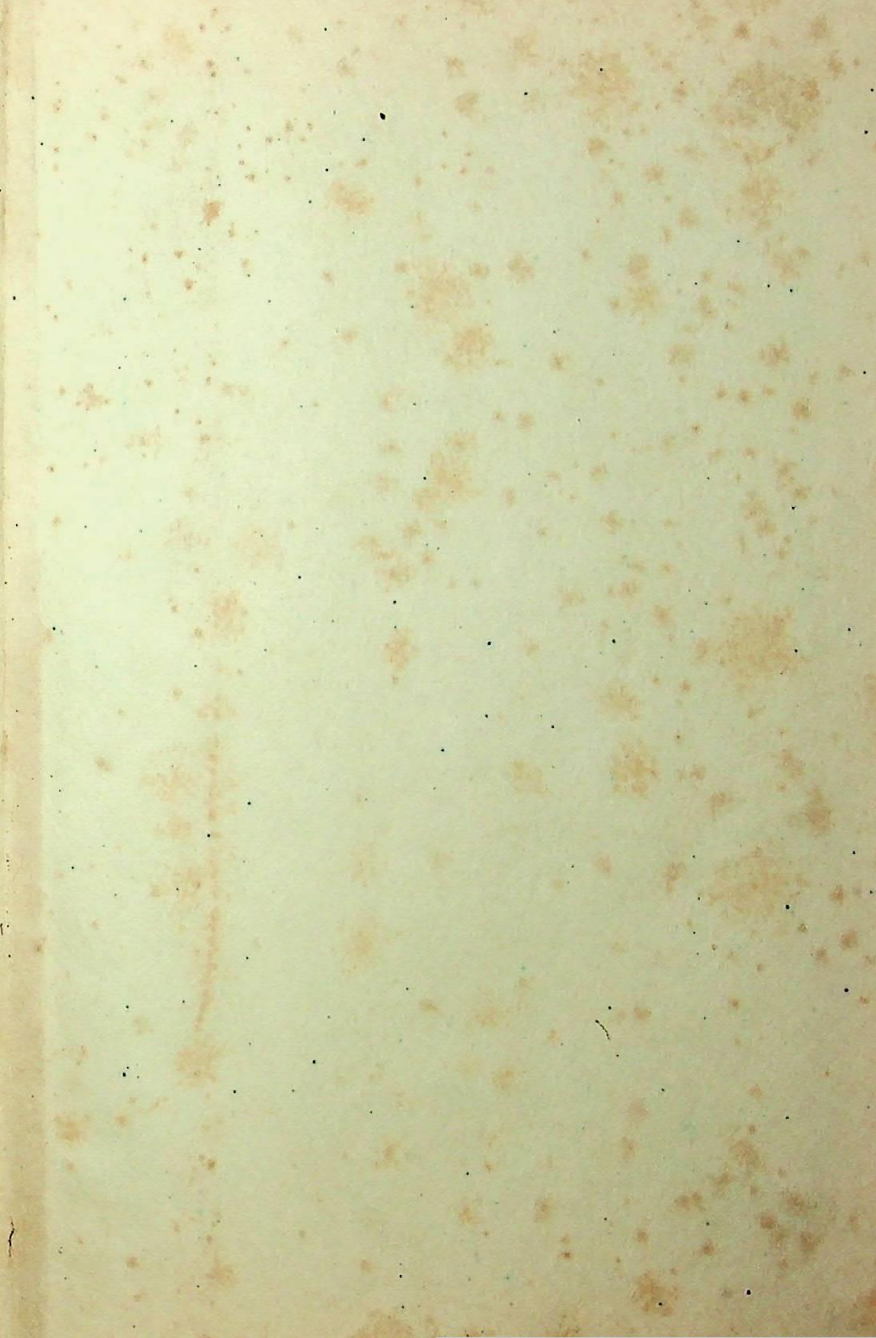
रक्तदान

हरिकृष्ण प्रेमी

राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली

रक्तदान

प्रवेश

सन् १८५७ में अंग्रेज़ों को भारत से निकाल बाहर करने के लिए जो विप्लव हुआ था उसमें अन्तिम मुगल सम्राट बहादुरशाह 'ज़फ़र' ने जो सराहनीय भाग लिया उसकी एक झांकी प्रस्तुत नाटक उपस्थित करता है। १८५७ की क्रांति की योजना जिन लोगों ने बनाई थी उन्होंने यह निश्चय किया था कि ३१ मई को अंग्रेज़ों की जो भारतीय सैनिकों से निर्मित सेनाएं थीं, वे एकसाथ विद्रोह करेंगी और जनता भी पूर्ण सहयोग देगी। किन्तु मेरठ में १० मई को ही भारतीय सैनिकों ने अंग्रेज़ों के विरुद्ध शस्त्र उठा लिए। मेरठ से वे दिल्ली पहुंचे और उन्होंने मुगल सम्राट बहादुरशाह 'ज़फर' से स्वाधीनता के संग्राम का नेतृत्व ग्रहण करने की प्रार्थना की। सम्राट असमंजस में पड़ गए, क्योंकि विप्लव का विस्फोट समय से पूर्व ही हो गया था, फिर भी उन्होंने क्रान्तिकारी सैनिकों को निराश नहीं किया। उन्होंने विप्लवकारियों को केवल आशीर्वाद ही नहीं दिया बल्कि ८१ वर्ष की आयु में भी स्वाधीनता-संग्राम का नेतृत्व सम्हालकर अद्‌भुत कार्य-शक्ति और प्रबन्ध-कुशलता का परिचय दिया।

सम्राट बहादुरशाह 'ज़फ़र' के जो गुण इस संघर्ष के समय उभर-कर सामने आए, उनके कारण उनका स्थान भारत के इतिहास में अमर हो गया है। उन्हें लोग शायर के रूप में ही जानते थे लेकिन वे एक दयालु किन्तु दृढ़ शासक भी थे, यह तो १८५७ की क्रांति ने ही दिखाया। वे जानते थे कि बिना हिन्दुओं और मुसलमानों में पूर्ण एकता हुए विदेशी अंग्रेज़ों पर विजय नहीं पाई जा सकती, इसलिए वे अपने व्यक्तित्व के सम्पूर्ण प्रभाव को इस दिशा में प्रयोग में लाए। अंग्रेजों ने सम्राट के

अंतरंग व्यक्तियों में भी एवं कुछ मुल्लाओं और पडितों में भी ऐसे देश-द्रोही पैदा कर लिए थे जो ऐसे उपाय कर रहे थे जिनसे क्रान्ति विफल हो जाए। इन उपायों में एक यह था कि ईद के त्योहार पर एक ओर मुसलमानों को गाय काटने के लिए उकसाया जाए और दूसरी तरफ हिन्दुओं की धार्मिक भावनाओं को उभारा जाकर दोनों धर्मों के माननेवालों में झगड़ा करा दिया जाए। सम्राट ने किस दूरदर्शिता और दृढ़ता से यह दुर्घटना नहीं होने दी यह इस नाटक से पता चलेगा।

दूसरी बात जो सम्राट बहादुरशाह 'ज़फ़र' ने उस समय अनुभव की वह यह थी कि मुगल साम्राज्य का पहलेवाला निरंकुश राजतंत्रीय रूप पुनर्जीवित नहीं हो सकता। उन्होंने यत्न किया कि एक ऐसे राज्य की स्थापना की जाए जिसमें शक्ति केवल राजा में ही केन्द्रित न हो बल्कि प्रजा के विविध वर्गों के हाथ में ही राज्य-प्रबन्ध का उत्तरदायित्व हो। भारत में जिस प्रजातन्त्र का आज उदय हुआ है उसकी आवश्यकता वे उस समय ही अनुभव कर चुके थे, यह बात उनकी दूरदर्शिता की द्योतक है।

१८५७ में जैसी क्रान्ति हुई थी उसका लाभ ऐसे अराजकता-प्रिय लोग उठाते, जिनका धंधा लूट-मार करना ही है। यह भी स्वाभाविक था। किन्तु एक ओर सम्राट ने सैनिकों को समर में उत्साहपूर्वक भाग लेने के लिए प्रेरणा दी तो दूसरी ओर प्रजा को अराजक तत्त्वों से बचाने का भरसक यत्न किया। क्रान्तिकारियों में से भी यदि किसीने ज़रा-सा भी प्रजा को सताया तो उन्होंने उसका कड़ा विरोध किया और अपराधियों को दंड दिया। वे प्रजा को भी और सेना को भी अपनी सन्तान के समान प्रेम करते थे और यही कारण था कि चाहे राज्य के नाम से वे एक इंच भूमि के भी स्वामी नहीं थे लेकिन उनके प्रति भारतवासियों के हृदय में अद्भुत आस्था थी। अकबर, जहांगीर, शाहजहां, दारा आदि जो महान विभूतियां मुगल राज-वंश में हो गई हैं, सम्राट बहादुरशाह 'ज़फ़र' भी मानवोचित गुणों में उनसे कम नहीं थे। यह उनकी कठिनाई थी और भारत

का दुर्भाग्य था कि उस समय तक मुगल साम्राज्य समाप्त हो चुका था, सम्राट के पास न धन था, न राज्य और न सेना। फिर भी उन्होंने अपने आदर्श विचारों को चरितार्थ करने का प्रयत्न किया। इसलिए उनकी महानता को चार चांद लग जाते हैं।

सम्राट ने १८५७ की क्रांति में जिस दूरदर्शिता, दृढ़ता, धैर्य, उदारता, और वीरता का परिचय दिया उस प्रकार के उच्च गुण उनके शाहज़ादों में नहीं पाए गए। इसके लिए वे उतने दोषी नहीं थे। परिस्थितियों ने ही उन्हें ऐसा बना दिया था। यदि शाहज़ादों में भी सम्राट के समान नैतिक बल होता तो उस क्रांति का परिणाम ही दूसरा होता। अंग्रेज़ों ने और स्वार्थवश उनका गुप्त रूप से साथ देने वाले विद्रोहियों ने शाहज़ादों के पारस्परिक मतभेदों को निरन्तर उत्तेजित कर क्रांति की योजनाओं को कमज़ोर किया। सम्राट की प्रिय बेगम ज़ीनत महल भी देशद्रोहियों के षड्यन्त्र का शिकार हो गई। जब बरेली के रुहेला सरदार बख्तखां ने दिल्ली के संग्राम का नेतृत्व अपने हाथ में लिया तो देशद्रोहियों ने शाहज़ादों को बख्तखां के विरुद्ध उभारकर उसके सारे प्रयत्नों को विफल कर दिया। भारतीय सैनिक वीरता से लड़े, अनेक बार अंग्रेज़ी सेनाओं को उन्होंने पराजित किया लेकिन उनमें पारस्परिक तारतम्य और अनुशासन न होने के कारण १३५ दिन अंग्रेज़ों के प्रबल प्रहारों का सामना करते हुए उन्हें असफलता ही हाथ लगी। अनुशासन और तारतम्य भी सेना में कायम हो जाता यदि हकीम एहसानुल्लाखां और मिर्ज़ा इलाहीबख्श जैसे लोग उसे भंग करने के अनवरत यत्न न करते रहते। इस नाटक में ये सारी स्थितियां मैंने स्पष्ट की हैं। यह सब दिखाने में मेरा उद्देश्य इतना ही है कि भारतवासी आपस की फूट के दुष्परिणामों को समझें और देश की भावनात्मक एकता के महत्त्व को जानें।

कुछ शब्द नाटक के रचना-कौशल के सम्बन्ध में भी कह दूं। यह नाटक कुल १३५ दिन में घटी हुई घटनाओं का चित्रण करता है। इन १३५ दिनों में भी अंग्रेज़ी सेनाओं और भारतीय सेनाओं में जो मुकाबले

हुए—आक्रमण और प्रत्याक्रमण हुए, उनमें किस व्यक्ति ने कितनी वीरता दिखाई अथवा कायरता दिखाई, इन बातों का चित्रण मैंने नहीं किया है। यह नाटक न तो इतिहास है, न उपन्यास जिनमें ऐसे विशद चित्र खींचे जा सकते हैं। रंगमंच की आवश्यकताएं और सीमाएं लेखक को बांध देती हैं। फिर भी मैं समझता हूं कि मैंने जो तस्वीरें खींची हैं वे अपने-आपमें पूर्ण हैं। इतिहास की पूरी तस्वीर न खींचते हुए भी मैंने इतिहास के प्रति पूरी जानकारी को कायम रखा है।

सम्पूर्ण नाटक एक ही सेट पर समाप्त हो जाता है। अंकों का दृश्यों में विभाजन अवश्य है, वह भी केवल कुछ समय व्यतीत हो गया है यही बताने के लिए। एक ही सेट पर अर्थात् एक ही स्थान पर रहकर पूरी कथा कह जाना, वह भी ऐतिहासिक कथा को जिसमें घटनाएं अनेक स्थानों पर घटती हैं और सैकड़ों-हज़ारों व्यक्ति जिनमें कार्य करते हैं, बहुत ही कठिन है। अनेक घटनाओं को सूच्य विषय बनाना पड़ता है जिससे मंच पर क्रियाओं का अभाव-सा नज़र आता है किन्तु उपाय क्या है? एक ही स्थान पर रहकर जब पूरी कथा दर्शक या पाठक के सम्मुख रखनी है तो अनेक घट-नाएं सूच्य विषय बनकर ही आएंगी।

पात्रों की संख्या भी मैंने जितनी कम रख सकना सम्भव था रखी है। अंग्रेज़ों को मैं रंगमंच पर लाया ही नहीं हूं। मेरी कथा तो मुगल राजमहल में चल रही है, वहां केवल दो अंग्रेज़ आते हैं, कुछ ही क्षणों के लिए। अंग्रेज़ी छावनी में क्या होता रहा, कौन सेनापति आया, कितने सेनापति मारे गए, कितनी लड़ाइयां वे हारे, कितनी जीते, किन कठि-नाइयों में से वे गुज़रे, इन सब बातों का चित्रण मैंने नहीं किया है, न ऐसा करना मेरा उद्देश्य था। मैं तो केवल भारतीय पक्ष को उपस्थित करना चाहता था—भारतीयों का पराक्रम, उनकी दुर्बलता, उनका देश-प्रेम और उनका विश्वासघात, उनकी नैतिकता और उनकी चरित्रहीनता, उनका पारस्परिक प्रेम और उनका पारस्परिक द्वेष, उनकी उदारता और उनकी संकीर्णता आदि बातों को ही मैंने बताया है, ताकि इनके

प्रकाश में आज की पीढ़ी अपना मार्ग बनाए।

नाटक के पात्र मुसलमान हैं। मुसलमान पात्रों से उर्दू बुलवाने की हिन्दी लेखकों की परम्परा कभी थी और पहले मैंने भी इसका पालन किया था—लेकिन कई वर्षों से मैं इस परम्परा को त्याग चुका हूं। बंगला में, मराठी या गुजराती में, तमिल या तेलगू में क्या मुस्लिम पात्रों से उर्दू बुलवाई जाएगी ? नहीं। तब हिन्दी के लिए ही यह बन्धन क्यों हो ? वैसे नाटक खेलते समय निर्देशक चाहे तो भाषा-सम्बन्धी परिवर्तन कर सकता है।

नाटक यदि रंगमंच पर खेलने के लिए है तो उसके कथोपकथन संक्षिप्त हों ऐसा ही रंगमंच के ज्ञानी कहते हैं किन्तु नाटक में ऐसे स्थल भी आते हैं जहां विस्तार आवश्यक हो जाता है। शेक्सपियर, बर्नार्ड शा, इब्सन, डी० एल० राय, प्रसाद आदि विस्तृत कथोपकथनों से बच न सके। मेरे कुछ कथोपकथन छोटे भी होते हैं तो कुछ बड़े भी। फिर बात यह है कि मेरे जैसे लेखक के नाटक पाठ्य पुस्तक भी बनते हैं। हमारे अध्यापकों को शिकायत होती है कि छोटे-छोटे कथोपकथनों में ऐसा क्या हो सकता है जिसे शिक्षक पढ़ाए और किस प्रकार के प्रश्न उनपर करे ? पैसा देनेवाला रंगमंच तो हमारे पास है नहीं और लेखक को रोटी तो खानी है; तब अध्यापकों की मांग भी पूरी करनी पड़ेगी। इसे लोग कला के प्रति बेईमानी कह सकते हैं, लेकिन कला के प्रति पूरा ईमानदार रहने के लिए या तो तुलसीदास की तरह घर-बार छोड़ना पड़ेगा या उसके बाप-दादे कुछ जायदाद छोड़ गए हों तो उसपर निर्भर रहना पड़ेगा। मैं तो इतना ही निवेदन कर सकता हूं कि रंगमंच पर नाटक को लाते समय निर्देशक को थोड़ा श्रम करके कथोपकथनों को छोटा कर लेना चाहिए।

अन्त में मैं अपने प्रेमियों से आशा करता हूं कि वे मेरे अन्य नाटकों की भांति इसे भी पसन्द करेंगे।

—हरिकृष्ण 'प्रेमी'

पात्र-सूची

बहादुरशाह 'ज़फ़र'	... दिल्ली का अंतिम मुगल सम्राट
ज़ीनत महल	... बहादुरशाह 'ज़फ़र' की प्रिय बेगम
मिर्ज़ा मुगल **मिर्ज़ा कोयाश** **मिर्ज़ा अबूबकर** **मिर्ज़ा जवांवक्त**	... बहादुरशाह 'ज़फ़र' के शाहज़ादे
बख़्तखां	... १८५७ के स्वाधीनता-संग्राम का एक यशस्वी भारतीय सेनापति
हकीम एहसानुल्लाखां	... बहादुरशाह 'ज़फ़र' का वैद्य एवं दरबारी
मिर्ज़ा इलाहीबख्श	... एक मुगल रईस जिसकी पुत्री का विवाह सम्राट के एक पुत्र से हुआ था
फ्रेज़र	... अंग्रेज़ों द्वारा दिल्ली में नियुक्त रेज़ीडेंट
हडसन	... अंग्रेज़ों के गुप्तचर विभाग का अधिकारी

मुगल राजमहल की दासी, कुछ भारतीय सैनिक, दो-चार अंग्रेज़ सैनिक

पहला अंक

पहला दृश्य

[स्थान—दिल्ली के लाल किले में मुगल सम्राटों के राजमहल में भारत के अन्तिम मुगल सम्राट बहादुरशाह 'ज़फ़र' का विश्राम-कक्ष। समय —प्रभात के कुछ पश्चात्। कक्ष की पिछली, दाहिनी और बायीं दीवारें दिखाई देती हैं। सामने की तरफ दो स्तम्भ खड़े हैं। दायीं और बायीं दीवारों में आने-जाने के लिए एक-एक द्वार है। दोनों द्वारों पर पर्दे पड़े हुए हैं। छत नहीं दिखाई देती, जिससे जान पड़ता है कि छत बहुत ऊंचाई पर है। छत से लटकता हुआ फानूस दिखाई देता है। कक्ष की दाहिनी तरफ शयन करने के लिए पलंग बिछा हुआ है। कक्ष के शेष भाग में बहुमूल्य कालीन की बिछात है। यथास्थान मसनद रखे हुए हैं। दीवारों पर उपयुक्त स्थानों पर बाबर, हुमायूं, अकबर, जहांगीर, शाहजहां, औरंगज़ेब, दाराशिकोह आदि के चित्र टंगे हुए हैं। एक कोने में खूंटी पर ढाल और तलवार भी टंगी हुई दिखाई देती हैं। जब परदा उठता है तो सम्राट बहादुरशाह 'ज़फ़र' एक मसनद के पास बैठे हुए सामने रखी तिपाई पर एक कागज़ पर कविता लिखते नज़र आते हैं। कुछ दूर पर हुक्का रखा है जिसकी लेजम उनके पास तक पहुंची हुई है जिससे वे कभी-कभी कश ले लेते हैं। एक तरफ रत्नखचित तिपाई पर बिल्लौरी सुराही में लाल मदिरा है, उसीपर दो-तीन स्वर्णपात्र भी रखे हुए हैं। बहादुरशाह की आयु ८१ वर्ष की है। उनकी आंखें बड़ी-बड़ी हैं, जिनसे सज्जनता, शालीनता के साथ तेज भी अपनी आभा प्रस्फुटित कर रहा है। नाक नुकीली है, चेहरे पर सफेद दाढ़ी-मूंछें। सम्पूर्ण

व्यक्तित्व ऐसा है जिसके प्रति आदर का भाव जाग्रत् होता है। इस समय वे राजसी पोशाक में न होकर साधारण वेश में हैं लेकिन उनके गले से वक्ष पर आते हुए बहुमूल्य मोतियों और रत्नों के हार मुगल वैभव की याद दिला रहे हैं।]

बहादुरशाह 'ज़फ़र' : (कविता लिखते हुए गुनगुनाते हुए)

यह दुनिया है औघट घाटी,
पग न बहुत फैलाओ जी।
इतना ही फैलाओ जिससे
सुख से दुख ना पाओ जी।।

[ज़ीनत महल का प्रवेश। ज़ीनत महल की आयु ४५ वर्ष से कम नहीं है फिर भी उसके सौन्दर्य में ताज़गी है जिसे राजसी वस्त्राभरणों ने चार चांद लगा दिए हैं। गोल भरा हुआ चेहरा, बड़ी-बड़ी आकर्षक आंखें, कमान के जैसी भृकुटियां, सुडौल नुकीली नाक, पतले होंठ, सुराहीदार गर्दन, प्रत्येक अंग सुघर है।]

ज़ीनत महल : (कोर्निश करती हुई) ज़िल्ले इलाही भारत-सम्राट बहादुरशाह 'ज़फ़र' को ज़ीनत कोर्निश अदा करती है।

बहादुरशाह 'ज़फ़र' : (कलम को तिपाई पर रखते हुए) आओ बेगम ज़ीनत महल, बैठो।

[ज़ीनत महल बहादुरशाह 'ज़फ़र' के पास जाकर बैठती है।]

बहदुरशाह 'ज़फ़र' : हम तुमसे नाराज हैं, ज़ीनतमहल।

ज़ीनत महल : (बहादुरशाह 'ज़फ़र' की तरफ संकेत-दृष्टि से देखती हुई) क्या किसी शाहज़ादे ने मेरे विरुद्ध जहांपनाह के कान भरे हैं?

बहादुरशाह 'ज़फ़र' : तुम्हारे विरुद्ध कोई भी बात सुनने के लिए बहादुरशाह 'ज़फ़र' के कान बहरे हैं।

ज़ीनत महल : तब क्या बात है ?

बहादुरशाह 'ज़फ़र' : तुमने आज फिर दरबारी ढंग से हमें कोर्निश किया !

ज़ीनत महल : (हंस पड़ती है) मुझे तो डरा ही दिया था सम्राट ने। भारत-सम्राट को उसके सम्मान के अनुकूल ही कोर्निश किया जाता है।

बहादुरशाह 'ज़फ़र' : भारत-सम्राट ! इससे बड़ा परिहास हमारा और क्या हो सकता है ? यह शब्द हमारे कलेजे में तीर की तरह चुभता है। जब कभी हम अपने सर पर राजमुकुट रखकर शाही पोशाक में झरोखे में जाकर दिल्ली के नागरिकों को दर्शन देते हैं और जब नागरिक भारत-सम्राट बहादुरशाह 'ज़फ़र' का जयजयकार करते हैं तो हमारा जी करता है कि जमुना में डूबकर जान दे दें। सम्राट ! कौन है सम्राट ! कहां है साम्राज्य ? हमारे साम्राज्य के उपवन पर फिरंगी अंग्रेज़ों ने अधिकार जमा लिया है। इस शस्य-श्यामला भूमि के सम्पूर्ण वैभव को चरे जा रहे हैं ये विदेशी और हम हैं कि तलवार को खूंटी पर टांगकर कलम थामे बैठे हैं और अपने-आपको धोखा दे रहे हैं। लेकिन जाने दो ज़ीनत, जिस व्यथा का कोई उपचार नहीं उसकी चिंता करना भी व्यर्थ है। तुम अपने कमलों के समान कोमल करों से अंगूरी हाला ढालकर दो, हम तुमको अपना कलाम सुनावें।

[ज़ीनत महल शराब ढालकर बहादुरशाह 'ज़फ़र' को देती है।]

बहादुरशाह 'ज़फ़र' : (एक घूंट पीकर) ज़ीनत, तुम हमारी जवानी

हो। तुम हमारे सामने होती हो तो हमारी अभिलाषाएं जवान हो उठती हैं। और ऐसे समय हम कह उठते हैं—

'ज़फ़र' इस आलमे पीरी में तेरे वो इरादे हैं।
कि जिनमें थक के रह जाती जवानों की जवानी है।।

ज़ीनत महल : जहांपनाह, शायर तो सदाबहार फूल है जो कभी मुरझाता नहीं, जिसकी सुरभि समय की परिधियों में नहीं बंधती, न स्थान उसे बंदी बना सकता है। प्रकृति उसे जवान बनाती है और सदा जवान रखती है।

बहादुरशाह 'ज़फ़र' : साम्राज्य से हाथ धोकर हमने यह शायरी पाई है, लेकिन बेगम, हमारी कविता हमारे टूटे हुए दिल के चीत्कार के अतिरिक्त और है ही क्या! शायरी का कमाल तो मिलता है उस्ताद 'ज़ौक' के कलाम में, जैसे मोतियों का हार पिरो दिया हो। हमें खेद है, आज वे इस संसार में नहीं हैं। खुदा उनकी आत्मा को शांति दे। उनकी ही भांति उर्दू शायरी की शोभा मिलती है मिर्ज़ा गालिब की ग़ज़लों में, एक-एक शब्द ऐसा कि सुबह हरी घास पर शबनम चमक रही हो। सच कहता हूं ज़ीनत, अगर हमारे पास सम्राट अकबर, जहांगीर और शाहजहां की भांति दौलत होती तो हम इन्हें मालामाल कर देते।

ज़ीनत महल : जहांपनाह, समय ने हमारा वैभव छीन लिया है किंतु वंश-परम्परागत उदारता को कौन छीन सकता है? आप अपनी आधी रोटी में से भी आधी उर्दू भाषा के शायरों को देकर अपने स्नेह से उर्दू शायरी के चिराग को प्रका-

शित रख रहे हैं। सम्राट शाहजहां ने ताजमहल बनवाकर अपना नाम अमर कर दिया जिसके सौन्दर्य से संसार की आंखें चकित और मुग्ध होती रहेंगी लेकिन एक दिन आएगा जब समय के थपेड़े ताजमहल को मिट्टी में मिला देंगे क्योंकि प्रत्येक वस्तु की उम्र होती है, लेकिन उम्र जिन्हें बांध नहीं सकती—वे वस्तुएं हैं साहित्य और कला। अकबर के तानसेन को समय मार नहीं सकता और ज़फ़र, ज़ौक और गालिब अनंत काल तक अपने अनुपम सौंदर्य से संसार की शोभा बढ़ाते रहेंगे। मुगल राजवंश अन्तिम सांसें लेते हुए भी संसार को निहाल कर रहा है।

बहादुरशाह 'ज़फ़र' : मगल भारत में विजेता के रूप में आए थे, लेकिन भारत की मिट्टी ने उन्हें अपनी संतान बना लिया। हम अपने रक्त की अन्तिम बूंद भी मां के गौरव की वृद्धि करने के लिए समर्पित कर देंगे। खैर, जाने दो इन बातों को, हम कुछ नया लिख रहे थे, सुनोगी ?

ज़ीनत महल : फर्माइए जहांपनाह !

बहादुरशाह 'ज़फ़र' : कविता हिन्दी भाषा में है।

ज़ीनत महल : (साश्चर्य) हिन्दी भाषा में ?

बहादुरशाह 'ज़फ़र' : इसमें चौंकने की क्या बात है ? हिन्दी तो उर्दू की मां है। दोनों ही भाषाएं हमें प्यारी होनी चाहिएं, बल्कि भारत के प्रत्येक प्रदेश की भाषा हमें प्यारी होनी चाहिए। हमने पंजाबी में भी कविताएं लिखी हैं। किसी भाषा पर किसी वर्ग या सम्प्रदाय का अधिकार

नहीं होना चाहिए। सम्राट अकबर, खानखाना अब्दुर्रहीम और जिन सम्राट औरंगज़ेब ने हिन्दुओं और मुसलमानों में भ्रमवश भेद डालने का यत्न किया, आदि ने हिन्दी में कविताएं लिखी थीं। हम भी उन्हींके पथ का अनुगमन कर रहे हैं।

ज़ीनत महल : मैं सोचती हूं, काश सम्राट हिन्दू होते !

बहादुरशाह 'ज़फ़र' : हिन्दू ? (हंसता है) मुगल राजवंश में कौन ऐसा है जो मुसलमान होते हुए हिन्दू नहीं है ! हमारी मां हिन्दू थीं। सम्राट शाहजहां और सम्राट जहांगीर की माताएं हिन्दू थीं। हमारी रगों में हिन्दू रक्त भी उसी प्रकार प्रवाहित है, जिस प्रकार मुगल। फिर हिन्दुस्तान में जन्म लेने के कारण कम से कम हिन्दी तो हम हैं ही।

ज़ीनत महल : जहांपनाह ठीक कहते हैं—और हिन्दू और मुसलमान होने के पहले हम मनुष्य हैं। खैर, जाने दीजिए इन बातों को, अब अपना कलाम सुनाइए।

बहादुरशाह 'ज़फ़र' : सुनो, कहा है :

यह दुनिया है औघट घाटी,
पग न बहुत फैलाओ जी।
इतना ही फैलाओ जिससे,
सुख से दुख ना पाओ जी॥

ज़ीनत महल : वाह, वाह, भाषा ही नहीं रंग भी नया है।

बहादुरशाह 'ज़फ़र' : सुनो बेगम, यह मुशायरा नहीं कि दाद न देने से शायर अपमान अनुभव करेगा।

इस दुनिया के जितने धंधे
सगरे गोरख धंधे हैं।
उनके फंदे जा न पड़ो तुम
उनमें न मन उलझाओ जी।

[ज़ीनत महल के होंठों पर मुस्कान खेल उठती है।]

बहादुरशाह 'ज़फ़र' : क्या अर्थ है तुम्हारी इस मुस्कान का ? कविता जंची नहीं ?

ज़ीनत महल : यह बात नहीं ! मुझे ऐसा जान पड़ा कि आपकी वाणी में महात्मा कबीर की आत्मा आ बैठी हो।

बहादुरशाह 'ज़फ़र' : कहां महात्मा कबीर और कहां अकिंचन 'ज़फ़र'। उन्होंने हिन्दू और मुसलमान दोनों को अपने भेद-भाव भुलाकर सच्चे मनुष्य बनने का उपदेश दिया है। कहते हैं :

भाई रे दुई जगदीश कहां ते आया ? कहु कौने बौराया ?
अल्लाह, राम, करीमा, केशव, हरि, हज़रत नाम धराया ॥
गहना एक कनक ते गहना, यामें भाव न दूजा।
कहन सुनन को दुई कर थापे, एक निमाज एक पूजा ॥
वही महादेव, वही महमद, ब्रह्मा, आदम कहिए।
को हिन्दू को तुरक कहावे एक ज़मीं पर रहिए ॥

इसके आगे कुछ याद नहीं आ रहा। स्मरण-शक्ति भी तो बूढ़ी हो गई है।

ज़ीनत महल : (अपने हाथ से शराब का प्याला बहादुरशाह 'ज़फर' के मुंह से लगाती हुई) जवानी के जाम पीजिए, स्मरण-शक्ति भी जवान होगी।

बहादुरशाह 'ज़फ़र' : (शराब का घूंट पीकर) हम अभी बहुत ऊंचे

आकाश में उड़ रहे थे, तुम फिर हमें धरती पर ले आईं।

ज़ीनत महल : लेकिन जहांपनाह, कबीर की जो वाणी आप सुना रहे थे, वह भी तो किसी दूसरे संसार की बात नहीं थी। उन्होंने भी तो कहा है—को हिन्दू को तुरक कहावे, एक ज़मीं पर रहिए। प्रत्येक धर्म वाले भाई-भाई की तरह रहें ज़मीन पर ही। मनुष्य आकाश में उड़ने का यत्न करके न धरती का रहता है न आकाश का। आकाश तो आकाश है—केवल शून्य। वहां किसीको आधार मिल ही कैसे सकता है ? इसलिए कहती हूं—प्यार का प्याला पिओ और प्रसन्न रहो।

बहादुरशाह 'ज़फ़र' : हम कभी-कभी होश में आने का यत्न करते हैं, ज़ीनत, लेकिन तुम होश में नहीं आने देतीं। यह अच्छा ही है। होश में आने पर मस्तिष्क में भांति-भांति के विचार उठते हैं। मुगल साम्राज्य का सम्पूर्ण वैभवपूर्ण अतीत नज़रों के सामने घूम जाता है।

[बहादुरशाह 'ज़फर' उठकर खड़े होकर दीवार पर टंगे हुए मुगल सम्राटों के चित्रों की तरफ मुंह करते हैं। ज़ीनत महल भी खड़ी होती है।]

हमारे पूर्वज एक-एक करके हमारे सामने आ खड़े होते हैं। हमसे पूछते हैं, तुम जीवित हो या मर गए हो ? तुम्हारी रगों में तैमूरी रक्त शेष है या नहीं ? शराब के जाम हमने भी पिए हैं। साहित्य और कलाओं से हमें भी प्यार था—लेकिन हमने अपनी तलवार को जंग नहीं लगने दी। विपत्तियां और विनाश की आंधियां हमारे जीवन में भी

उठी हैं लेकिन क्या हमने कभी साहस छोड़ा है? एक तुम हो जो अंग्रेज़ों से १५ लाख वार्षिक पेंशन पाकर अपने-आपको धन्य समझते हो। भूल बैठे हो अपने सम्मान को—अपने कर्त्तव्य को। तुम जीवित नहीं हो—मुर्दा हो! ज़ीनत, हमारी ऐसी ज़िन्दगी को धिक्कार है। हमारे दिल में अब ज़िंदा रहने की चाह नहीं रही। ज़ीनत, तुम हमें शराब की जगह ज़हर पिलाओ।

ज़ीनत महल : जीवन से भाग जाने से आपके पूर्वज प्रसन्न नहीं होंगे जहांपनाह। अब भी आप अपने हाथ में तलवार पकड़ सकते हैं। आपकी एक हुंकार से यह महान भारत देश जाग सकता है।

[बहादुरशाह 'ज़फर' चित्रों की ओर से मुंह फेरकर दर्शकों की तरफ करता है। ज़ीनत भी उधर ही मुंह करती है।]

बहादुरशाह 'ज़फ़र' : उस दिन बिठूर से नाना साहब ने भी आकर हमसे कहा था, "यह महान भारत देश जाग सकता है। हम लोगों ने अपनी नादानी से अपना देश फिरंगियों के हाथ सौंप दिया। जिन अंग्रेज़ों को दया करके मुगल सम्राटों ने भारत में व्यापार करने की सुविधाएं दीं, उन्होंने धोखे और फरेब से हमारी ही तलवारों के बल पर हमारे ही पैसे से हमारा राज्य छीन लिया, देश की दौलत लूट ली और लूट रहे हैं, देश को गुलाम बना लिया। आज देश का बच्चा-बच्चा भारत से फिरंगियों को निकाल बाहर करने के लिए सिर पर कफन बांधकर निकलने को तैयार है। आपके नाम में आज भी ऐसा जादू है कि सारा देश आज

भी आपके हरे झंडे के नीचे खड़ा होकर रण-नाद से अंग्रेज़ों के प्राणों को कंपा दे सकता है।"

ज़ीनत महल : नाना साहब ने गलत नहीं कहा, जहांपनाह ! अंग्रेज़ों की दया पर हम निर्भर रहेंगे तो हमें वे १५ लाख रुपया सालाना जो खर्च के लिए देते हैं एक दिन वह भी नहीं देंगे। उन्हें हमारी सल्तनत ने आज से ९२ वर्ष पहले बंगाल-बिहार की दीवानी दी थी। वे हमारे नाम पर इस प्रदेश की मालगुज़ारी वसूल कर अपना खर्च और मुनाफा काटकर शेष रकम हमें भेजते रहें, इतना ही अधिकार उन्हें प्राप्त था, लेकिन धीरे-धीरे उन्होंने हमारा वह प्रदेश हड़प लिया। फिर तो उन्होंने रुहेलखंड और गंगा-जमना का दोआब भी ले लिया और अभी-अभी अवध पर भी हाथ सफा किया। वे जिसके दोस्त बने उसका ही सर्वस्व छीन लिया। मराठों को भी समाप्त किया, सिखों को भी। अब हमारे पास सल्तनत के नाम पर क्या शेष है ? यह दिल्ली का लालकिला भी अंग्रेज़ों की आंखों का कांटा बना हुआ है।

बहादुरशाह 'ज़फ़र' : और इसे प्राप्त करने के लिए वे हमारे शाहज़ादों को आपस में लड़ा रहे हैं। हम शाहज़ादा जवांवक्त को इसलिए नहीं वलीअहद बना रहे कि वह तुम्हारा बेटा है और तुमपर हमारा सारी बेगमात से अधिक प्यार है; बल्कि इसलिए कि उसके दिल में तैमूरी वंश का कुछ गर्व बाकी है। वह अंग्रेज़ों के हाथ की कठपुतली बनने को तैयार नहीं होगा।

ज़ीनत महल : उन्होंने पहले शाहज़ादा मिर्ज़ा फ़खरू को गांठा और उसे इस शर्त पर वलीअहद स्वीकार कर लिया कि बादशाह बनने पर वह लालकिला खाली कर देगा । लेकिन खुदा को यह स्वीकार न था; उसने मिर्ज़ा फ़खरू को ही इस दुनिया से उठा लिया । इसके बाद अब अंग्रेजों ने मिर्ज़ा कोयाश पर जाल फैलाया है कि उन्हें वलीअहद बनाया जाएगा । अंग्रेज़ों की शर्तें हैं कि जहांपनाह की मृत्यु पर लालकिला खाली कर दिया जाए, भावी मुगल बादशाहों की पदवी बादशाह के स्थान पर शाहज़ादा हो और वजीफा बजाय पन्द्रह लाख साल के कुल एक लाख अस्सी हजार रुपया वार्षिक हो ।

बहादुरशाह 'ज़फ़र' : तभी तो हमने कहा था :

ऐ 'ज़फ़र' अब है तुझी तक इन्तज़ामे सल्तनत
बाद तेरे न वलीअहदी न नामे सल्तनत ।।

हिंदुस्तान-भर का सारा खज़ाना एक दिन जिस राजवंश का था, जिसकी राजसभा में हिंदुस्तान में व्यापार करने की अनुमति पाने के लिए अंग्रेज़ प्रार्थना-पत्र लिए हाथ जोड़े खड़े रहते थे वह खानदान १५०००) महीने में अपना खर्च चलाए यह अंग्रेज़ों का न्याय है । कौन होते हैं वे हमें वज़ीफा देने वाले ? भारत के सम्राट हम हैं । अंग्रेज़ नहीं । हमारे राजसिंहासन पर बैठने पर अंग्रेज़ों ने भी हमें नज़रें भेजी थीं । अंग्रेज़ हमेशा अपने-आपको हमारे फिदवी लिखते रहे । हमारे दरबार में नियमपूर्वक कोर्निश अदा करते रहे । ईस्ट इण्डिया कम्पनी के सिक्कों पर दिल्ली-

सम्राट का नाम खुदा रहता, अंग्रेज़ गवर्नर जनरल की मोहर में दिल्ली के बादशाह का 'फ़िदविए खास' शब्द खुदे रहते हैं। अब उनका दिल बेईमान हो गया है। आज उनके हाथ में शक्ति आ गई है। अब वे नज़रें पेश करने और कोर्निश अदा करने में अपना अपमान अनुभव करने लगे हैं। और हमारे शाहज़ादे हैं कि इन्हीं धोखेबाज़ और बेईमान अंग्रेज़ों के संकेतों पर नाच रहे हैं। यह सब देख-देखकर हमारा दिल विदीर्ण हो रहा है। ये हमारे बेटे नहीं शत्रु हैं।

[शाहज़ादा मिर्ज़ा कोयाश का प्रवेश। उसकी आयु पैंतीस वर्ष के लगभग है। सुन्दर और भव्य व्यक्तित्व है। मुगल शाहजादे के उपयुक्त पोशाक में वह है।]

मिर्ज़ा कोयाश : जहांपनाह को मिर्ज़ा कोयाश कोर्निश अदा करता है।

बहादुरशाह : कोर्निश अदा करते हो। यह पाखंड किसलिए? यह लो हम तुमको तलवार देते हैं। (खूंटी से उतारकर तलवार मिर्ज़ा कोयाश की ओर बढ़ाते हुए) पकड़ो इसे। खून करो हमारा! बादशाह औरंगज़ेब ने अपने भाइयों का वध किया, अपने अब्बा को तख्त से उतारकर बंदी बनाकर रखा—और भी हमारे वंश में बहुत-से व्यक्ति उत्पन्न हुए अपने बाप से बगावत करने वाले, लेकिन उसका सर काटने का गौरव तुम प्राप्त करो। उसके बाद अंग्रेज़ों की जूतियां चाटो।

मिर्ज़ा कोयाश : क्षमा कीजिए, जहांपनाह! कोयाश इतना नीच

नहीं है। मुझसे भूल हुई कि मैं अंग्रेज़ों के चकमे में आ गया। मैंने बाहर खड़े होकर आपकी बातें सुन ली हैं। मैं अपनी करनी पर पछताता हूं। अपने थोड़े-से सुख के लिए मैं तैमूरी वंश के सम्मान को धूल में मिलाने को प्रस्तुत हो रहा था; उस वंश को जिसमें बाबर जैसे शेर-दिल सम्राट अकबर जैसे उदार और हिमालय के जैसे उच्च हृदय वाले शाहजहां और सच्चे अर्थों में मनुष्य दाराशिकोह जैसे व्यक्ति पैदा हुए। मैं खुदा की कसम खाकर कहता हूं कि अब मैं अंग्रेज़ों से वास्ता नहीं रखूंगा। अगर आपको मुझपर भरोसा नहीं तो आप मेरा सर कलम कर दीजिए।

[मिर्ज़ा कोयाश अपना सर बहादुरशाह 'ज़फ़र के चरणों में झुकाता है।]

बहादुरशाह : (मिर्ज़ा कोयाश को उठाकर अपने कलेजे से लगाते हुए) शाबास, हम तुमसे खुश हुए। याद रखो, तुम उस तैमूरी खानदान में जन्मे हो जिसमें सारी सम्पत्ति पुत्रियों को और पुत्रों को केवल पिता की तलवार मिलने का नियम है। बेटे, यह तलवार ही हमारी सबसे बड़ी सम्पत्ति है। भारत में मुगल साम्राज्य की नींव रखने वाले सम्राट बाबर के पास क्या था, जब उन्हें अपना वतन समरकंद छोड़ना पड़ा—केवल अपनी तलवार। साम्राज्य बनते हैं। बिगड़ते हैं; लेकिन वंश के यश को कलंक नहीं लगने देना हमारा प्रथम कर्तव्य है।

ज़ीनत महल : कुर्बान जाऊं जहांपनाह की सादगी पर। एक मीठी बात करके कोई भी ठग ले सकता है आपको।

बहादुरशाह : तुम कहना क्या चाहती हो बेगम ! स्पष्ट करो।

ज़ीनत महल : मैं कहती हूं मिर्ज़ा कोयाश ने जो कहा वह सब धोखा है, झूठ है, फरेब है। अंग्रेज़ों का जाल है। उन्होंने शाहज़ादे को परामर्श दिया है कि मीठो-मीठी बातें बनाकर आपका विश्वास जीत ले और बाद में आपके, मेरे और शाहज़ादा जवांबक्त के कलेजे में छुरी भोंककर या ज़हर देकर अपने लिए रास्ता साफ कर ले अंग्रेज ऐसे खेल भारत में अनेक स्थानों पर खेल चुके हैं।

मिर्ज़ा कोयाश : अह : ह : ! कितनी सुन्दर बात कही है। फूल बरसते हैं आपकी ज़बान से। एक बात याद रखिए जहांपनाह की चहेती बेगम, कि धोखे से कलेजे में छुरी भोंकना या ज़हर देना कोयाश नहीं जानता। आपकी भांति वह ओछे अस्त्रों का प्रयोग नहीं करेगा।

बहादुरशाह : (क्रोध में) कोयाश ! तुम हमारे सामने मलिकाए-हिंदुस्तान का अपमान करके हमारा ही अपमान कर रहे हो। जानते हो इसका दंड क्या होगा ?

मिर्ज़ा कोयाश : जहांपनाह, सर कलम कीजिए इस अपराधी पुत्र का। मुंह से उफ भी निकले तो समझ लीजिए मेरी रगों में तैमूरी रक्त नहीं है, लेकिन सत्य के सूर्य को आप प्रकट होने से नहीं रोक सकते। मैं स्पष्ट कहता हूं कि मिर्ज़ा जवांबक्त के रास्ते का रोड़ा दूर करने के लिए इन्होंने मिर्जा फ़खरू को ज़हर देकर मार डाला है।

ज़ीनत महल : (क्रोध से आंखें लाल करके) मिर्ज़ा कोयाश, तुम्हारा यह दुस्साहस !

मिर्ज़ा कोयाश : जिंदगी में मृत्यु दो बार नहीं आती है, मलिकाए-हिंदुस्तान ! कोयाश किसी भी क्षण जान देने को प्रस्तुत है। शाहंशाह आपकी मुट्ठी में हैं। आज्ञा दीजिए उन्हें कि वे मुझे शूली पर चढ़ा दें, फांसी लगवा दें, जिंदा दीवार मैं चुनवा दें, लेकिन अन्तिम सांस तक मैं कहूंगा कि आपके खूबसूरत हाथ मिर्ज़ा फ़खरू के रक्त से रंगे हुए हैं।

बहादुरशाह : मिर्जा फ़खरू अंग्रेजों से सांठ-गांठ कर रहे थे।

मिर्ज़ा कोयाश : तो उन्हें आप फांसी लगवा देते। एक देशद्रोही, वंशद्रोही और राजद्रोही को आप खुलेआम मृत्यु दंड देते, न्याय की यही मांग थी । बेचारे को ज़हर क्यों दिया गया ? वे आपकी ही भांति सरलहृदय शायर थे । वे अंग्रेज़ों से साठ-गांठ नहीं कर रहे थे; बल्कि अंग्रेज़ उनसे सांठ-गांठ कर रहे थे। वे फंस गए फिरंगी के जाल में। और क्यों नहीं फंसते जब तक एक सौतेली मां उन्हें उनके स्वत्व से वंचित करने पर कटिबद्ध थी । जाल तो उन्होंने मुझपर भी डाला है। बाप और बेटे में युद्ध कराकर वे लाल-किले को हस्तगत कर लेना चाहते हैं और मुगल शक्ति का अंतिम प्रतीक हरा झंडा किले पर से उतार फेंकना चाहते हैं क्योंकि जानते हैं कि जब तक यह फहरा रहा है, भारत किसी भी दिन इसके नीचे एकत्रित होकर अंग्रेज़ों को भारत से बाहर खदेड़ देने का यत्न कर सकता है । अंग्रेज़ अपनी शर्तें सभी शाहज़ादों के सम्मुख रख रहे हैं । औरों की मैं नहीं जानता, केवल इतना कह सकता हूं कि कोयाश में ज़माने-भर के दुर्गुण होते हुए भी थोड़ी हया शेष है । वह

अंग्रेजों की दी हुई रोटियां नहीं खाएगा।

बहादुरशाह : हम मान लेते हैं कि तुम नेकदिल और वीर हो, मुगल राजवंश के सम्मान के लिए तुम प्राण दे सकते हो; लेकिन तुम मलिका पर जो आरोप लगा रहे हो वह मिथ्या है। मैं कहता हूं कि अंग्रेज़ों ने ही यह ज़हर तुम्हारे हृदय में भरा है। वे तो सभी शहज़ादों को समान रूप से प्यार करती हैं।

[मिर्ज़ा कोयाश अट्टहास करता है।]

मिर्ज़ा कोयाश : प्यार करती है यह ज़हरीली नागिन? कितना खूबसूरत धोखा है! यह प्यार करना ये क्या जानें जिन्होंने अपने रूप और यौवन को बेच दिया है वैभव और प्रभुता पाने के लिए। जब जहांपनाह जवानी की सीढ़ियां पार कर चुके थे और ये उनपर पांव ही रख रही थीं तब इन्होंने आपसे विवाह किया था। क्या वह प्यार था? नहीं, वह था स्वार्थ, लोभ, अधिकार-लिप्सा। एक सौदा। जवानी के सारे अरमानों का खून करके ये आपकी इसलिए बनीं कि अपने सौन्दर्य की अफीम पिलाकर आपको मुट्ठी में कर मुगल सत्ता के अवशेष वैभव की स्वामिनी बनें और आपके पश्चात् अपने बेटे के मस्तक पर राजमुकुट रखकर सुख भोगें। इन्हें आपसे प्यार नहीं है—प्यार है अपने-आपसे।

बहादुरशाह : तुम मूर्ख हो, कोयाश! तुम नारी की सेवा को नहीं जानते।

मिर्ज़ा कोयाश : निश्चय ही कोयाश मूर्ख है, जहांपनाह की भांति

कल्पना के संसार में नहीं रहता। वह तो इतना ही जानता है कि चंद चांदी के सिक्के फेंककर वह नारी की सेवा पा सकता है; लेकिन यह सेवा एक व्यापार है जहांपनाह, प्यार नहीं। बेचारे बादशाह जहांगीर भी समझते थे कि नूर-जहां हमें प्यार करती है। यदि वह प्यार करती होती तो क्या चार वर्षों तक शेर अफगन की स्मृति को कलेजे में पाले हुए सम्राट के आग्रहों को टालती रहती ? चार वर्ष बाद उसने उनसे विवाह किया, प्यार करने के लिए नहीं, बदला लेने के लिए। अपना ज़हरीला प्यार पिलाकर स्वयं साम्राज्य की स्वामिनी बनने के लिए। जहांपनाह, इतिहास अपने-आपको दोहराता है।

बहादुरशाह : कोयाश, बंद करो यह अनर्गल प्रलाप ! हमने तुम्हें अभी नेकदिल और वीर कहा, यह भी शायद हमारी भूल है। मलिका संभवत: ठीक ही कहती हैं कि तुम अंग्रेज़ों से मिले हुए हो और आज भी उन्हींकी शह पाकर इतना बोलने का तुम्हें साहस हुआ। ताज के सम्मान को तुम भूल सकते हो, क्योंकि आज मुगलों के राजमुकुट में तेज नहीं है; लेकिन अफसोस इस बात का है कि तुम पिता और पुत्र के सम्बन्ध को भी भूल गए।

मिर्ज़ा कोयाश : जहांपनाह, मुझे खेद है कि आपके दिल पर मेरे शब्दों ने चोट पहुंचाई है, लेकिन मेरा दिल भी घायल है। वह चीख उठता है। भाई-भाई के युद्ध का बीज सर्व-प्रथम मुगल राजवंश में एक स्त्री ने ही बोया था। उसका नाम था नूरजहां। वह जीवन-भर जहांगीर से अधिक

प्यार करती रही शेर अफगन को और इसी कारण शेर अफगन की पुत्री लाड़ली बेगम के पति शहरयार को जहांगीर के बाद दिल्ली के राजसिंहासन पर बैठाना चाहती थी, उनकी दूसरी बेगमों के पुत्रों में से किसीको नहीं। यहीं से वास्तव में मुगल राजवंश में भाइयों का संघर्ष प्रारम्भ हुआ। उसका भयानकतम रूप प्रकट किया आलमगीर औरंगज़ेब ने। यह परम्परा अभी तक चालू है यद्यपि आज साम्राज्य की छाया ही शेष रह गई है।

बहादुरशाह : किन्तु क्या इस छाया को फिर सत्य में परिणत नहीं किया जा सकता है?

मिर्ज़ा कोयाश : कैसे किया जा सकता है, जहांपनाह! सोचता ही कौन है मुगल साम्राज्य के पूर्वगौरव को प्राप्त करने के लिए? हमारा सर्वस्व छीनकर अंग्रेज़ आज हमारे आगे रोटी के टुकड़े डालते हैं और इन रोटी के टुकड़ों के लिए भी हम परस्पर छीना-झपटी कर रहे हैं। आपकी निराशा ने आपको स्त्री के चरणों पर डाल दिया है। जहांपनाह, स्त्री पुरुष की सबसे बड़ी दुर्बलता है। राजा जब इस दुर्बलता का शिकार होता है तो सारा देश उसका दुष्परिणाम भुगतता है। किन्तु इसके लिए केवल आपको भी क्यों दोष दूं? यह तो वंश-परम्परागत रोग है हमारा। शराब और स्त्री इन दोनों वस्तुओं ने हमसे हमारी बुद्धि छीन ली है, पुरुषार्थ छीन लिया है। शराब इस्लाम में वर्जित है; लेकिन औरंगज़ेब को छोड़कर कौन-सा मुगल सम्राट या शाहज़ादा हुआ जिसने इसे मुंह नहीं लगाया? और औरत

को किसने अपने सर नहीं चढ़ाया। जहांगीर ने शराब के प्यालों के बदले अपनी सल्तनत औरत को सौंप दी, चाहे वह खूब हो या खराब हो। सम्राट जहांदारशाह ने मुगलों के पवित्र सिंहासन पर अपने साथ वेश्या लालकुमारी को बैठाया, करोड़ों रुपये उसपर नज़र कर दिए और उसके अयोग्य और अनाचारी नातेदारों के हाथों में शासन छोड़ दिया। उस मुगल साम्राज्य को समाप्त होना ही था, न होना ही अस्वाभाविक था।

[नेपथ्य से आवाजें आती हैं—'भारत सम्राट बहादुरशाह 'ज़फर' की जय !']

बहादुरशाह : यह कैसा कोलाहल है।

[हकीम एहसानुल्लाखां और दिल्ली के अंग्रेज़ रेज़ीडेंट फ्रेज़र का प्रवेश। हकीम एहसानुल्लाखां दरबारी तरीके से कोर्निश अदा करता है, लेकिन रेज़ीडेंट फ्रेज़र किसी शिष्टाचार का पालन नहीं करता। ज़ीनत महल प्रस्थान कर जाती है।

हकीम एहसानुल्लाखां : जहांपनाह को हकीम एहसानुल्लाखां कोर्निश अदा करता है।

बहादुरशाह : आइए हकीम साहब, बाहर यह कोलाहल कैसा है ?

हकीम एहसानुल्लाखां : यह तो मुझसे अधिक अच्छी तरह रेज़ीडेंट मिस्टर फ्रेजर बता सकेंगे।

रेज़ीडेण्ट फ्रेज़र : बात यह है कि मेरठ में हमारी जो भारतीय सेना थी, वह विद्रोह करके यहां आई है। चींटियों को पर लगे हैं।

बहादुरशाह : सेना विद्रोह करके आई है ? यह कैसे हो सकता है ? किसने कहा उनसे विद्रोह करने के लिए ? सारा भारत शांत है, दिल्ली का लालकिला शांत है, गंगा-जमना की लहरें शांत हैं, हिमालय शांत है, शांत हैं हिन्दमहासागर की लहरें लेकिन मेरठ में क्यों आग भड़की ? ये लोग चाहते क्या हैं हमसे ?

हकीम एहसानुल्लाखां : सम्राट के दर्शन।

रेज़ीडेण्ट फ्रेज़र : वे चाहते हैं इस विद्रोह में आप उनका साथ दें। मूर्ख हैं। बादशाह सलामत अंग्रेज़ों की मित्रता का मूल्य समझते हैं। भारत में एक राजा दूसरे राजा से लड़ते थे और हमेशा लड़ाइयां चलने से न तो खेती हो सकती थी, न व्यापार। अंग्रेज़ों ने आकर भारत की अशांति को दूर किया। अब हर आदमी सुख की नींद सोता है। बादशाह सलामत भी चैन से जीवन बिताते हैं। शासन का उत्तर-दायित्व अब उनपर नहीं। क्या आप सुख और सुरक्षा को छोड़कर इन विद्रोहियों से मिलना चाहेंगे ?

बहादुरशाह : निश्चय ही। वे हमारी प्रजा हैं। हम उनकी बात सुनेंगे। मिर्ज़ा कोयाश, उनके दो प्रतिनिधियों को हमारे हुजूर में पेश करो।

रेज़ीडेण्ट फ्रेज़र : वे आपकी प्रजा हैं, और वेतन हमसे पाते हैं। वे हमारे नौकर हैं।

[मिर्ज़ा कोयाश का प्रस्थान]

बहादुरशाह : लेकिन आप कौन हैं ? आप लोगों ने मुगल सम्राट के दीवान की हैसियत से भारत के कुछ प्रदेश का प्रबंध

प्रारम्भ किया था। दीवान सम्राट नहीं हैं। भारत के सम्राट हम हैं। जब यह लालकिला भी हमारे पास नहीं रहेगा, तब भी भारत के सम्राट हम होंगे, जब हम दफना दिए जाएंगे तब भी भारत के सम्राट हम होंगे।

हकीम एहसानुल्लाखां : जहांपनाह, समय को देखकर कार्य कीजिए। विद्रोहियों को मुंह लगाना ठीक न होगा।

रेज़ीडेण्ट फ्रेज़र : इन लोगों ने बहुत जुल्म किया है। मेरठ में अनेक अंग्रेज़-अधिकारियों को मार डाला है, उनके बंगलों में आग लगा दी, जेलखाना तोड़कर सारे बंदियों को मुक्त कर दिया जो शहर में उपद्रव करते घूम रहे हैं। मेरठ से दो सौ सैनिक दिल्ली आ पहुंचे हैं। यहां भी उन्होंने अंग्रेज़ अधिकारी टाड और रिप्ले को मौत के घाट उतार दिया है। दरियागंज में अंग्रेजों के जितने बंगले थे उन सबमें आग लगा दी है। ये लोग शैतान का रूप धारण कर मौत और विध्वंस के खेल खेल रहे हैं। मेरी नम्र सम्मति यही है कि जहांपनाह इन्हें दर्शन न दें।

बहादुरशाह : हकीम जी, आप हमारी नाड़ी देखिए; लेकिन देश की नाड़ी सम्राट को ही देखने दीजिए। एक सुदीर्घ अवधि से हम लोगों ने अपने देश की नाड़ी अंग्रेज़ों के हाथ में दे दी। इन्होंने हमारे रोग तो बढ़ा दिए लेकिन साथ ही अफीम की गोलियां खिलाकर हमें गहरी नींद में सुला दिया। भारत ने करवट ली, और जानते हो भारत एक बड़ा अजगर है। उसकी एक साधारण करवट भी आंधी उठाने वाली होती है। क्या सोचते हो रेज़ीडेंट मिस्टर

फ्रेज़र ?

रेज़ीडेण्ट फ्रेज़र : जहांपनाह, जान पड़ता है आज आप ज्यादा पी गए हैं।

बहादुरशाह : नहीं फ्रेज़र, अपमान के घूंट पीते-पीते हमारी रगों का खून ठंडा हो गया था। आज उसमें थोड़ी गरमी आई है। मान लो, फ्रेज़र, तुम इंग्लैंड के बादशाह होते, कई पीढ़ियों से तुम्हारे वंश का राज चला आ रहा होता और हमारे देश के वासी व्यापारी बनकर जाते और तुम्हारे देश पर कब्ज़ा कर लेते और तुम्हें पेंशन देकर कहते अब तुम आराम करो, हम राज करेंगे, तब तुम्हारा मन क्या करने को कहता ? तब तुम हमारी तरह बात करते तो हम कहते तुमने ज़्यादा पी ली है।

रेज़ीडेण्ट फ्रेज़र : भारत और इंग्लैंड में बहुत अन्तर है, जहांपनाह ! इंग्लैंड अपना सब कुछ गंवा सकता है, लेकिन किसी विदेशी का शासन स्वीकार नहीं कर सकता।

बहादुरशाह : इस संसार में प्रत्येक प्राणी को स्वतन्त्र रहने का अधिकार है। जो अधिकार तुम अपने लिए स्वीकार करते हो वह भारतीयों के लिए क्यों नहीं ?

[मिर्ज़ा कोयाश के साथ मेरठ के विद्रोही सैनिकों के दो प्रतिनिधि प्रवेश करते हैं। दोनों सैनिक वेश में हैं और हाथों में भरी बदूकें लिए हुए हैं। दोनों सम्राट को सलामी देते हैं।]

बहादुरशाह : तुम लोग कौन हो, कहां से आए हो और किसके नौकर हो ?

एक प्रतिनिधि : जहांपनाह, हम लोग मेरठ-स्थित अंग्रेज़ों की

११ वें और २० वें नम्बर की भारतीय सेना के सैनिक हैं। हम लोगों ने अपने कंधों पर आज तक अंग्रेज़ी प्रभुता का जुआ लादे रखा। अपने ही कन्धों पर नहीं लादे रखा बल्कि सारे भारत को अंग्रेज़ों का दास बनाने में उनके सहायक हुए। अब हम इस पाप का प्रायश्चित्त करना चाहते हैं। हमारी ही तलवारों के बल पर भारत में अंग्रेज़ी सत्ता की स्थापना हुई है और हमारे ही बल पर वह कायम है। पेट की खातिर हमने अपने देश के प्रति विश्वासघात किया। ये अंग्रेज़ हमारे एहसानों का बदला हमारा धर्म नष्ट करके दे रहे हैं। हम अपने सर पर कफन बांधकर अंग्रेज़ों को भारत के बाहर निकालने का प्रयत्न ठानकर आए हैं।

[नेपथ्य में 'सम्राट बहादुरशाह की जय' के नारे चलते रहते हैं।]

दूसरा प्रतिनिधि : अब हम सम्राट के नौकर हैं। आप हमारे मस्तक पर अपना वरद हस्त रखें।

बहादुरशाह : सुनो भाई, हमें बादशाह कौन कहता है? हम तो फकीर हैं, एकांतवासी हैं। हमें कष्ट देने क्यों आए हो?

पहला प्रतिनिधि : जहांपनाह भारत के वास्तविक सम्राट हैं। प्रत्येक भारतवासी के हृदय में आप राज करते हैं। अब जब हम भारत की स्वाधीनता की लड़ाई लड़ने निकले हैं तब आपके अतिरिक्त और किसके पास जाएं?

बहादुरशाह : लेकिन प्यारे भाइयो, मुगल साम्राज्य के वैभव और शक्ति के दिन स्वप्न हो गए। अब हमारे पास खजाना नहीं जो तुम लोगों को हम वेतन दे सकें।

दूसरा प्रतिनिधि : हम अंग्रेज़ों का सारा खज़ाना, जो उन्होंने भारतीयों को लूटकर एकत्रित किया है, लाकर आपके चरणों में डाल देंगे।

बहादुरशाह : स्वाधीनता प्राप्त करने के लिए युद्ध करना प्रत्येक व्यक्ति का अधिकार है, इसलिए हम तुम लोगों की भावना का आदर करते हैं। ये अंग्रेज़ रेज़ीडेंट फ्रेज़र साहब तुम्हारे सामने खड़े हैं। हमें विश्वास है, ये भी इस बात को मानेंगे कि अगर भारतवासी अंग्रेज़ों की दासता से छुटकारा पाने का प्रयत्न करें तो उनको इसका अधिकार है। लेकिन हमारे भोले वीरो, हथेली पर सरसों नहीं जमा करती। तुम दो हज़ार सैनिक क्या अंग्रेज़ों की विशाल शक्ति से लोहा ले सकोगे ? अब हमारे पास न राज है, न रुपया। भारत में कौन-कौन हमारा साथ देगा इसका भी तो पता नहीं, तब बताओ हम किस बूते पर तुम लोगों को बलि के बकरे बना दें। हम कहते हैं, तुम लोग लौट जाओ। ये फ्रेज़र साहब हमारे कहने से बीच में पड़कर तुम्हें माफी दिला देंगे।

रेज़ीडेण्ट फ्रेज़र : हां, सम्राट ठीक कहते हैं। तुम लोगों ने व्यर्थ ही उपद्रव खड़ा किया है। हम अंग्रेज़ों ने तुम लोगों को रूमाल से पोंछकर तैयार किया है। हम तो भारत को सारी विपत्तियों से बचाने आए हैं। हमारा दावा है कि यदि रूस भारत की तरफ कदम बढ़ाएगा तो हम सीमा पर उसका सिर तोड़ देंगे, यदि ईरान अग्रसर हुआ तो उसे छठी का दूध याद करा देंगे। हमें पता नहीं था कि

हमारी ही सेना हमसे युद्ध करने को तैयार हो जाएगी। क्या इसीका नाम नमकहलाली है ?

पहला प्रतिनिधि : हम लोगों ने आज तक कम्पनी सरकार के नमक का हक अदा किया। जहां आप लोगों ने हमको झोंक दिया, हम आखें बन्द करके आग-पानी में कूद पड़े। कभी प्राणों का मोह नहीं किया।

दूसरा प्रतिनिधि : पलासी का युद्ध हमने जीता, टीपू सुल्तान को हमने परास्त किया, मराठों से हम लड़े। काबुल में हमने ही प्राण लुटाए, लाहौर हम ही ने जीता, नेपाल में हम ही जूझे। हमने अपने हाथ से अपना देश जीतकर आपको दे दिया। अब जब सारे देश पर आपका अधिकार हो गया तब आप हमारे धर्म और संस्कृति के पीछे पड़ गए !

पहला प्रतिनिधि : हमें ईसाई बनाना चाहा। हर पल्टन में ईसाई पादरी आकर हमारे हिंदू और मुस्लिम धर्म की निंदा और ईसाई धर्म की प्रशंसा करते हैं। इसका असर नहीं हुआ तो अब गऊ और सूअर की चर्बी लगे कारतूस हमारे मुंह से आप लोग कटवाकर हमारा धर्म छीनना चाहते हैं।

दूसरा प्रतिनिधि : हमको मर जाना स्वीकार है, किन्तु धर्म से बेधर्म होना नहीं। हम तो अब जान हथेली पर लेकर निकल पड़े हैं। अब अपने पूर्व-स्थान पर वापस जाने का मार्ग नहीं है क्योंकि वहां भी मृत्यु हमारी प्रतीक्षा कर रही है।

रेजीडेण्ट फ्रेज़र : नहीं, अगर तुम लोग लौट जाओ तो हम तुम्हें क्षमा प्रदान करा देंगे। हम बीच में पड़े हैं और ज़मानत

देते हैं तथा ईश्वर की शपथ लेकर कहते हैं कि तुमको माफी दिलवा देंगे ।

दूसरा प्रतिनिधि : क्षमा कीजिए, हम विषधर सांप का विश्वास कर सकते हैं, अंग्रेज़ का नहीं । हम भी थोड़ा इतिहास जानते हैं। पहली मित्रता आपने मुगल सम्राटों से की, जिनसे सनद लेकर आप भारत में व्यापार करने लगे और आज उनका सर्वस्व छीन लिया । लालकिले पर जो नाम-मात्र के लिए हरा झंडा फहरा रहा है यह भी आपकी आखों में गड़ रहा है ।

पहला प्रतिनिधि : जो षड्यंत्र और विश्वासघातों के खेल आपने बंगाल में खेले उन्हें कौन नहीं जानता ? मीर जाफ़र को नवाब सिराजुद्दौला से विश्वासघात करने के लिए फुसलाया, फिर उसे भी धोखा दिया और मीर कासिम को खड़ा किया, फिर उसे भी समाप्त किया । अन्त में बंगाल हड़प ही लिया ।

दूसरा प्रतिनिधि : मराठों से मिलकर टीपू सुलतान को खत्म किया और फिर मराठों की भी कमर तोड़ दी । बाजीराव द्वितीय के मित्र बनकर उसका राज्य छीन लिया । अवध की नवाबी के मित्र बने, उसे दिल्ली सम्राट से स्वतन्त्र किया और बाद में उससे करोड़ों रुपये छीने, बेगमात पर अत्याचार किए और अन्त में अवध का राज भी हड़प लिया । आप लोगों की किसी बात का भरोसा नहीं किया जा सकता । हमने आपको अच्छी तरह जान लिया है । अब आप हमारे सामने से हट जाइए । अंग्रेज़ की सूरत देखकर

ही हमारा खून खौलने लगता है।

[पहला प्रतिनिधि अपनी बन्दूक सम्हालने लगता है।]

बहादुरशाह :(फ्रेज़र से) आप चले जाइए इसीमें आपकी सुरक्षा है। हकीम साहब, आप भी जाइए।

[फ्रेज़र और हकीम एहसानुल्लाखां तेज़ी से प्रस्थान करते हैं। विद्रोहियों का प्रतिनिधि उधर बन्दूक का निशाना साधता है।]

बहादुरशाह : ठहरो ! हमारे सामने किसी को बन्दूक का निशाना न बनाओ ! अंग्रेज़ भी उसी प्रकार इंसान हैं जिस प्रकार भारतवासी ! हम उनसे युद्धभूमि में लोहा लेंगे लेकिन इस तरह इक्के-दुक्के अंग्रेज़ों का खून करना बहादुरी नहीं है।

[विद्रोही सैनिक बंदूक नीची कर लेता है]

दूसरा प्रतिनिधि : तो सम्राट हमारी प्रार्थना पर हमारा नेतृत्व करने को प्रस्तुत हैं ?

बहादुरशाह : हमारे मित्रो, भारत का सम्मान रखने के लिए, भारत को आज़ाद करने के लिए जो युद्ध लड़ा जाने-वाला है उससे मुगल सम्राट अलग कैसे रह सकता है ! भारत का प्रत्येक व्यक्ति हमारी संतान की भांति है, चाहे वह किसी भी धर्म का मानने वाला हो। एक दिन था जब हम मुगल भी विदेशी थे लेकिन अब तो हम भी भारत-वासी हैं। इसी मिट्‌टी में से पैदा हुए हैं, इसी में आखीरी नींद सो जानेवाले हैं। किसी एक मुगल सम्राट को छोड़-कर शेष सभी ने हिंदु और मुसलमानों में भेद नहीं किया। सारा देश एक सुशासन में संगठित होकर उन्नति करे,

यही उनकी इच्छा रही। प्रजा के प्रत्येक व्यक्ति को उन्नति करने का पूरा अवसर मिले, हर शख्स अपने-अपने धर्म को स्वतंत्रतापूर्वक पाले और देश का धन देश में रहे यही हम लोगों ने चाहा, तभी तो आज भी इस निश्शक्त बूढ़े सम्राट पर आप लोगों का प्रेम है। परिणाम क्या होगा यह तो खुदा ही जाने लेकिन बहादुरशाह 'ज़फ़र' का आशीर्वाद आप लोगों के साथ है। हमें खेद इसी बात का है कि तुम लोगों ने जल्दबाज़ी की। यह तो होने ही वाला था, लेकिन इस तरह नहीं जिस तरह तुम लोगों ने किया, लेकिन अब जब ज्वाला जल ही उठी तो इसे बुझाया भी तो नहीं जा सकता।

दोनों सैनिकों के प्रतिनिधि और मिर्ज़ा कोयाश : भारत-सम्राट बहादुरशाह ज़फ़र की जय !

बहादुरशाह : मेरे प्यारे दोस्तो! केवल जय बोलने से हमारा देश स्वतन्त्र नहीं हो जाएगा। हमारी पहली आवश्यकता है सारे भारत में अंग्रेज़ों से लोहा लेने की लहर उत्पन्न करना, दूसरी आवश्यकता है देश के प्रत्येक वर्ग को एकता के सूत्र में बांधने की, तीसरी है हमारे योद्धाओं में अनुशासन का होना। तुम लोगों को पहले हमारी बातों से निराशा हुई होगी, लेकिन सच बात यह है हम दिल से चाहते हैं, कि भारत-भूमि अंग्रेज़ों की दासता से छुटकारा पाए। अंग्रेज़ों से १५ लाख रुपया पेंशन पाकर शराब के जाम पी लेना, नाच देखना और गाने सुन लेना, शायरी करना

और मुशायरों से दिल बहला लेना, क्या इतना ही काम मुगल सम्राट का रह गया है ? नहीं, हम खून के घूंट पीकर चुप थे । भारत इस स्थिति में ही नहीं था कि अंग्रेज़ों से लोहा ले सके। हम पहले तैयारी पूरी कर लेना चाहते थे ।

मिर्ज़ा कोयाश : किंतु तैयारी की प्रतीक्षा में उम्र ही समाप्त हो जाएगी ।

बहादुरशाह : शाहज़ादे, तुम ठीक ही कहते हो । हम नदी के किनारे के पेड़ हैं ; न जाने कब मौत की लहर आए और हमें वहा ले जाए इसलिए अब हम प्रतीक्षा नहीं कर सकते लेकिन यह कहे बिना भी नहीं रह सकते कि मेरठ के भारतीय सैनिकों ने शीघ्रता करके हमारी योजना को धक्का पहुंचाया है। (सैनिकों के प्रतिनिधियों से) क्या तुम यह नहीं जानते थे कि ३१ मई से पहले अंग्रेज़ों के विरुद्ध शस्त्र नहीं उठाने हैं? आज है ११ मई । बीस दिन पहले ही तुम लोग उठ खड़े हुए ।

पहला प्रतिनिधि : किस तारीख को अंग्रेज़ों के विरुद्ध शस्त्र उठाने हैं यह तो हमें ज्ञात नहीं था, हमसे तो प्रतीक्षा करने के लिए कहा गया था । हम आदेश मिलने की राह देख रहे थे लेकिन क्या करें जहांपनाह, हमें अंग्रेज़ अफसरों ने समय से पूर्व शस्त्र उठाने के लिए बाध्य कर दिया । उन्होंने हमारे ९० साथियों को परेड के लिए बुलाकर उन्हें आज्ञा दी की नये चरबी लगे कारतूसों को दांतों से काटें। केवल ५ सैनिकों ने उनकी आज्ञा मानी, शेष ८५ बंदी बना

लिए गए। उन्हें दस-दस वर्ष के कठोर कारावास का दंड दिया गया। इससे सभी भारतीय सैनिकों का हृदय भीतर ही भीतर खौल उठा।

बहादुरशाह : फिर भी तुम्हें शांत रहना था। सैनिकों में स्वाभिमान और जोश का होना बहुत बुरी बात नहीं है लेकिन बड़ी से बड़ी उत्तेजना में भी अनुशासन में रहना सैनिक का प्रथम कर्तव्य है। हम चाहते थे, हम क्या जिन लोगों ने, देश के जिन बड़े आदमियों ने अंग्रेज़ों को भारत से निकाल बाहर करने का बीड़ा उठाया है, उन सबने निश्चय किया था कि भारत में ३१ मई को अंग्रेज़ों के विरुद्ध युद्ध की ज्वाला भड़काई जाए। उन्हें अपनी रक्षा करने का अवसर न दिया जाए। एक दिन में ही अंग्रेज़ों की सत्ता को भारत से उखाड़ फेंका जाए। हमारी कुछ तैयारियां अधूरी ही रह गई हैं। तुम स्वयं सोचो, अगर सारे भारत में एक साथ अंग्रेज़ों के विरुद्ध शस्त्र उठते तो परिणाम क्या होता। भारत में अंग्रेज़ सैनिकों और अफसरों की संख्या कुल २५०९ के लगभग है और उनके भारतीय सैनिक हैं ढाई लाख। हमारी एक हुंकार ही अंग्रेज़ों का दम मुंह को ले आती।

दूसरा प्रतिनिधि : हम मानते हैं कि हमसे भूल हो गई। हमारे साथियों पर अंग्रेज़ी हुकूमत ने जो अत्याचार किया उसे भी हमने सह लिया था लेकिन जब हम बाज़ार में सैर करने गए तो मेरठ की महिलाओं ने हमें ताने दिए। कहा—"तुम्हारे भाई धर्म के लिए जेल गए, और तुम यहां मस्ती

से घूम रहे हो। धिक्कार है तुम्हारी मर्दानगी को, धिक्कार है तुम्हारे जीवन को, कायरो! तुम चूड़ियां पहनकर घर बैठो। हमें दो अपनी तलवारें, हम फिरंगियों से लोहा लेंगी।" स्त्रियों के तानों ने हमारा धैर्य छीन लिया और हम अपने पुरुषार्थ का परिचय देने के लिए पागल हो उठे।

[हकीम एहसानुल्लाखां का प्रवेश]

हकीम एहसानुल्लाहखां : गजब हो गया, जहांपनाह ! विद्रोहियों ने रेज़ीडेंट फ्रेज़र को मार डाला।

[मिर्ज़ा कोयाश अट्टहास करता है]

हकीम एहसानुल्लाखां : हंसते हो शाहज़ादे शरीफ ! रेज़ीडेंट तो आपपर बहुत कृपा रखते थे। वे तुम्हें वलीअहद बनाने के लिए तैयार थे।

मिर्ज़ा कोयाश : हमपर कृपा रखते थे। यही तो भूल की मुगल राजवंश ने कि उसने अपनी बाहुओं पर भरोसा नहीं रखा और अंग्रेज़ों की कृपा को अपनी ढाल बनाना चाहा। कोयाश अब कब्र में जाकर वलीअहद बनेगा लेकिन कब्र में सुख की नींद सोने के पहले अनेक अंग्रेज़ों को मौत की गोद में सुलाकर जाएगा। सौ सुनार की तो एक लुहार की। बहुत सताया है अंग्रेज़ों ने हमें। कहते हैं सम्राट भारत के स्वामी नहीं, अंग्रेज़ों के नौकर हैं। सम्राट का उत्तराधिकारी कौन हो, इसकी व्यवस्था गवर्नर जनरल करेगा ? भारत का स्वाभिमान अभी तक सो रहा था और ये गीदड़ समझते थे हम शेर हैं।

हकीम एहसानुल्लाखां : यह मैं क्या सुन रहा हूं शाहज़ादा

हुज़ूर !

बहादुरशाह : यह तैमूरी राजवंश का रक्त बोल रहा है हकीम साहब !

हकीम एहसानुल्लाखां : तब क्या जहांपनाह भी···

बहादुरशाह : जी हां, हम भी भारत के सम्मान के लिए जान पर खेलने वालों के साथ हैं। (सैनिकों के प्रतिनिधियों से) चलो, हम अपने सैनिकों को दर्शन देकर आशीर्वाद के शब्द कहेंगे। हमें उनसे बहुत कुछ कहना है। हम उनके जोश का आदर करते हैं लेकिन उन्हें होश में लाना भी हमारा कर्त्तव्य है। वे पागल होकर हर किसी अंग्रेज़ और ईसाई का खून न करते फिरें। व्यवस्था में रहें। हम उनका प्रबंध करेंगे। चलो।

[सबका प्रस्थान]

[पट-परिवर्तन]

दूसरा दृश्य

[स्थान—वही प्रथम दृश्य वाला। समय—रात्रि का प्रथम प्रहर। कक्ष की सजावट लगभग प्रथम दृश्य के समान ही है, विशेषता केवल इतनी है कि रात्रि होने के कारण कक्ष शमाओं से सुप्रकाशित है। तिपाई पर शराब की सुराही और पात्र नहीं हैं। सम्राट बहादुरशाह कुछ बेचैनी से घूम रहे हैं। लिखने की संदूकनुमा छोटी मेज़ पर कागज़ और दवात-कलम रखे हैं। मिर्ज़ा मुगल और मिर्ज़ा कोयाश प्रवेश करते हैं।]

मिर्ज़ा मुगल : जहांपनाह को मिर्ज़ा मुगल कोर्निश अदा करता है।

मिर्ज़ा कोयाश : मिर्ज़ा कोयाश भी जहांपनाह को कोर्निश अदा करता है।

बहादुरशाह : आओ शाहज़ादो, हम तुम्हारी ही प्रतीक्षा कर रहे हैं। हम जानना चाहते हैं कि हमारे सैनिकों का क्या हाल है और दिल्ली नगर का वातावरण कैसा है ?

मिर्ज़ा मुगल : जहांपनाह, दिल्ली शहर से अंग्रेज़ों की प्रभुता का प्रत्येक चिह्न हमारी सेना ने मिटा डाला है।

मिर्ज़ा कोयाश : दिल्ली में अंग्रेज़ों की सैनिक छावनी में भारतीय जवानों की जो ३८, ५४ और ७४ नंबर की सेनाएं थीं, वे भी हमारे झंडे के नीचे आ गई हैं। इन सेनाओं में साढ़े तीन हज़ार जवान हैं और इस तरह कुल मिलाकर अब हमारे पास साढ़े पांच हज़ार सैनिक हैं। दिल्ली नगर अब पूरी तरह हमारे अधिकार में है।

बहादुरशाह : और एक दिन वह था जब सारा भारत हमारे अधिकार में था। हमारी सेना की संख्या लाखों तक पहुंचती थी। जब वह प्रस्थान करती तो घोड़ों की टापों से उठनेवाली धूलि से घटाएं घिर जाती थीं। हमारी तोपों के गर्जन से दिशाएं कांप उठती थीं। हमारी सेना का काफिला चलता था तो जान पड़ता था कि एक बड़ा नगर ही गतिमान है। आज हम इस बात पर फूले नहीं समाते कि हमारे पास पांच हज़ार सैनिक हैं। कितना बड़ा सौभाग्य है हमारा !

मिर्ज़ा कोयाश : और एक दिन वह भी था जब बादशाह समरकंद से अपनी अकेली जान लेकर भागे थे । आवश्यकता सेना की नहीं, अजेय जीवट की है। कई-कई दिनों उन्हें रोटी का टुकड़ा भी प्राप्त नहीं हुआ, अनेक रातें उन्होंने घोड़े की पीठ पर ही बिता दीं, गले-गले तक हिम में वे पैदल ही चले। साहसी वीर के पास सेनाएं स्वयं ही एकत्र हो जाती हैं। पर्वत उसके आगे मस्तक झुकाते और सागर उसके पांव धोते हैं।

बहादुरशाह : शाबास, कोयाश ! हम मुगल शाहज़ादों के मुंह से ऐसी ही वीरतापूर्ण वाणी सुनने के लिए तरसते रहे हैं। हमारे पूर्वजों की वीर गाथाएं हमारे रक्त में गरमी भरती हैं, नहीं तो क्या हम वृद्धावस्था में कलम छोड़कर तलवार पकड़ते ? लेकिन खेद तो इस बात का है कि अब हमारे हाथ कांपते हैं, इनमें तलवार चलाने की शक्ति नहीं। सेना अपने प्राणों पर खेलने के लिए तभी तत्पर होती है जब वह देखती है कि उनका प्रभु भी हरावल में आकर तलवार चला रहा है। शाहज़ादो, अब तुम्हीं हमारे हाथ-पांव हो। रणभूमि में तुम्हें ही हमारा प्रतिनिधित्व करना होगा। तुम्हारी दृढ़ता और वीरता से ही अंग्रेज़ों से लड़ा जा सकेगा। अगर तुम लोगों ने दुर्बलता दिखाई तो चाहे भारत-भर के योद्धा हमारे झंडे के नीचे आ जाएं, हम शत्रु पर विजय न पा सकेंगे और मुगल साम्राज्य का टिमटिमाता हुआ दीपक सदा के लिए बुझ जाएगा।

मिर्जा मुगल : जहांपनाह हमें आशीर्वाद दें कि हम आपकी आशाओं को पूर्ण कर सकें।

बहादुरशाह : हम खुदा से दुआ मागेंगे कि तुम लोग परीक्षा में खरे उतरो। परिस्थितियां कठिन हैं। अंग्रेज़ इब्राहीम लोधी नहीं है, जिससे एक ही युद्ध में दिल्ली के पठान साम्राज्य का अन्तिम निर्णय हो गया। हमें एक अनु-शासन बद्ध और चतुर कौम से युद्ध करना है। खुदा करे तुम लोग कुछ जादू कर दिखाओ लेकिन इतिहास दूसरी ही बात कहता है। हम तुम्हारे हृदय में निराशा नहीं भरना चाहते लेकिन सच बात यह है कि हमारा हृदय आशं-कित है।

मिर्जा कोयाश : किसलिए जहांपनाह ?

बहादुरशाह : इसलिए कि तुम लोग सिंह की सन्तान होकर भी पालतू कुत्ते की ज़िन्दगी बिताते रहे हो। मुगलों में संकटों से संग्राम करने का साहस, आंधियों और तूफानों में निर्भय पांव बढ़ाने का धैर्य औरंगजेब के बाद किसीमें पाया ही नहीं गया। इस लालकिले ने मुगल सम्मान और शक्ति का चरमोत्कर्ष भी देखा है और चरम पतन भी। इसी राजमहल में नादिरशाह ने सम्राट मोहम्मदशाह के सम्मुख मुगल बेगमात और शाहज़ादियों को साधारण नर्तकियों की भांति नचाकर अपनी बर्बरता का मनोरंजन किया है। महल की छतें उस समय टूटकर उसपर नहीं गिरीं। इन दीवारों की एक ईंट भी अपनी जगह से नहीं हिली।

मिर्ज़ा कोयाश : नादिरशाह की बात को जाने दीजिए, जहांपनाह, साधारण रुहेले सरदार गुलाम कादिर ने, जो हमारे टुकड़ों पर पला था, शाही हरम के साथ वही बर्ताव किया जो नादिरशाह ने किया था। इतना ही नहीं किया बल्कि सम्राट शाह आलम की आंखें निकलवा लीं और उन्हें बेंतों से पीटा। इन बातों को याद करके आंखों में खून उतर आता है।

बहादुरशाह : और फिर भी उस समय किसी मुगल का खून इसका बदला लेने के लिए नहीं उबला। न अवध के नवाब, न बंगाल के नवाब, न हैदराबाद के निज़ाम, जो न्यायतः मुगल साम्राज्य के सूबेदारों से अधिक कुछ नहीं हैं, अपने स्वामी के अपमान का बदला लेने के लिए व्याकुल हुए। जो मराठे सभी मुगलों के शत्रु थे उन्हींमें से एक महादजी सिंधिया ने सम्राट शाह आलम की रक्षा की और गुलाम कादिर को मौत के घाट उतारकर उसे अपनी करनी का फल चखाया। भारत के एक हिंदू के दिल में मुगल सम्राट के सम्मान पर आंच आने पर दर्द पैदा हो सकता है, लेकिन जिनका खून का रिश्ता है, धर्म का नाता है, वे निर्लज्ज बने बैठे रहे। तभी सम्राट शाह आलम ने महादजी सिंधिया के सम्बन्ध में कहा था—"महादजी सिंधिया फ़रज़ंदे जिगर बन्द अस्त। महादजी सिंधिया मेरा बेटा, मेरे जिगर का टुकड़ा है।"

मिर्ज़ा मुगल : प्रायः सभी मुगल सम्राटों ने हिन्दुओं को भी तो अपने जिगर का टुकड़ा समझा है।

बहादुरशाह : लेकिन ऐसा करके हमने हिन्दुओं पर कोई कृपा नहीं की। यह तो हमारा कर्त्तव्य था। कोई भी राज्य यदि वह अपनी प्रजा के विभिन्न वर्गों में धर्मों एवं जातियों में भेद करता है, स्थिर नहीं रह सकता। सम्राट औरंगजेब इस सत्य को नहीं जान पाए और उन्होंने मुगल साम्राज्य के विध्वंस की नींव डाल दी। लेकिन मैं यह बात नहीं कह रहा था। मेरे कहने का तात्पर्य है कि हम अपने सेनापतियों और सूबेदारों की स्वार्थपरता और बेवफाई को क्यों दोष दें जब हम स्वयं निकम्मे, आलसी और विलासी हो गए। शाहज़ादो, मैं तुममें से किसी एक को दोष नहीं देता लेकिन सत्य बात कहे बिना भी नहीं रह सकता कि तुम लोग घुड़सवारी, शिकार, शस्त्र-संचालन आदि पौरुषपूर्ण कार्यों को त्यागकर बटेरबाजी, शराब और नाच-गाने में अपने जीवन को गर्क रखते रहे हो। आज जब अचानक हमारे सामने भयानक युद्ध आ गया है, तब तुम लोग क्या करोगे ? सेना चाहेगी राजवंश का नेतृत्व। हम बूढ़े हैं, और शाहज़ादे सभी युद्ध-संचालन में अनुभव-हीन। यही चिंता मेरे मस्तिष्क को परेशान कर रही है।

मिर्जा कोयाश : आपकी परेशानी को हम समझते है जहां-पनाह ! लेकिन मैं कहूंगा कि यदि हमारे दिल में मुगल वंश के सम्मान के लिए दर्द है और अपने भारत देश से प्रेम है तो खुद हमें युद्ध करने की बुद्धि और साहस भी देगा। परिस्थितियों ने हमें जैसा बनाया बन गए। इसमें न आपका अपराध है न हमारा। हमारी बेबसी ने

हमारी आकांक्षाओं के पंख काट दिए। हमारे पास समय काटने के लिए भी कोई कार्य न था—खाली दिमाग शैतान का घर—हमें पतन के पथ पर जाना ही था। फिर भी हम बाबर और अकबर जैसे वीर पुरुषों की सन्तान हैं। हम सेनाओं का संचालन करेंगे—अंग्रेज़ों से लोहा लेंगे। हो सकता है, हमसे भूलें हों, लेकिन हम अपने मस्तक पर कायरता का कलंक नहीं लगने देंगे।

मिर्ज़ा मुगल : राजपुरुषों की आधीनता में युद्ध करने का भारतीय सैनिकों का स्वभाव भी बन गया है इसलिए भी हमें युद्धों में सेनापतित्व स्वीकार करना आवश्यक है, जहांपनाह! यह ठीक है कि मुगल साम्राज्य को प्रजा का समर्थन और सहयोग प्राप्त था फिर भी प्रत्येक राज्य की सुरक्षा सबल सेना के द्वारा ही रह सकती है और मुगल साम्राज्य तो था ही सैनिक शासन। मुगल सम्राटों का लोहा तभी तक माना जा सकता था जब तक वे रणभूमि में सेना का नेतृत्व करने में समर्थ थे। सम्राट औरंगज़ेब के पश्चात् प्रायः सभी सम्राटों ने सेनाएं सेनापतियों के हाथों में सौंपकर स्वयं रंगरेलियों में निमग्न रहना पसन्द किया। परिणाम यह हुआ कि एक-एक कर हमारे सारे सूबे स्वतंत्र हो गए। सेनापति शक्तिवान हो गए और सम्राट शक्तिहीन।

बहादुरशाह : और इस विश्रृंखलता की स्थिति में अंग्रेजों को अपने षड्यन्त्रों का जाल पूरने का अवसर प्राप्त हुआ। देश को मराठों से कुछ आशा थी लेकिन उनका भी मुगलों जैसा ही हाल हुआ। छत्रपति नें पेशवा को शासन की

बागडोर पकड़ा दी । पेशवाओं ने विभिन्न सरदारों के अधीन बड़ी-बड़ी सेनाएं रखीं और उन्हें विभिन्न क्षेत्रों में अपना प्रभाव स्थापित करने का अवसर दिया । बाजी-राव प्रथम स्वयं कुशल सेनापति था । अपने अधीन प्रबल सेना रखता था उसके सामने सभी सरदार भीगी बिल्ली बने रहे लेकिन जब पेशवाओं ने रणभूमि छोड़कर राज-महल की गद्दी सम्हाली तो प्रत्येक मराठा सरदार ने अपनी खिचड़ी अलग पकानी आरम्भ कर दी। जिस डाल पर ये बैठे थे उसीके टुकड़े करने लगे। किसीने यह नहीं देखा कि एक बंदर उसकी रोटी छीनकर खा जाने की ताक में बैठा है। एक छोटी-सी बादल की टुकड़ी भारत के आकाश में आई, किसीने नहीं समझा कि यह कितना भयंकर रूप धारण कर लेगी ! ये व्यापारी के वेश में आने वाले अंग्रेज आज दिल्ली के सम्राट को भी अपना नौकर समझते हैं ।

मिर्ज़ा मुगल : किन्तु जहांपनाह, मुगलों का विगत गौरव फिर लौट आने को है। वसंत के पश्चात् पतझड़, पतझड़ के पश्चात् वसंत, दिन के बाद रात और रात के बाद दिन, यह तो प्रकृति का नियम है। थोड़े ही दिनों में भारत ने अंग्रेज़ों का जो रूप देखा उससे प्रत्येक भारतवासी का अन्त:करण इन विदेशियों के प्रति घृणा से भर गया है। मेरठ से आने वाले सैनिकों का दिल्ली के नागरिकों ने, जिन-में हिन्दू भी थे, मुसलमान भी, जिस प्रकार स्वागत किया उससे जान पड़ता है भारत में एक नया ही युग आनेवाला

कि हमें कितनी कठिन मंज़िल पार करनी है !

मिर्ज़ा कोयाश : हमारे सैनिकों का शत्रु तो उनका जोश ही बन गया जहांपनाह ! उन्हें आशा नहीं थी कि शस्त्रागार सौंपने की अपेक्षा अपने प्राणों पर खेलकर उसमें आग लगा देना अंग्रेज़ अधिकारी पसन्द करेंगे। हमारे सैनिक भी किसी भी मूल्य पर शस्त्रों पर अधिकार कर लेने पर कटिबद्ध थे। वे निर्भय बढ़ते ही गए।

बहादुरशाह : अपने देश के हित के लिए किस तरह प्राण दिए जाते हैं यह हमें अंग्रेज़ों से सीखना होगा।

मिर्ज़ा कोयाश : किन्तु देशभक्ति में हमारे साथी अंग्रेज़ों से हीन सिद्ध हुए हैं, कम से कम इस अवसर पर; यह मैं नहीं मानता। हमारे सैनिकों में अभी तक उत्साह की कमी नहीं आई है, बल्कि अपने साथियों के बलिदान ने उन्हें अंग्रेजों के प्रति अधिक रोष से भर दिया है। दिल्ली के अनेक नागरिक हमारे झंडे के नीचे अंग्रेजों से युद्ध करने के लिए हमारे पास आए हैं। नगर के धनी-मानी व्यक्ति स्वेच्छा से हमें धन की सहायता देने को प्रस्तुत हुए हैं। अंग्रेजों के प्रति प्रत्येक भारतीय रोष और घृणा से पागल हो उठा है। अंग्रेज जहां भी उनके हाथ लगता है, चाहे वह स्त्री हो, चाहे बच्चा, उसे बेदर्दी से मार डाला जाता है।

बहादुरशाह : और तुम इस बात पर प्रसन्न हो, शाहज़ादे ! मेरा तो सर यह सुनकर लज्जा से झुका जा रहा है। वीर पुरुष युद्ध के मैदान में अपना पौरुष प्रकट करते हैं; निरीह, निरशस्त्र स्त्री-पुरुषों का वध नहीं करते। हम योद्धा हैं,

कसाई नहीं। विप्लव का अर्थ सामूहिक उन्माद नहीं है। हमें विप्लव की आंधी में भी विवेक के दीपक को बुझने नहीं देना चाहिए। नगर में हमारे नाम से एलान कराओ कि निश्शस्त्र और अरक्षित अंग्रेज़ों की जानें न ली जाएं। प्रजा को कानून अपने हाथ में लेने का अधिकार नहीं। अंग्रेज़ स्त्री-पुरुष या बच्चा जहां भी प्राप्त हो उसे लाल-किले में पहुंचा दिया जाए जहां उन्हें युद्ध बन्दी के रूप में रखा जाएगा।

मिर्ज़ा मुग़ल : जहांपनाह की आज्ञा का पालन किया जाएगा।

बहादुरशाह : हां, हमारे आदेश का पालन होना ही चाहिए। अब बैठो हम एक घोषणा लिखाते हैं, उसे भारत के सभी राजाओं और रईसों के पास भेजना होगा।

[मिर्ज़ा मुगल बैठकर कागज़-कलम उठाता है।]

मिर्ज़ा मुग़ल : लिखाइए, जहांपनाह !

बहादुरशाह : लिखो : भारत के सभी राजाओं और रईसों को ज्ञात हो कि खुदावंद ताला ने तुम्हें ऊंचा पद, राज्य, वैभव और प्रभुता इसलिए दी है कि तुम उन लोगों का विनाश करो जो तुम्हारे देश को दास बनाए हुए हैं और देशवासियों का धन लूट रहे हैं, और धर्म भी छीन रहे हैं। अंग्रेज़ न केवल भारत पर अपना राज कायम रखना चाहते हैं बल्कि वे यहां के सारे धर्मों को मिटाकर ईसाई धर्म फैलाना चाहते हैं। अंग्रेज़ी शासन ने पादरियों से हमारे धर्मों के विरुद्ध पुस्तकें लिखवाकर जनसाधारण में बटवाई हैं। भारतीयों को ऊंची नौकरियों का लोभ देकर अपना धर्म

छोड़ने का प्रलोभन अंग्रेज़ देते रहे हैं और देते रहते हैं। अंग्रेज़ों ने विधवाओं का विवाह उचित ठहराने का कानून पास किया, हिन्दुओं की शास्त्रसम्मत सती-प्रथा को बन्द किया।

मिर्ज़ा कोयाश : क्षमा कीजिए, जहांपनाह, निर्दयतापूर्ण सती-प्रथा को बन्द करना या विधवाओं को विवाह करने की अनुमति देना क्या सचमुच हिंदू धर्म के विरुद्ध है ?

बहादुरशाह : इस सम्बन्ध में एक सम्मति नहीं हो सकती, कोयाश ! सम्राट अकबर ने भी सती-प्रथा को बन्द किया था, लेकिन इस समय तो हमें भारतीय जनता को अंग्रेज़ों के विरुद्ध भड़काना है। राजनीति की बातें आम लोग कम समझते हैं इसलिए हमें वे बातें सामने लानी हैं जिनसे हम बता सकें कि इस देश की परम्पराओं के विरुद्ध अंग्रेज़ क्या कर रहे हैं। खैर तुम लिखो, मिर्ज़ा मुगल !

मिर्ज़ा मुग़ल : लिखवाइए जहांपनाह !

बहादुरशाह : उन्होंने यह आज्ञा प्रसारित की कि गोद ली हुई संतान को उत्तराधिकारी स्वीकार नहीं किया जाएगा। इस आज्ञा के अनुसार उन्होंने पेशवा नाना साहब की पेन्शन ज़ब्त की, झांसी का राज छीना और भी कई छोटे-बड़े राज ज़ब्त किए। नागपुर का मराठा राज छीन लिया और रानियों को अपमानित कर उनके ज़ेवर तक छीन लिए। अवध का राज छीना और बेगमात को लूटा। उन्होंने आटे में हड्डियां मिलाकर सैनिकों को उनकी रोटियां खिलाईं, आम बाज़ार में भी वह आटा बिकवाया, ब्राह्मणों

एवं अन्य उच्च जाति के सैनिकों को गाय और सूअर की चर्बी लगी कारतूसें मुंह से काटने के लिए बाध्य किया। इतना ही नहीं, आर्थिक दृष्टि से भी उन्होंने भारत को बहुत हानि पहुंचाई। उन्होंने भारत को चूसकर इंगलैंड को मालामाल किया। भारत का अरबों रुपया वे लूट ले गए। यहां का व्यापार-व्यवसाय नष्ट कर दिया ताकि इंगलैंड का माल भारत में बिक सके।

मिर्ज़ा मुग़ल : और किसानों को तो अंग्रेज़ों ने दर-दर का भिखारी बना दिया, इस सम्बन्ध में भी कुछ होना चाहिए।

बहादुरशाह : निस्संदेह! लिखो : "किसानों, ज़मींदारों और ताल्लुकेदारों को भी उन्होंने नष्ट किया। किसान हमारे राज में अपनी सारी ज़मीन का मालिक था, अब अंग्रेज़ सारी ज़मीन के स्वामी बन गए हैं, किसान केवल मज़दूरी पर काम करने वाला रह गया है। उसपर मनमाना लगान लगा दिया है। उनकी पंचायतें समाप्त कर दी गई हैं। हम इस छोटे-से घोषणा-पत्र में अंग्रेजों के अत्याचार, अन्याय और दुष्टतापूर्ण मनसूबों की तस्वीर नहीं खींच सकते हैं। आप लोगों ने स्वयं अपनी आंखों से देखा है। इसलिए हमने अंग्रेज़ों को भारत से निकाल बाहर करने का निश्चय किया है। हमने यह कदम फिर से मुगल साम्राज्य की स्थापना करने के लिए नहीं उठाया। एक बार अंग्रेज भारत से निकल जाएं उसके बाद यहां ऐसे राज की स्थापना की जाए जो यहां के हर फिरके की राय से काम करे। आपको यह भी ज्ञात है कि अंग्रेज़ भारत

हम लोगों की मदद से ही टिके हुए हैं। अगर आप सब हमारा साथ देंगे तो अंग्रेज़ भारत में एक दिन भी नहीं रह सकेंगे। आप इस संग्राम में हमारी क्या सहायता करेंगे यह निश्चित रूप से हमें लिखें। मुगल साम्राज्य से आपके जो सम्बन्ध रहे हैं उनके नाम पर एवं अपने देश और धर्म के नाम पर मैं आपसे अनुरोध करता हूं कि आप तुरन्त अंग्रेज़ों के विरुद्ध युद्ध छेड़ दें।" आपका बहादुरशाह 'ज़फ़र'।

मिर्ज़ा कोयाश : क्या सब राजा और रईस हमारा साथ देंगे ?

बहादुरशाह : इसे कौन जानता है, शाहज़ादे ! इतना अवश्य है कि अंग्रेज़ों से सन्तुष्ट कोई नहीं है। सभी अनुभव करते हैं कि अंग्रेज़ों की अपेक्षा मुगल-राज्य कहीं अच्छा था। हिंदू, मुसलमानों एवं सभी अन्य धर्म के माननेवाले पूरी स्वाधीनता और सम्मान से भारत में रहते थे। बाहर से आए हुए तूरानी, ईरानी और अफगान और भारत के पूर्व निवासी राजपूत आदि सभी इसी देश को अपना मानकर बराबरी के अधिकारों के साथ यहां रह रहे थे। हिमालय से लेकर हिन्दमहासागर तक यह देश सुख की सांस लेता था। कला, साहित्य और व्यवसाय में संसार का कोई देश भारत का मुकाबला नहीं करता था। संसार-भर का सोना खिच-खिचकर भारत में एकत्र हो रहा था। भारत के इसी स्वर्ण ने अंग्रेज़ों को भारत में खींचा और देखते-देखते उन्होंने भारत को कंगाल और अपाहिज बना दिया। हम लोग परस्पर एक-दूसरे से ईर्ष्या करते रहे, लड़ते रहे और ज़ग्रेश्रं अपने पांव फैलाते गए में। अब भारत को बुद्धि आई

है । खुदा ने चाहा तो भारत का स्वर्णकाल फिर लौट आएगा ।

मिर्ज़ा कोयाश : लेकिन उसके लिए हमें बहुत रक्तदान करना पड़ेगा ।

बहादुरशाह : हां, अभी तो प्रारम्भ है, शाहज़ादे ! स्वतन्त्रता का पोत रक्त के सागर में से ही आता है। भारत को बलिदान तो देने ही होंगे, क्या पता हमें और तुम्हें भी अपने सर चढ़ाने पड़ें । हमें इसके लिए प्रस्तुत हो जाना चाहिए ।

मिर्ज़ा कोयाश : कुछ और लिखना है, जहांपनाह !

बहादुरशाह : हां, अभी तो हमने केवल राजाओं और रईसों के नाम अपना घोषणा-पत्र लिखाया है। एक घोषणा-पत्र भारत की प्रजा के नाम भी हम लिखाना चाहते हैं। मान लो, राजाओं और रईसों में से अधिकांश हमारा साथ न दें फिर भी हमें यह संग्राम तो लड़ना ही है और हमारी वास्तविक ताकत भारत का प्रजा वर्ग है। राजा-रईसों को अंग्रेज़ मिटा भी देते तो भारत का कुछ नहीं बिगड़ता । अंग्रेज़ी शासन की असल मार तो यहां की प्रजा पर पड़ी है, जिसे पूरी तरह बर्बाद किया गया है। भारत की पीड़ित प्रजा पर हमारी प्रार्थना का जो प्रभाव पड़ेगा वह मुकुट-धारियों पर नहीं ।

मिर्ज़ा मुगल : तो लिखवाइए, जहांपनाह !

बहादुरशाह : लिखो—"हिंदुस्तान के हिंदुओ ? एवं मुसलमानो भाइयो ! आपको मालूम होना चाहिए कि अंग्रेज़ों ने भारत पर जो अत्याचार किए हैं उनसे दुखी होकर हमने उनके

विरुद्ध संग्राम छेड़ दिया है। खुदा ने जितनी बरकतें मनुष्य को प्रदान की हैं, उनमें सबसे अधिक मूल्यवान है स्वतंत्रता; वही निर्मम अंग्रेज़ों ने हमसे छीन ली है। क्या हम खुदा की इस बरकत से सदा ही वंचित रहेंगे? नहीं, नहीं, अंग्रेज़ों के पापों का घड़ा भर चुका है। क्या तुम अब भी शांत रहोगे? खुदा यह नहीं चाहता कि तुम लोग शांत रहो। तुम लोगों के शौर्य और खुदा के आशीर्वाद से अंग्रेज़ों की पूर्ण पराजय होगी। हम तुम सबको अंग्रेज़ों के विरुद्ध लड़े जानेवाले धर्मयुद्ध में सम्मिलित होने का निमंत्रण देते हैं। हमारी सेना में छोटे और बड़े का कोई अन्तर नहीं होगा। अपनी जन्मभूमि की स्वतंत्रता प्राप्त करने के लिए तलवार उठाना प्रत्येक व्यक्ति का कर्त्तव्य है और इसका उसे जन्मसिद्ध अधिकार प्राप्त है। भारत का प्रत्येक वासी, चाहे किसी धर्म को माननेवाला हो, देशवासी के नाते परस्पर भाई-भाई है। हमें आपस के सारे भेद-भाव भुलाकर अपने शत्रु अंग्रेज़ों को भारत से निकालने के लिए कंधे से कंधा मिलाकर रणभूमि में कदम बढ़ाना चाहिए।"

भारत की स्वाधीनता का इच्छुक, बहादुरशाह 'ज़फ़र'। क्यों शाहज़ादो, हमारा यह घोषणा-पत्र ठीक है न?

मिर्ज़ा कोयाश : क्यों नहीं, जहांपनाह! जिल्ले इलाही की लेखनी तलवार से भी तेज़ है।

बहादुरशाह : जब हमारी भुजाओं में तलवार पकड़ने का बस था, तब भारत सो रहा था। काश आज से कुछ वर्ष पहले अंग्रेज़ों के विरुद्ध धर्मयुद्ध छिड़ा होता! तब हम तैमूरी

तलवार का पानी पिलाते अंग्रेज़ों को। अब तो तुम लोग ही हमारी भुजाएं हो।

[मिर्ज़ा अबूबकर का नशे में धुत प्रवेश। उसके कदम ठीक से नहीं पड़ते और ज़बान भी लड़खड़ाती है। वह हाथ में नंगी तलवार लिए है।]

मिर्ज़ा अबूबकर : हमने मार डाला उसे। वह हमें जान से ज़्यादा प्यार करती थी लेकिन वह अंग्रेज़ थी। हम एक भी अंग्रेज़ को जीवित नहीं छोड़ेंगे। नहीं छोड़ेंगे। जिस तरह मुर्गाबियों का शिकार किया जाता है उसी तरह हम अंग्रेज़ों का शिकार करेंगे और उसके बाद हम दिल्ली तख्त पर बैठेंगे। हां, हम तख्त पर बैठेंगे। जो हमारे रास्ते में आएगा उसे मौत के घाट उतार देंगे।

[मिर्ज़ा अबूबकर अपने को सम्हाल न सकने के कारण गिर पड़ता है। मिर्ज़ा मुगल अपने स्थान से उठकर उसे सम्हालता है।]

बहादुरशाह : तुम दिल्ली के तख्त पर बैठोगे जो अपने पांवों पर खड़े नहीं हो सकते?

[मिर्ज़ा अबूबकर कोशिश करके बैठता है।]

मिर्ज़ा अबूबकर : कौन? जहांपनाह! हां, हां, जहांपनाह ही तो हैं? क्या कहा था हमने? कुछ कहा तो था। खैर, कुछ भी कहा हो, हम उसके लिए माफी मांगते हैं। हम आपको नहीं मारेंगे। आप जब तक जीवित हैं। तख्त के स्वामी हैं लेकिन आपके बाद जवांबख्त को बादशाह नहीं बनने देंगे। जहांपनाह, यदि आप चाहते हैं कि आपके बाद तख्त के लिए भाइयों में संग्राम न हो तो आप हम

सब भाइयों का कत्ल कर दीजिए या ज़हर देकर मरवा डालिए जिस तरह मिर्ज़ा फ़खरू को मरवा दिया।

मिर्ज़ा कोयाश : मिर्ज़ा अबूबकर! होश में बात करो। आली-जाह पर आरोप लगाते हुए शर्म नहीं आती तुम्हें?

मिर्ज़ा अबूबकर : (बहादुरशाह 'ज़फर' के पांव पकड़कर) मेरे अच्छे अब्बा, सच बताइए, क्या मिर्ज़ा फ़खरू को ज़हर देने में आपका हाथ नहीं है? नहीं होगा। मान लेता हूं, नहीं होगा, लेकिन आपको यह तो मालूम है कि उसे किसने ज़हर दिया, फिर आपने अपराधी को प्राणदंड क्यों नहीं दिया? इसलिए कि वह औरत है; आप उसे प्यार करते हैं! लेकिन न्याय अन्धा होता है, निर्मम होता है; सारे नातों-रिश्तों से ऊपर होता है। हमको भी एक औरत प्यार करती थी लेकिन आज हमने उसे मार डाला क्योंकि वह अंग्रेज़ थी। क्या आप अपनी संतान की वैरिन औरत को नहीं मार सकते?

बहादुरशाह : शाहज़ादे मिर्ज़ा अबूबकर, होश में आओ। दिल्ली के सम्राट की बात जाने दो लेकिन अपने अब्बा का तो सम्मान करो। अगर आज के बाद शराब पीकर हमारे सामने आए तो हम तुम्हें सज़ा देंगे।

[मिर्ज़ा अबूबकर यत्न कर खड़ा होता है।]

मिर्ज़ा अबूबकर : सज़ा! बाप अपने बेटे से प्यार न करे, इससे बड़ी सज़ा बेटे के लिए क्या हो सकती है? माना कि हम अपरिमित शराब पीते हैं लेकिन हमारे खानदान में किसने शराब नहीं पी? उन्हें बुरा कोई नहीं कहता क्योंकि वे

उस समय धरती पर आए थे जब मुगल साम्राज्य का सितारा बुलन्द था । आज मुगल साम्राज्य का सूरज अस्ताचल में विलीन हो गया है। एक-दो किरनें ही शेष हैं। वे भी अन्धकार में विलीन हो जाएंगी !

मिर्ज़ा मुग़ल : नहीं भाई अबूबकर ! मुगल साम्राज्य फिर बुलंद होगा, अगर हम लोग अपने होश में रह सके । अगर कुछ समझने की ताकत तुम्हारे दिमाग में शेष हो तो समझने का यत्न करो भाई ! यह पारिवारिक झगड़े खड़े करने का समय नहीं है। अंग्रेज़ों के साथ हमारा संग्राम छिड़ गया है । हम सबका पहला कर्तव्य अंग्रेजों से लोहा लेना है।

मिर्ज़ा अबूबकर : ठीक तो है। मलिका-ए-हिन्दुस्तान के ज़हर की प्याली पीकर मरने से तो अंग्रेजों से लड़कर उनकी तोप के गोले का निशाना बनना अधिक सम्मान की बात है। हमने बाबरशाह के वंश में जन्म लिया है। भले ही हमारे रक्त में इतनी शराब मिल गई है कि हमारा वास्तविक रक्त उसमें दाल में नमक के बराबर रह गया है लेकिन वह अपना रंग लाएगा । हम लड़ेंगे, जहांपनाह ! और मरेंगे। अंग्रेज रहेंगे या जाएंगे कौन जाने, लेकिन इतनी बात साफ है कि मिर्जा जवांवक्त के लिए रास्ता साफ हो जाएगा।

बहादुरशाह : (अबूबकर के सर पर हाथ रखकर) मेरे अच्छे बेटे । अपने बेबस बाप को क्षमा करो । तुम सभी बेटे हमारे कलेजे के टुकड़े हो । सर पर राजमुकुट रखने के लिए

तुम परस्पर क्यों झगड़ते हो? मुगल साम्राज्य आज तो एक लाश है, अंग्रेज उसे खूब गहरा गाड़ देने को प्रस्तुत हैं। अगर तुममें शक्ति हो तो इसमें जान डालो। लेकिन याद रखो कि इसमें जान पड़ जाने पर भी यह किसीकी व्यक्तिगत सम्पत्ति नहीं रहेगा। अब तो प्रजा ही इसकी स्वामिनी बनेगी, वह जिसके सर पर ताज रखना चाहेगी, वही तख्त पर बैठेगा और उसे प्रजा की आज्ञा से चलना होगा।

मिर्ज़ा कोयाश : जहांपनाह, आप महान हैं। आप अच्छे सम्राट हैं, इसका परिचय तो तब संसार पाता जब वास्तव में आपके पास साम्राज्य होता, लेकिन आप उदार और महान पुरुष हैं, इसका परिचय तो आज भी संसार पा सकता है।

बहादुरशाह : नहीं शाहज़ादे! हमें महान पुरुष समझना एक भ्रम है। हममें वे सब दुर्बलताएं हैं जो सम्राट औरंगजेब के बाद की पीढ़ी में हमारे वंश में घर किए रहीं। लेकिन हम करते क्या? हमारी भुजाएं कभी-कभी फड़कती थीं कुछ करने के लिए लेकिन हम सिवा आत्महत्या के कुछ भी करने की स्थिति में नहीं थे। तब हमारे दिल का दर्द शायरी बनकर बाहर निकल पड़ा, हमारी बेबसी ने हमें शराब का दास बनाया, हमारी निराशा ने हमें आलसी और विलासी बना दिया। हमसे सबसे बड़ी भूल हुई कि हमने बुढ़ापे में विवाह किया। लेकिन···

[बहादुरशाह 'ज़फ़र' की आंखों में आंसू आ जाते हैं। मिर्ज़ा अबूबकर जेब से रूमाल निकालकर उनकी आंखें पोंछता है।]

मिर्ज़ा अबूबकर : आपके ये बहुमूल्य आंसू अनमोल सम्पत्ति हैं हमारे लिए। मनुष्य की सबसे बड़ी कमज़ोरी यह है कि वह प्यार करने के लिए भटकता है । ठीक जगह अगर प्यार नहीं पाता तो वह गलत जगह जाता है। वह गंदी नालियों का पानी पीता है । आपके सभी शाहज़ादों का यही हाल है। अब्बाजान, आपके आंसुओं ने मेरा नशा हिरन कर दिया है । अब आप आराम कीजिए, मैं तो जाकर अभी और शराब पिऊंगा, नाच देखूंगा, गाना सुनूंगा।

मिर्ज़ा मुग़ल : फिर वही शराब, वही नाच-गाने की तलब ! तुम्हें ऐसी बात कहते शर्म नहीं आती अबूबकर ! बहुत बेहया हो !

मिर्ज़ा अबूबकर : बेशक बेहया हूं लेकिन बेईमान नहीं। जो बातें अब हमारा स्वभाव बन गई हैं और जिन्हें हम छोड़ नहीं सकते उनको छिपाने से लाभ क्या ? आप लोग राजनीति की बड़ी बातें सोचिए, बंदा तो अपनी इबादतगाह में जाता है। खुदा हाफिज़ सलामालेकुम।

[मिर्ज़ा अबूबकर का प्रस्थान]

बहादुरशाह : बेचारा अबूबकर !

मिर्ज़ा मुग़ल : कुछ और आज्ञा है हमारे लिए ?

बहादुरशाह : काम तो बहुत है, शाहज़ादो ! कितना बड़ा उत्तरदायित्व हम लोगों ने अपने ऊपर ले लिया है । भारत के एक कोने से दूसरे कोने तक जो आग भड़कनेवाली है, उसपर नियंत्रण रखना हमारे लिए आवश्यक है लेकिन

अभी तो दिल्ली की गतिविधि को व्यवस्थापूर्वक चलाने के लिए भी उपयुक्त व्यक्ति हमारे पास नहीं हैं। अभी नया-नया जोश है, इसलिए तुम दोनों इतनी दिलचस्पी ले रहे हो लेकिन जानता हूं तुम सब अबूबकर के कदमों पर चलनेवाले ही हो।

मिर्ज़ा कोयाश : क्या जहांपनाह हमारा विश्वास नहीं करते ?

बहादुरशाह : अब तुम लोगों के सिवा मेरे पास है ही कौन, जिसका विश्वास करूं और जिसपर काम का बोझ डालूं। तुम लोग सेना के सेनापति बनकर उन्हें नियंत्रण में लाओ। नई सेना भरती करो। तोप ढालने, बारूद और गोले बनाने एवं अन्य शस्त्रास्त्र बनाने के कारखाने चालू करो। संग्राम करने के लिए धन संग्रह करो। कितना काम है, अभी तुम्हारे सामने। लेकिन कोई बात नहीं, इस वक्त तुम लोग जाओ कल सुबह आना, हम हाथी पर बैठकर अपनी सेना का मुआयना करेंगे तथा नगर में घूमेंगे ताकि लोगों को विश्वास हो जाए कि हमने साम्राज्य की बागडोर सम्हाली है; अंग्रेज़ों से लोहा लेने के लिए मैदान में उतर आए हैं। जाओ, हमें भी मलिका से जाकर कुछ परामर्श करना है। युद्ध के समय शाहज़ादों का पारस्परिक झगड़ा शांत रहे, इसका प्रबन्ध करना है।

[एक ओर बहादुरशाह ज़फ़र' और दूसरी ओर मिर्ज़ा मुग़ल और मिर्ज़ा कोयाश जाने लगते हैं, लेकिन सहसा बहादुरशाह 'ज़फ़र' मुड़ पड़ते हैं।]

बहादुरशाह : लेकिन ठहरो ! कुछ आवश्यक कार्य शेष रह

गया है। भले ही हम थके हुए हैं लेकिन आज का काम कल पर छोड़ना उचित नहीं।

[शाहज़ादे मिर्ज़ा मुगल और मिर्ज़ा कोयाश रुक पड़ते हैं]

मिर्ज़ा मुग़ल : आज्ञा कीजिए, जहांपनाह !

बहादुरशाह : हमें मिर्ज़ा इलाहीबख्श और हकीम एहसानुल्ला खां ने बताया था कि वर्तमान अनिश्चित स्थिति का लाभ उठाकर कुछ गुंडे नगर में लूटपाट करने लगे हैं।

मिर्ज़ा कोयाश : जी हां, जहांपनाह, इस समाचार में कुछ सचाई है। गुंडों के आतंक से दूकानदार दूकानें खोलने में हिचकते हैं। परिणाम यह हुआ कि हमारे सैनिकों के लिए भी रसद मिलना कठिन हो गया है।

बहादुरशाह : अंग्रेजों का शासन दिल्ली पर से उठ गया है इसका अर्थ यह नहीं कि वहां किसीका शासन ही नहीं रहा। हमारा सर्वप्रथम कर्तव्य नगर में सुव्यवस्थित और न्यायपूर्ण शासन स्थापित करना है। हमारे शासन के प्रति आस्था और विश्वास स्थापित करने के हेतु तुरन्त लूटपाट बंद करने का प्रबन्ध किया जाना चाहिए।

मिर्ज़ा मुग़ल : जहांपनाह की आज्ञा का पालन होगा। मैं कल ही ढिंढोरा पिटवा दूंगा कि दिल्ली पर फिर से जहांपनाह का शासन स्थापित हो चुका है। वे चाहते हैं कि नगर में पूर्ण शान्ति और न्याय कायम रहे। सारे कारोबार नियमित रूप से चालू रहें। यदि कोई व्यक्ति अशान्ति फैलाएगा या लूटमार करने का प्रयास करेगा तो उसे कठोर दंड दिया जाएगा। जो दूकानदार दूकान नहीं

खोलेगा और प्रजा और सैनिकों को आवश्यक वस्तुएं एवं रसद देने से इन्कार करेगा, उसे भी दंड दिया जाएगा ।

बहादुरशाह : यह तो ठीक है, लेकिन सिर्फ ढिंढोरा पिटवाना ही पर्याप्त न होगा । नगर के बारहों दरवाजों पर एक-एक सैनिक दस्ता शांति-रक्षा एवं अन्य प्रबन्ध के लिए तुरन्त नियुक्त करो । शहर के प्रमुख मोदियों को आदेश दो कि प्रतिदिन पांचों पलटनों तथा तुर्क सवारों को रसद पहुंचाते रहें। चौधरियों और वणिकों को आज्ञा दो कि अनाज का मूल्य निर्धारित कर कोठियां खुलवाकर वेचना प्रारम्भ कर दें ।

मिर्ज़ा मुग़ल : यही होगा, जहांपनाह !

बहादुरशाह : इसके अतिरिक्त सैनिकों को चार-चार महीने का वेतन अग्रिम कल ही दिया जाना चाहिए ।

मिर्ज़ा कोयाश : लेकिन सैनिकों ने तो कहा था, "अपने वेतन का प्रबन्ध हम स्वयं करेंगे ।"

बहादुरशाह : उन्होंने अपनी तरफ से हमें निश्चिन्त करने का यत्न किया है लेकिन उन्हें हम लूट-मारकर अपने वेतनों के लिए धन-संग्रह करने की अनुमति नहीं देंगे । अब वे हमारे नियमित और अनुशासनबद्ध सैनिक हैं और उनको वेतन देने का उत्तरदायित्व हमारा है । न उन्हें लूट-मार करने दिया जाएगा, न उन्हें भूखे पेट रखा जाएगा । शासन की व्यवस्था बनाए रखना, प्रजा में आतंक और अशांति न फैलने देना और अंग्रेज़ों को भारत से निकालने के लिए अविरल संग्राम करना ही हमारे सैनिकों का कर्तव्य है ।

मिर्जा कोयाश : तब तो हमें तुरन्त ही बहुत रुपयों का प्रबन्ध करना पड़ेगा।

बहादुरशाह : करना ही पड़ेगा। भारतवासी यदि अंग्रेज़ी-शासन को अभिशाप समझते हैं तो वे स्वेच्छा से हमारी धन-सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति करेंगे। इस समय तो हमने सोचा है कि बादशाह शाह आलम ने ५४ वर्ष पहले अंग्रेज़ों से सन्धि की थी, उसके अनुसार जमना के पश्चिम के महालों की मालगुज़ारी का रुपया बादशाह के निजी खर्च के लिए तय हुआ था। पहले वही हमें वसूल करना चाहिए।

मिर्जा कोयाश : लेकिन क्या सारे ही भारत से मालगुज़ारी वसूल करने का हमें अधिकार नहीं है?

बहादुरशाह : अधिकार शक्ति का दास होता है। जिसकी लाठी उसकी भैंस। मनुष्य स्वभावत: बर्बर है हम सभ्यता की अनेक सीढ़ियां चढ़ चुके हैं फिर भी अभी तक न्याय और अधिकार को शक्ति की दासता से मुक्त नहीं कर पाए। खैर, कुछ भी हो, सत्य से आखें नहीं मूंद सकते। आज हमें स्वप्नों के आकाश से उतरकर यथार्थ और व्यावहारिकता की भूमि पर पांव रखने चाहिए। जो कुछ व्यावहारिक हैं वही पहले करना चाहिए।

मिर्जा मुग़ल : लेकिन भारत की प्रजा क्या स्वयं ही मालगुज़ारी नहीं देगी ?

बहादुरशाह : आकाश से वर्षा होगी, इस आशा में कृषक कुएं खोदना बंद नहीं करता। प्रकृति का व्यवहार अनिश्चित

है। कभी सूखा पड़ता है, कभी अतिवर्षा होती है। प्रकृति के अनुतापों से मानव का पुरुषार्थ और ज्ञान संग्राम करता है। तात्कालिक आवश्यकता की पूर्ति के लिए हमें अपने कर्मचारी कुछ सैनिकों सहित हापुड़, मेरठ, मुजफ्फरनगर, शामली, थानाभवन, सहारनपुर, गंगोह और गुड़गांव भेजकर तहसील उगाहना होगा।

मिर्ज़ा मुग़ल : इस काम के लिए उपयुक्त व्यक्ति खोजने होंगे।

बहादुरशाह : हमारे पुराने नमकख्वार मुंशीलाल नत्थू और उनके पुत्र रामजीदास को तहसील के काम में लगाया जाए। उनकी योग्यता और ईमानदारी पर हमें पूर्ण विश्वास है।

मिर्ज़ा मुग़ल : ठीक है, यह व्यवस्था भी कर दी जाएगी।

बहादुरशाह : इसके अतिरिक्त नगर के धनी व्यापारियों और रईसों को बुलवाओ। उनके पास आज जो सम्पत्ति है, वैभव है उसका संबंध मुगल सम्राटों की व्यवस्थित राज्य-प्रणाली से रहा है और अंग्रेज़ों के आगमन ने उन्हें हानि ही पहुंचाई है। वे भी अंग्रेजों का अन्त देखना चाहते हैं अतः उन्हें इस संग्राम में सहयोग देना चाहिए। फिर भी हम ऋण-स्वरूप ही उनसे रकमों की मांग करेंगे, जो यदि खुदा ने हमें विजयी बनाया तो व्याज सहित उन्हें लौटा देंगे।

मिर्ज़ा मुग़ल : मेरी सम्मति में कल दीवाने-आम में दरबार किया जाए जिसमें दिल्ली के कई रईसों, व्यापारियों, धनी और प्रतिष्ठित व्यक्तियों को आमंत्रित किया जाए।

बहादुरशाह : इसके अतिरिक्त झज्झर के नवाब अब्दुर्रहमानखां दादरी के बहादुरखां और फर्रुखनगर के अहमद अली, बल्लभगढ़ के राजा नाहरसिंह, रेवाड़ी के राव तुलाराम और दुजाने के हसनअलीखां को भी बुलवाया जाए। ये लोग हमारे पुराने नमकख्वार हैं। हमें पूर्ण विश्वास है कि ये हमारा साथ देंगे।

मिर्ज़ा कोयाश : मुझे प्रसन्नता भी और दुःख भी है इस बात से कि जहांपनाह को इस उम्र में कितना सोचना पड़ रहा है। जान पड़ता है, आप रात को चैन से सो भी नहीं पाते।

बहादुरशाह : जीवन के ८१ वर्ष तो सोते रहने में ही व्यतीत कर दिए हैं हमने। अब समय ने हमें जगा दिया है। अब सोने का नाम लेना भी पाप है। अब? तो जब तक मृत्यु आकर हमें अन्तिम नींद में सुला नहीं देती, हमारी आंखें नहीं लग सकतीं। हम चाहते हैं, आंखें मूंदने के पहले हम अपने हिन्दुस्तान को स्वतन्त्र देख पाएं। मेरठ के सैनिकों के उतावलेपन ने हमारी योजना को बहुत धक्का लगाया है, अन्यथा ३१ मई को सारे भारत में अंग्रेज़ों के विरुद्ध एक साथ संग्राम छिड़ता। उस स्थिति में उन्हें हमारा मुकाबला करना असंभव हो जाता, लेकिन खुदा हमारी कठिन परीक्षा लेना चाहता है, इसीलिए अंग्रेज़ों को सावधान होने का समय प्रदान कर दिया। खैर, कुछ भी हो, जब ज्वाला भड़क ही उठी है तो हम इसे बुझने न देंगे। संभव है कि ३१ मई तक हमें अकेले ही स्वाधीनता का संग्राम करना पड़े, लेकिन अब कदम पीछे हटाने का अर्थ शेष

भारत में अंग्रेज़ों के विरुद्ध उठने वाली आंधी को भी रोक देना है। हमारे पास मुगल सत्ता के गौरवपूर्ण अतीत के सिवा और कुछ नहीं है जिसके बल पर हम अंग्रेज़ों से युद्ध कर सकें, हमारे पास न पर्याप्त सेना है, न आवश्यक धन। हमें सभी साधन एकत्र करने होंगे। विद्युत्-गति से हमें काम करना होगा। भारत मुगल राजवंश से नेतृत्व की अपेक्षा करता है। हमें ही नहीं, शाहज़ादो, तुम्हें भी इस सम्बन्ध में अपना उत्तरदायित्व निभाना है। कोई चिन्ता नहीं यदि शुभ कार्य के लिए मुगल साम्राज्य का अवशेष चिह्न भी समाप्त हो जाए; भले ही मुगल राजवंश का नाम भी मिट जाए, लेकिन याद रखो, लज्जाजनक जीवन से गौरवपूर्ण मृत्यु श्रेयस्कर है।

मिर्ज़ा मुग़ल : जहांपनाह हमें आशीर्वाद दें कि हम भारत की मिट्टी का ऋण चुकाने में समर्थ हो सकें।

मिर्ज़ा कोयाश : जहांपनाह हमें आज्ञा दें कि हमें और क्या करना है।

बहादुरशाह : अब हमें सोचना यह है कि अंग्रेज फिर से दिल्ली पर अपना अधिकार जमाने के लिए क्या करेंगे, उसीका तोड़ हमें सोचना है और व्यवहार में लाना है। हमें इस बात का भय नहीं कि आगरा, कानपुर, लखनऊ, पटना या कलकत्ता की तरफ से अंग्रेज़ों की सेनाएं दिल्ली पर आक्रमण करेंगी, क्योंकि शीघ्र ही दिल्ली से कलकत्ता तक के प्रदेश में अंग्रेज़ों के विरुद्ध विप्लव की ज्वाला भड़क उठेगी। हमें भय है तो पंजाब में स्थित अंग्रेज़ी सेनाओं

से। पेशावर, लाहौर और रावलपिंडी आदि स्थानों से ही अंग्रेज़ी सेनाएं हमसे लोहा लेने बढ़ेंगी। हमें उनका रास्ता रोकना होगा, कम से कम ३१ मई तक। हम चाहते हैं कि पटियाला, नाभा और जींद के महाराजाओं के पास अपने दूत भेजे जाएं। उनका कर्तव्य है कि भारत के सभी वर्गों, सभी धर्मों के व्यक्ति शत्रु अंग्रेजों से संग्राम करने में आगे बढ़ें और अंग्रेज़ी सेनाओं को दिल्ली आने से रोकें। दिल्ली का भविष्य बहुत कुछ इन राजाओं के रुख पर निर्भर है। हम उनके नाम अपने हाथ से निजी पत्र आज रात को लिखकर रखेंगे, उन्हें विश्वस्त दूतों के हाथ उनके पास भेजने का प्रबन्ध करना होगा। अच्छा, आज के लिए इतना ही कार्य पर्याप्त है। अब तुम लोग जा सकते हो, खुदा हाफिज़ !

[सभी जाने को प्रस्तुत होते हैं कि शाहज़ादा मिर्ज़ा अबूबकर प्रवेश करता है।]

मिर्ज़ा अबूबकर : जहांपनाह !

बहादुरशाह : तुम फिर आ गए अबूबकर।

मिर्ज़ा कोयाश : तुम तो गए थे मौज मनाकर रात को दिन बनाने के लिए ?

मिर्ज़ा अबूबकर : हां, गया तो था लेकिन फाटक तक पहुंचने भी न पाया था कि मुझे ऐसा समाचार मिला जिसने मेरे रहे-सहे नशे को भी काफूर कर दिया और मेरे दिल और दिमाग को उत्तेजित कर दिया।

मिर्ज़ा कोयाश : ऐसा क्या समाचार प्राप्त हुआ ?

मिर्ज़ा अबूबकर : समाचार यह है कि चन्द्रावली गांव के गूजरों ने सब्ज़ीमंडी, तेलीवाड़ा और सफदरगंज को लूट लिया। अनेक नागरिकों को जान से मार डाला और महिलाओं को बेइज़्ज़त कर दिया। जहांपनाह मेरे शरीर में जो मुगल-रक्त प्रवाहित है, वह इस समाचार को सुनकर खौल उठा। हमारी नाक के नीचे हमारी प्रजा के जान-माल और सम्मान पर आक्रमण हो और हम अपने मनोरंजन में व्यस्त रहें, ऐसी ज़िंदगी को धिक्कार है। क्या बात है कि जब तक दिल्ली पर अंग्रेज़ी शासन था, ये लुटेरे भी बिल्ली बने बैठे रहे और हमारा शासन आते ही इन्होंने सर उठाया है ? बलिहारी है समय की कि जिन मुगलों के भृकुटि-विलास से भूकम्प उठते थे, उनकी आंखों के सामने उनकी प्रजा को लूटा जाता है। कुछ करने के लिए मेरी भुजाएं व्याकुल हो उठीं।

बहादुरशाह : शुक्र खुदा का, तुम्हें भी प्रकाश दिखाई दिया। अबूबकर, अन्धेरी गलियां छोड़कर नये प्रकाश की रणभूमि में आओ। कर्त्तव्य तुम्हें पुकार रहा है। आओ, चन्द्रावली के गूजरों को ऐसा पाठ पढ़ाओ कि फिर किसीको हमारे राज्य में उपद्रव करने का स्वप्न में भी साहस न हो। सूरज की किरणें निकलने के पूर्व ही अपराधियों को उचित दंड दो। जाओ, एक पलटन और एक तोप इस कार्य के लिए ले जाओ।

मिर्ज़ा अबूबकर : (बहादुरशाह 'ज़फर' के पांव पकड़कर) अब्बा-जान, आप पहले मुझे मेरे पहले अपराधों के लिए क्षमा

कर दीजिए, ताकि मैं हलके हृदय से नवीन जीवन में प्रवेश करूं।

बहादुरशाह : उठो बेटे, तुम जो कुछ कर रहे हो उसमें तुम्हारा कुछ भी अपराध नहीं है। जिस वंश के लोगों का हृदय व्याकुल रहता है पहाड़ों से टक्कर लेनें के लिए उसके पास कोई काम ही न रहे तो वह पतन की खाइयों में ही गिरता है। इन खाइयों के बाहर निकलो। चलो हमारे साथ, हम अपने सामने तुम्हें तुम्हारे जीवन की प्रथम सैनिक मुहिम पर भेजेंगे।

[सबका प्रस्थान]

[पट-परिर्वतन]

तीसरा दृश्य

[स्थान—पूर्ववत्। समय—दिन। जब पर्दा उठता है तब ज़ीनत महल, जवांबक्त, हकीम एहसानुल्लाखां और मिर्ज़ा इलाहीबख्श बैठे हुए बातें करते दिखाई देते हैं। जवांबक्त २१-२३ साल की आयु का सुन्दर नवयुवक है। हकीम एहसानुल्लाखां और मिर्ज़ा इलाहीबख्श बूढ़े हैं।]

मिर्ज़ा इलाहीबख्श : मलिका-ए-हिंदुस्तान! मेरी रगों में भी मुगल रक्त है और वैसे भी मरहूम शाहज़ादा फ़खरू का श्वसुर होने के नाते मेरा मुगल राजवंश से सम्बन्ध है। मैं चाहता हूं कि मुगल राजवंश का नाम मिटने से बच जाए।

ज़ीनत महल : मिर्ज़ा इलाहीबख्श, आपकी किसी बात पर

विश्वास करना मेरे लिए संभव नहीं है। आपने ही मुझ-पर आरोप लगाया था कि मैंने शाहज़ादा मिर्ज़ा फ़खरू को ज़हर देकर मार डाला, क्योंकि अंग्रेजों ने उसे वली-अहद स्वीकार कर लिया था, और जवांवक्त को सम्राट का उत्तराधिकारी बनाना चाहती हूं। आज स्थिति यह है कि आपने अविश्वास के जिस विषवृक्ष को लगाया था, वह विशालकाय हो गया है। आज प्रायः सभी शाहज़ादे मुझसे घृणा करते हैं और जवांवक्त की जान के ग्राहक बन गए हैं।

मिर्ज़ा इलाहीबख्श : आपका यह सोचना गलत है कि मैंने कभी किसीसे यह कहा कि शाहज़ादा फ़खरू को आपने मार डाला। सच पूछा जाए तो यह बात शाहज़ादों ने ही फैलाई। उनमें प्रत्येक वलीअहद बनने की आकांक्षा रखता है।

हकीम एहसानुल्लाखां : मलिका-ए-जहां, इन गड़े मुर्दों को उखाड़ने से लाभ क्या? कम से कम आप मुझपर तो विश्वास रखें। मेरा तो दिल्ली का राजसिंहासन के उत्तराधिकार से कोई सम्बन्ध नहीं है। मैं तो मात्र हकीम हूं। शाहंशाह का मुझपर विश्वास है और वे आज तक मुझसे ही उपचार कराते रहे हैं। उनकी मुझपर जो कृपा रही है उसीके कारण उनके और उनके वंश के लिए चिंतित हो उठना मेरा कर्त्तव्य है।

मिर्ज़ा जवांवक्त : लेकिन हकीमजी, मेरी समझ में यह नहीं आता कि मुगल राजवंश बर्बादी और अप्रतिष्ठा के

जिस गर्त में गिर चुका है उससे अधिक उसका और क्या बिगड़ सकता है।

ज़ीनत महल : शाहज़ादा जवांवक्त ने ठीक ही कहा। मुगल राजवंश के बुझते हुए चिराग को अंग्रेज़ों के आसरे प्रकाशित रखना अपने-आपको धोखा देना है।

मिर्ज़ा जवांवक्त : और अगर उसे रोशन रखना है तो हमें तेल की जगह अपना रक्त उसे पिलाना होगा।

हकीम एहसानुल्लाखां : शाहज़ादा हुज़ूर! बादशाह बाबर के वंश में जन्म लेने वाला युवक यही बात कहेगा। आप नवयुवक हैं, आपके रक्त में गरमी है, लेकिन यह समय ठंडे दिमाग से सोचने का है।

मिर्ज़ा इलाहीबख्श : अंग्रेज़ भारत के अथवा मुगल राजवंश के हितैषी हो सकते हैं यह तो मैं नहीं मानता लेकिन यह भी सत्य है कि अंग्रेज़ों को भारत से निकाल बाहर करना इस समय असंभव है।

हकीम एहसानुल्लाखां : एक-दो उन राजाओं और नवाबों को छोड़कर जिनके राज्य अंग्रेज़ों ने छीन लिए हैं, ऐसा कौनसा मुकुटधारी है जो खुलकर अंग्रेज़ों से संग्राम करने के लिए मैदान में उतरेगा ?

मिर्ज़ा इलाहीबख्श : जहांपनाह ने अपने दूत पटियाला, नाभा और जीन्द के राजाओं के पास भेजे थे। इनसे अंग्रेज़ों के विरुद्ध सहायता चाही थी लेकिन क्या सहायता प्राप्त हुई ?

हकीम एहसानुल्लाखां : यही की दूतों को मार डाला गया। ये राजा खुलकर अंग्रेज़ों के सहायक बन गए हैं। उन्हें रसद,

रुपया और सेनाएं दे रहे हैं। अम्बाला से लेकर पेशावर तक अंग्रेज़ी सेनाओं के लिए रास्ता साफ हो गया है। मलिक-ए-जहां, ज़रा सोचिए। अंग्रेज़ी सेनाएं सुशिक्षित हैं। बीसियों संग्राम में अनुभव प्राप्त सेनापतियों के नेतृत्व में अनुशासित हैं, उनकी दूरमार तोपों का हमारे पास कोई उत्तर नहीं है। मराठों की लाखों तलवारें अंग्रेज़ों की बढ़ती हुई शक्ति की बाढ़ को नहीं रोक सकीं, उसे कहीं की ईंट कहीं का रोड़ा, भानुमती ने कुनबा जोड़ा कहावत को चरितार्थ करने वाला हमारा सैन्य-दल कैसे पराजित कर सकेगा ?

मिर्ज़ा जवांवक्त : बस, बस, हकीमजी, अंग्रेज़ों की शक्ति का हौआ हमारे सामने खड़ा नहीं कीजिए। अफगानिस्तान के पठानों और नेपाल के गोरखों ने अंग्रेज़ों की अजेयता का पर्दाफाश करके रख दिया है। वे भी मनुष्य हैं और हम भी। अंग्रेज़ यदि भारतीयों पर अपनी सत्ता स्थापित करने में समर्थ हो सके हैं तो इसका श्रेय उनकी तोपों को नहीं हैं। छोटे-से भरतपुर के मिट्टी से बने गढ़ ने अंग्रेज़ों की तोपों को विफल कर दिया था। अंगेजों के पास एक ही शस्त्र ऐसा है जिसके प्रयोग से वे आज तक सफल हुए हैं, वह है हममें फूट के बीज़ बो सकने की उनकी योग्यता। ज़ान पड़ता है, उन्होंने इसी शस्त्र का प्रयोग आप दोनों पर किया है।

मिर्ज़ा इलाहीबख्श : वलीअहद, हम कैसे अपना कलेजा चीर-कर दिखाएं कि हमारे हृदय में सम्राट, मलिका,

वलीअहद और मुगल राजवंश की हितचिंतना की भावना के अतिरिक्त कुछ नहीं है। सम्राट भावुक हृदयवाले उदार और भले आदमी हैं। वे आवेश में बह जाते हैं और मिर्ज़ा मुगल, मिर्ज़ा कोयाश, मिर्ज़ा अबूबकर और मिर्ज़ा खिजर सुलतान आदि तमाम शाहज़ादे उन्हें झूठे सपने दिखाकर पथ-भ्रष्ट कर रहे हैं। सारे ही शाहज़ादे मलिका-ए-हिन्द और वलीअहद से शत्रुता रखते हैं क्योंकि इसके कारण हैं। वे जानते हैं कि उनका भविष्य अन्धकार में है। वे जानते हैं कि उनके रहे-सहे सुख सम्राट के आंखें मूंदते ही समाप्त हो जानेवाले हैं इसलिए जिस वृक्ष के फल उन्हें मिलनेवाले नहीं उसे वे युद्ध की ज्वाला से भस्म करा देना चाहते हैं। उनकी निराशा का यह अन्तिम शस्त्र है। उनका कुछ नहीं जाना है, लेकिन आपको तो सोचना चाहिए। वे तो आज भी अभावग्रस्त हैं और उनका भविष्य धूमिल है, किन्तु आपके पास सुखी जीवन व्यतीत करने के लिए बहुत कुछ शेष है, उसकी रक्षा कीजिए।

हकीम एहसानुल्लाखां : मलिका-ए-जहां! जहां तक मैं समझता हूं यह समय है जब आप अंग्रेज़ों से सौदा कर सकती हैं इस समय हिन्दुस्तान में अंग्रेज़ों के विरुद्ध जो सैनिकों में अशान्ति नज़र आ रही है उसने अंग्रेज़ों को शंकित अवश्य कर दिया है लेकिन वे धैर्य छोड़कर अपना बिस्तर गोल करके भारत से कूच कर जाएंगे, यह सोचना भारी भूल है। जो बुद्धिमान हैं वे भारतीय, विशेषत: राजा लोग, इस बात को समझते हैं, इसका प्रमाण पटियाला, नाभा और

जींद के राजा दे चुके हैं। राजस्थान के राजा सदा मुगल साम्राज्य के स्तम्भ बनकर रहे हैं। उनके नाम भी सम्राट ने अपना फर्मान भेजा था। उन्होंने भी उत्तर नहीं दिया। कोई अपने राज्य, सुख और वैभव के साथ जुआ खेलने को प्रस्तुत नहीं। इस समय जो अंग्रेज़ों का साथ देगा, उसके सम्मान और समृद्धि का अंग्रेज़ हमेशा ध्यान रखेंगे। यही समय है जब आप अंग्रेज़ों का दिल जीत सकती हैं।

जीनत महल : अंग्रेज़ों की वकालत करनेवाले आपके जैसे लोग मौजूद हैं, तभी तो वे यहां अपने पांव टिकाए हुए हैं।

मिर्ज़ा इलाहीबख्श : हमें अंग्रेज़ों से क्या लेना-देना है। सम्राट की चरण सेवा में इतना जीवन व्यतीत हो गया है और चाहते हैं कि शेष जीवन भी उन्हींकी चाकरी करते व्यतीत हो। इस गए-गुज़रे समय में भी मलिका सैकड़ों विधवाओं, अनाथों, फकीरों और अपाहिजों को सहारा देती हैं। अनेक गरीब कन्याओं के अपने खर्च से विवाह कराए हैं। बेगम मुमताज महल, शाहज़ादी जहांआरा आदि ने दानशीलता की जो परम्परा मुगल राजवंश में चालू की, उसे आपने कायम रखा है। अपनी सीमित आय में से सम्राट कितने शायरों और कलाकारों को वज़ीफे देकर मुगल राजवंश के यश का गौरव बढ़ा रहे हैं! उनके ही सहारे पर मिर्ज़ा गालिब कहते हैं—"कर्ज़ की पीते थे मय और समझते थे कि, हां, रंग लाएगी हमारी फाकामस्ती एक दिन।" जब तक सम्राट का हाथ ऐसे प्रतिभाशाली व्यक्तियों पर है, उन्हें कल की चिन्ता क्यों हो? हम लोग

चाहते हैं कि जो सहारा गरीबों, कलाकारों और साहित्यकारों के लिए बना हुआ है, यह कायम रहे। इसलिए हम आपकी सेवा में उपस्थित हुए हैं।

ज़ीनत महल : समय के चक्र को रोक सकने की शक्ति किसी मनुष्य में नहीं है, मिर्ज़ा इलाहीबख्श साहब, फिर मैं तो एक निर्बल नारी हूं। ये राजकाज के मामले हैं । आपको जो कुछ कहना है वह सम्राट से कहिए ।

हकीम एहसानुल्लाखां : सम्राट से कैसे कहें ? मिर्ज़ा मुगल, मिर्ज़ा कोयाश और मिर्ज़ा अबूबकर आदि शाहज़ादे एक क्षण का अवसर भी नहीं देते कि हम एकांत में उनसे बातें कर सकें। सम्राट गाज़ी बहादुरशाह 'जफ़र' की जय, के नारे ने उनके मस्तिष्क से भविष्य के सम्बन्ध में सोचने की शक्ति छीन ली है । आज जब वलीअहद शाहज़ादा जवांबक्त को साथ में हाथी पर बैठाकर सम्राट की सवारी दिल्ली की सड़कों से निकली तो जनता ने जय-जयकार से आकाश गुंजा दिया । इस प्रकार के दृश्य उपस्थित करक शाहज़ादे सम्राट की विवेक-शक्ति को छीन रहे हैं। जिस समय सम्राट के लिए प्राण चढ़ाने की आवश्यकता पड़ेगी उस समय सम्राट की जय-जयकार करनेवाली भीड़ में से कोई दिखाई नहीं देगा। जान-बूझकर सर्वनाश की लपटों में अपने-आपको झोंक देना समझदारी का काम नहीं है ।

मिर्ज़ा जवांबक्त : हमारा मस्तिष्क बिगड़ गया है, हम पागल हो गए हैं। हकीम साहब, आपके उपदेश की गोलियों का हमपर प्रभाव नहीं पड़ सकता।

हकीम एहसानुल्लाखां : लेकिन मैं हकीम हूं, वलीग्रहद ! ग्राखरी सांस तक ग्राशा न छोड़नेवाला। सम्राट का सदा से मैं ही उपचार करता ग्राया हूं ग्रौर इस बार भी मुझे ही करना होगा।

मिर्ज़ा जवांवक्त : क्या ग्रोषधि है हकीमजी, ग्रापके पास रोग की ?

हकीम एहसानुल्लाखां : मलिका-ए-हिन्द ही मेरी ग्रंतिम ग्रोषधि है सम्राट के लिए। मेरा मलिका से निवेदन है कि ग्रंग्रेज़ों से ग्रापकी शत्रुता का मुख्य कारण यही तो है कि उन्होंने शाहज़ादा जवांवक्त को वलीग्रहद मानने से इन्कार किया है ?

मिर्ज़ा इलाहीबख्श : ग्रौर ग्रगर ग्रंग्रेज़ शाहज़ादा जवांवक्त को वलीग्रहद मान लें तब क्या ग्राप सम्राट को इस बात के लिए राजी कर सकती हैं कि वे विद्रोहियों पर से ग्रपनी संरक्षता का हाथ हटा लें ?

मिर्ज़ा जवांवक्त : इसके पहले कि मलिका-ए-हिन्द ग्रापके प्रश्नों का उत्तर दें, एक प्रश्न मैं भी ग्रापसे पूछना चाहता हूं।

मिर्ज़ा इलाहीबख्श : पूछिए।

मिर्ज़ा जवांवक्त : मैं समझता हूं कि क्या ग्रापने शाहज़ादा मिर्ज़ा फ़खरू से ग्रपनी पुत्री का विवाह इसलिए नहीं किया था कि वे एक दिन दिल्ली के राजसिंहासन पर बैठेंगे ?

मिर्ज़ा इलाहीबख्श : जी नहीं, सम्राट ने ग्राज्ञा दी कि मैं ग्रपनी पुत्री का निकाह शाहजादा फ़खरू से कर दूं! सम्राट की ग्राज्ञा का पालन करने से बड़ी खुशी मुझे किस बात में हो

सकती थी ?

मिर्ज़ा जवांवख्त : किन्तु जब मिर्ज़ा फ़खरुद्दीन आपके दामाद हो गए, तब आप यह चाहने लगे कि वही वलीअहद माने जाएं और इसके लिए आप अंग्रेज़ों से सांठ-गांठ करने लगे ! यही बात है न ?

हकीम एहसानुल्लाखां : क्षमा कीजिए वलीअहद, इस बात का उत्तर मैं देता हूं। अपनी सन्तान को सुखी, धन और प्रभुता से सम्पन्न देखने की इच्छा प्रत्येक मां-बाप को होती है। क्या मलिका नहीं चाहतीं कि दूसरे शाहज़ादों को, जो उम्र में आपसे बड़े हैं, वंचित कर आपको अंग्रेज़ भी वलीअहद मान लें ? जब तक सम्राज्ञी नूरजहां ने अपनी पुत्री लाड़ली बेगम का विवाह शाहज़ादा शहरयार से नहीं किया था तब-तक शाहज़ादा शाहजहां उनकी आंखों का तारा था, क्योंकि उनके भाई आसफखां की पुत्री मुमताजमहल का वह पति था, किंतु जब शहरयार नूरजहां का दामाद बना तो उन्होंने उसे ही वलीअहद मनवाने की कोशिश की और आसफखां शाहजहां के लिए प्रयत्न करने लगे। इस तरह भाई-बहन में भी छिड़ गई। अपनी सन्तान प्राणों से भी प्रिय होती है। मनुष्य सन्तान के लिए न्याय-अन्याय भी नहीं देखता। अगर न्यायपूर्वक विचार किया जाए तो कहना होगा कि मलिका भी न्याय-मार्ग पर नहीं हैं।

मिर्ज़ा इलाहीबख्श : और शुद्ध स्वार्थ की दृष्टि से भी देश की वर्तमान स्थिति पर विचार किया जाए, तब भी मलिका-ए-हिन्द आप अनुभव करेंगी कि सम्राट का अंग्रेज़ों के विरुद्ध

किए जानेवाले इस संग्राम में सम्मिलित होना उनके और उनकी संतान के हित में अच्छा नहीं है। यदि विद्रोह असफल हुआ तब तो सर्वनाश है ही और यदि अंग्रेज़ों को देश से निकाला भी जा सका, तब भी मुगल साम्राज्य का पुनरुद्धार तो होगा ही नहीं। जिन शक्तियों के सहारे सम्राट आज इस संग्राम में कूदे हैं, उनके मुंह में खून लग चुकने के कारण वे सम्राट को भी अपनी चिर अतृप्त भूख का ग्रास बनाएंगी। सदा के लिए मुगल साम्राज्य को कब्र खोदकर गाड़ दिया जायगा। जो स्वप्न शिवाजी के उत्तराधिकारी पूर्ण न कर सके, वह पूर्ण हो जाएगा।

हकीम एहसानुल्लाखां : प्रत्येक स्थिति में मुगल राजवंश पर विपत्ति का पहाड़ टूट पड़ेगा। जिस हरे झंडे के नीचे आज भारत के कुछ स्वार्थी और उत्पातप्रिय लोग अंग्रेज़ों से संग्राम छेड़ रहे हैं, उसे वे पांवों से कुचल डालेंगे। मुगल राजवंश के प्रत्येक व्यक्ति को मौत के घाट उतार दिया जाएगा, यदि कोई बच भी जाएगा तो उसकी स्थिति भिखारियों से भी गई बीती होगी। हरम की बेगमों को दासियों का काम करना पड़ेगा। शाहज़ादियों को चक्कियां पीसकर पेट भरना पड़ेगा। राजमहल में रहनेवाली महिलाएं पेट भरने के लिए इज्ज़त बेचती फिरेंगी। कभी कल्पना भी की है इस स्थिति की !

ज़ीनत महल : लेकिन सम्राट को मैं किस मुंह से इस सम्बन्ध में रोकूं जबकि उनको अंग्रेज़ों से संग्राम छेड़ने के लिए उत्तेजित करनेवालों में एक मैं भी हूं। अब तो सम्राट मेरी

बात भी नहीं सुनते।

मिर्ज़ा इलाहीबख्श : यह आपका भ्रम है। संसार में यदि वे किसीकी बात सुनते हैं तो केवल आपकी। आपकी खातिर वे एक बार खुदा की बात को टाल सकते हैं। आपको ही नज़र में रखकर उन्होंने कहा—"मारो भी तुम जिलाओ भी तुम, तुमको क्या कहूं ? तुमको खुदा कहूं या खुदा को खुदा कहूं।" मंत्र-मुग्ध सांप की भांति वह आपके संकेत पर नाचते हैं।

हकीम एहसानुल्लाखां : सम्राट बहुत भोले हैं। संसार में चिराग लेकर खोजते फिरने पर भी उनके जैसा सहृदय व्यक्ति दूसरा नहीं मिलेगा। इसमें सन्देह नहीं कि भारतवासियों के दुःखों के प्रति उनके हृदय में सच्ची सहानुभूति है लेकिन भारतवासियों के दुःख-दर्दों का उपाय यह नहीं है जो सम्राट ने इस समय सोच रखा है। इससे तो भारतवासियों के दुख-दर्द बढ़ेंगे। कुछ स्वार्थी लोगों ने यह हंगामा खड़ा किया है और षड्यंत्र रचकर उन्होंने इसमें उन्हें सम्मिलित कर लिया है। आप ही अब उन्हें इस जाल से बाहर निकाल सकती हैं।

ज़ीनत महल : मुझे इस सम्बन्ध में सोचना पड़ेगा।

मिर्ज़ा जवांबख्त : नहीं अम्मी जान, इस संबंध में अब कुछ भी सोचने की गुंजाइश नहीं है। मैं इस बात पर विश्वास नहीं करता कि अगर हम अंग्रेज़ों को भारत से निकालने में सफल हुए तो भारतवासी मुगल राजवंश के साथ अन्याय करेंगे। केवल औरंगज़ेब को छोड़कर मुगल राजवंश में एक भी

व्यक्ति ऐसा नहीं हुआ, जिसने धर्मान्धता के वशीभूत होकर, सत्ता-मद में अन्धा होकर अथवा अपने भोग-विलास के लिए भारत की प्रजा को व्यर्थ सताया हो। माना कि किसी समय हम भी विदेशी थे और बाबरशाह ने भारत में लाशों की मीनारें खड़ी करके अपना मनोरंजन किया था, लेकिन उन्होंने अपने उत्तराधिकारी को वसीयतस्वरूप नसीहत दी थी कि अपनी प्रजा पर रहम करना, सबको अपने पुत्र समझना और किसीके धार्मिक विश्वासों पर आघात न करना। मुगल साम्राज्य में शांति का दौर-दौरा था, किसान प्रसन्न थे, व्यापारी सम्पन्न थे, रईस प्रसन्न थे। कला, व्यवसाय और साहित्य सभीकी चतुर्दिक् उन्नति हो रही थी। उस समय की स्थिति से आज अंग्रेज़ी शासन के समय की स्थिति का मुकाबला करते हैं तो भारतीयों के हृदय में मुगलों के लिए प्रेम उमड़ आता है। भारतवासी हमें सच्चे दिल से प्यार करते हैं। हम बर्बाद हुए हैं तो अपनी ही निर्बलताओं के कारण। हमें हमारे प्रति भारतवासियों के प्रेम का मूल्य चुकाना है। भले ही हम बर्बाद हो जाएं, मुगल राजवंश में से कोई भी जीवित न बचे लेकिन हम ज़माने द्वारा निर्लज्ज और कायर कहा जाना स्वीकार नहीं करेंगे।

ज़ीनत महल : भावुकता में बहने की आवश्यकता नहीं, जवांबक्त ! हमें सारी बातों पर गम्भीरता से विचार करना होगा।

[सम्राट बहादुरशाह 'ज़फ़र', मिर्ज़ा कोयाश, मिर्ज़ा मुगल, और मिर्ज़ा अबूबकर का प्रवेश। मिर्ज़ा मुगल के हाथ में कुछ समाचार-पत्र और अन्य कागज़ हैं। सम्राट बहादुरशाह 'ज़फ़र' इस समय शाही पोशाक में हैं। तीनों शाहज़ादे सैनिक वेश में हैं। सम्राट के आगमन पर पहले मौजूद सभी व्यक्ति उठकर खड़े हो जाते हैं और उन्हें कोर्निश अदा करते हैं।]

बहादुरशाह : मलिका की राजसभा में किस प्रश्न पर विचार हो रहा है ?

ज़ीनत महल : कुछ हम ही सब लोगों के हित की बातों पर। जब एकान्त होगा तो निवेदन करूंगी।

मिर्ज़ा कोयाश : अगर बातें हमसे गुप्त रखने की हैं तो हम लोग चले जाते हैं।

बहादुरशाह : नहीं शाहज़ादो ! गुप्त बातें सुनने के लिए हम अलग से समय निकालेंगे, पहले हमें आवश्यक कार्य समाप्त कर लेना चाहिए।

ज़ीनत महल : हकीम एहसानुल्लाखां, मिर्ज़ा इलाहीबख्श और जवांवक्त मेरे साथ आएं, मैं भी अधूरी बातों को दूसरी जगह समाप्त करना आवश्यक समझती हूं।

हकीम एहसानुल्लाखां : अगर जहांपनाह अनुमति दें।

बहादुरशाह : हम अनुमति क्यों नहीं देंगे, लेकिन मलिका जो अलग दरबार लगाने लगी हैं, इससे दिल में खटका होता है। खैर, कोई बात नहीं, आप लोग अपनी मजलिस जमाइए। अवकाश पाने पर, यदि मलिका ने अनुमति दी तो हम भी आपकी महफिल में सम्मिलित होंगे। आप लोग जा सकते हैं।

जीनत महल : (कुछ रोषपूर्वक) सम्राट शायद यही चाहते थे कि हम लोग यहां से टलें।

बहादुरशाह :(निर्दोष हंसी हंसता है) बच्चों के समान जो बात हम नहीं कहना चाहते, वह सुनना चाहती हो क्या ? बहादुरशाह 'ज़फ़र' के जीवन में अब कुछ भी छुपा नहीं है जिसे हम छुपाना चाहेंगे वह भी अपनी मलिका से ! शायर तो बेचारा बहुत बेबस होता है। वह अपने शरीर के ही नहीं, दिल, दिमाग और आत्मा के भी वस्त्र उतार डालता है। उसकी शायरी क्या है ? उसकी अपनी नंगी तस्वीर।

मिर्ज़ा अबूबकर ; औरतें ही बुरके में रहना चाहती हैं।

जीनत महल : बुरके कई प्रकार के होते हैं शाहज़ादा अबूबकर ! तुमने मुझपर चोट की है, लेकिन बात इस प्रकार कही कि यह न जान पड़े कि किसीपर सीधा प्रहार किया गया है। यह भी तो वास्तविकता को बुरका पहनाना है। बहुत-सी आंखें इतनी पैनी होती हैं कि वे बुरके के भीतर की वास्तविकता को देख लेती हैं।

मिर्ज़ा अबूबकर : बहुत-सी छुरियां ऐसी होती हैं जो म्यान में रहकर भी प्रहार कर जाती हैं। उनके प्रहार के घाव का पता भी तुरन्त नहीं लगता लेकिन जब दर्द उठता है तभी पता लगता है।

बहादुरशाह : अरे तुम लोग तो बातों की तलवारें चलाने लगे। छोड़ो इन बातों को और अपना-अपना काम करो। समय बहुत मूल्यवान है।

[मिर्ज़ा इलाहीबख्श, हकीम एहसानुल्लाखां, जवांबख्त और ज़ीनत महल का प्रस्थान।]

बहादुरशाह : मिर्जा मुग़ल ! अब हमें ज़रूरी खत सुनाओ :

मिर्ज़ा मुग़ल : पहला पत्र हमारे गुप्तचर ताजुद्दीन का है।

बहादुरशाह : उसे हमने पंजाब के समाचार जानने के लिए भेजा था। उसे हमने यह भी आदेश दिया था कि पंजाब में अंग्रेज़ों की भारतीयों की जो सेनाएं हैं उनसे सम्पर्क स्थापित कर उन्हें शीघ्रतम स्वाधीनता के संग्राम में सम्मिलित होने के लिए उभाड़ो। वहां की प्रजा को भी विप्लव करने के लिए तैयार करो। क्या लिखा है उसने ?

मिर्ज़ा मुग़ल : लिखा है—पंजाब के लोग, विशेषतः राजा, जिनके पास धन भी है, सेनाएं भी और जिनका प्रजा पर भी प्रभाव है, फिरंगियों के हाथ के खिलौने बने हुए हैं। मैं स्वयं इनसे एकान्त में मिला हूं। मैंने उनसे बातचीत की और उनके सामने अपना कलेजा पानी कर दिया। मैंने उनसे कहा—"आप लोग फिरंगियों का साथ क्यों देते हैं और देश की स्वाधीनता के साथ विश्वासघात क्यों करते हैं ? क्या स्वराज्य में आप इससे अच्छे न रहेंगे ? इसलिए कम से कम अपने लाभ के लिए ही आपको दिल्ली के सम्राट का साथ देना चाहिए।" इस पर उन्होंने उत्तर दिया—"देखिए, हम सब मौके की प्रतीक्षा में हैं। सम्राट की आज्ञा मिलने पर इन अंग्रेज़ों को मार डालेंगे।" किन्तु मेरा ख्याल है कि उनपर रत्ती-भर विश्वास नहीं किया जा सकता।

बहादुरशाह : और पंजाब के राजाओं ने हमारे दूतों का वध करके हमारे आदेश का असम्मान किया। हमें पंजाब से बहुत आशाएं थीं, लेकिन हमें असीम निराशा वहां से प्राप्त हुई। हां, आगे क्या लिखा है ताजुद्दीन ने ?

मिर्ज़ा मुग़ल : लिखा है—अंग्रेज़ अधिकारियों ने गुरु तेगबहादुर और गुरु गोविन्दसिंह आदि पर हुए सम्राट औरंगजेब के काल के अत्याचारों की स्मृतियों को ताजा करके पंजाब के पूरे एक वर्ग को इस स्वाधीनता के युद्ध से न केवल उदासीन, अपितु हमारा शत्रु और अंग्रेज़ों का मित्र तथा सहायक बना दिया है। इतना ही नहीं, सम्राट बहादुरशाह के हस्ताक्षरों का एक जाली घोषणा-पत्र भी पंजाब में वितरित किया गया है जिसमें कहा गया है कि इस विशेष वर्ग के सब लोगों को मार डाला जाएगा।

मिर्ज़ा कोयाश : (क्रोध से भरकर) दुष्ट अंग्रेज़ ! ये इन्हीं धूर्तता के शस्त्रों से भारत में पैर जमा पाए हैं। यहां जहांपनाह गली-गली अपने मुंह से घोषणा करते नहीं थकते कि भारत का प्रत्येक वासी चाहे वह किसी धर्म का पालनेवाला हो, हमारी आंखों की पुतली है और उधर अंग्रेज़ों की जाल-साजी उनके नाम से घोषणा-पत्र बंटवा रही है कि भारत के पूरे एक वर्ग को वे मरवा डालेंगे।

मिर्ज़ा मुग़ल : और धिक्कार है उन भारतवासियों की मूर्खता को, जो इस प्रकार के घोषणा-पत्रों पर विश्वास करके देश के शत्रुओं का साथ देती है।

बहादुरशाह : (दुःख भरी सांस लेकर) लेकिन इसके लिए हम

किसे दोष दें। निश्चय ही हमारा इतिहास भी हमारा शत्रु है। एक-दो व्यक्तियों के कारण विभिन्न कौमों के बीच गहरी दरारें पड़ जाती हैं, जिन्हें पाटना बहुत कठिन हो जाता है। बहुत कठिन हो जाता है क्योंकि देश के शत्रु इतिहास की शिक्षा देने के नाम पर इन्हीं दुर्भाग्यपूर्ण घटनाओं को उभार-उभारकर सामने रखते हैं। हम युग-युग के लिए एक-दूसरे के शत्रु बने रहते हैं। भारत के जीवन का यह नासूर न जाने कब भरेगा।

मिर्ज़ा अबूबकर : जब तक अंग्रेज़ भारत में है तब तक इस नासूर को ये लोग कुरेदते रहेंगे। उनकी उपस्थिति उस नासूर को बढ़ाती ही रहेगी।

बहादुरशाह : लेकिन जब तक इस नासूर को हम भरेंगे नहीं तब तक अंग्रेज़ों को भारत से बाहर निकाल भी कैसे पाएंगे? हमारी शक्ति तो हिन्दू, मुसलमान और सिख आदि सारी कौमों की एकता ही है। इसी के बल पर हम अंग्रेज़ों पर विजय पा सकते हैं। हम समझते हैं कि अंग्रेज़ों के अत्याचार इस नासूर के लिए ओषधि सिद्ध होंगे लेकिन पंजाब के समाचारों ने हमें दुश्चिन्ता में डाल दिया है।

मिर्ज़ा अबूबकर : जहांपनाह, मैं तो बहुत अज्ञानी और अपराधी आदमी हूं—इस सम्बन्ध में आपको सन्तोष देनेवाली बात क्या कह सकता हूं, फिर भी मुझे कहना ही पड़ता है कि अंग्रेज़ों को चलने दीजिए अपनी चालें, हमें तो सचाई और ईमानदारी से अपना काम किए जाना चाहिए। हमारा

दिल अगर साफ होगा तो लोग हमपर विश्वास करेंगे। आज नहीं तो कल, हमारे जीते जी नहीं तो हमारे मर जाने पर।

बहादुरशाह : बहुत पते की बात कही तुमने अबूबकर ! सचाई और ईमानदारी में बहुत शक्ति होती है। प्रेम से प्रेम की उत्पत्ति होती है। हमारे सूफी और हिन्दुओं के संत इस सत्य को प्रत्यक्ष करते रहे हैं। सच्चा मानव सम्प्रदायों की सीमा में बंधा नहीं होता। गुरु नानक ने कहा है :

बंदे इश्क खुदाय दे, हिन्दू मुसलमान।
दावा राम रसूलकर, लड़दे बेईमान॥

मिर्ज़ा मुग़ल : जहांपनाह, यह पत्र तो अधूरा ही रह गया।

बहादुरशाह : हां, हां, सुनाओ।

मिर्ज़ा मुग़ल : लिखा है—पंजाब में अंग्रेज़ अधिकारी मेरठ और दिल्ली की घटनाओं से बहुत सावधान हो गए। तुरन्त ही सभी छावनियों में बहुत चतुराई से भारतीय सैनिकों से बनी पल्टनों को निश्शस्त्र करने का कार्य उन्होंने प्रारम्भ कर दिया। लाहौर के निकट मियां मीर में पंजाब-भर में सबसे अधिक अंग्रेज़ों की भारतीय सैनिकों से बनी सेना थी। यह सेना विद्रोह करने के अवसर की प्रतीक्षा में थी लेकिन १३ मई को अचानक ही इन्हें परेड पर बुलाया गया। अंग्रेज़ों ने अपना तोपखाना ऐसे स्थान पर रखा कि अगर भारतीय सेना ज़रा भी गड़बड़ करे तो उसे भून डाला जाए। इसके पश्चात् इस सेना के शस्त्र रखवा लिए गए और इसे बर्खास्त कर दिया गया।

मिर्ज़ा कोयाश : तो इस प्रकार अंग्रेज़ों ने लाहौर पर से अपना प्रभुत्व समाप्त होने से बचा लिया।

बहादुरशाह : अब तो तुम मानोगे कि मेरठ के सैनिकों ने समय से पूर्व अंग्रेजों के विरुद्ध संग्राम छेड़कर हमारे कार्य को कितनी हानि पहुंचाई है।

मिर्ज़ा अबूबकर : लेकिन ये निश्शस्त्र सैनिक निश्चित रूप से दिल्ली आएंगे । इस तरह हमारी सेना में वृद्धि होगी। हमारे शस्त्र बनाने के कारखाने अब चुस्ती से काम करने लगे हैं। हम इन सैनिकों को शस्त्र दे सकेंगे।

बहादुरशाह : यह सब होगा, अबूबकर, लेकिन आग की लपटें जगह-जगह एक साथ फैलतीं तो उसमें अंग्रेजी सत्ता टुकड़ों टुकड़ों में बंटी रहकर जलकर भस्म हो जाती। खैर, आगे पढ़ो क्या लिखा है ?

मिर्ज़ा मुग़ल : लिखा है—फीरोजपुर में भी १३ मई को अंग्रेज अधिकारियों ने भारतीयों से बनी अपनी सेना को परेड पर बुलाया, किन्तु सैनिकों ने परेड पर न जाकर अंग्रेजों के बंगलों में आग लगा दी। वहां एक बड़ा शस्त्रागार भी था जिसे भारतीय सैनिकों के हाथ न पड़ने देने के लिए स्वयं अंग्रेज़ों ने आग लगा कर खाक कर दिया। यह सेना अब दिल्ली की ओर रवाना हो गई है।

मिर्ज़ा अबूबकर : (अचानक उत्तेजित होकर) शाबाश, भारतीय सैनिक ज़िंदाबाद ! सम्राट बहादुरशाह की जय !

बहादुरशाह : क्या हुआ, अबूबकर, कभी-कभी तुम्हारे सर पर जनून सवार हो जाता है।

मिर्ज़ा अबूबकर : जनून नहीं बादशाह सलामत, मुझपर एक जिन हावी हो जाता है। खैर आगे सुनाओ, दीवाने आला शाहज़ादा मिर्ज़ा मुगल !

मिर्ज़ा मुग़ल : आगे लिखा है—पेशावर में २४, २७ और ३१ नम्बर की भारतीय सेनाओं के शस्त्र रखवा लिए गए क्योंकि वहां गोरी सेना भारतीयों से कहीं अधिक थी और गोरी सेना ने भारतीय सेना को अचानक ही घेर लिया। स्वतन्त्रता-प्रेमी, वीर और साहसी अफगान और अफरीदी कबीलों को भी अंग्रेज़ों ने बड़ी रकमें देकर खरीद लिया है। उन्हें वे हमारे विरुद्ध लड़ने के लिए अपनी सेना में भरती कर रहे हैं।

मिर्ज़ा अबूबकर : जिन अंग्रेज़ों ने अफगानों पर तरह-तरह के अत्याचार किए, पठान महिलाओं को बेइज़्ज़त किया, आज वे ही अंग्रेज़ों के रक्षक बने हैं।

मिर्ज़ा कोयाश : हां भाई, सोना मनुष्य का ईमान भी खरीद लेता है।

बहादुरशाह : आगे सुनाओ।

मिर्ज़ा मुग़ल : मरदान में ५५ नम्बर की भारतीय सेना थी। इस सेना का अंग्रेज़ अधिकारी सज्जन और उच्च विचार का था। वह नहीं चाहता था कि उसकी सेना के शस्त्र छीने जाएं लेकिन उसकी बात उच्च अधिकारियों ने नहीं मानी तो उसने आत्महत्या कर ली। सेना को समाचार मिला कि उन्हें निश्शस्त्र करने के लिए पेशावर से गोरों की सेना आ रही है तो वह भड़क उठी। उसने खज़ाना लूट लिया

और शस्त्रों से सज्जित हो दिल्ली की ओर रवाना हो गई।

मिर्ज़ा कोयाश : तो सभी जगह 'दिल्ली चलो' का नारा गूंज उठा है। अब भारत में अंग्रेज़ों के दिन इने-गिने ही रह गए हैं।

मिर्ज़ा मुग़ल : आगे भी तो सुनिए। अंग्रेज़ सेनापति निकलसन ने अपनी अश्वारोही सेना लेकर इस सेना का पीछा किया। उसके साथ तोपखाना था। उसने भारतीय सैनिकों को घेर-कर उन्हें तोप के गोलों से उड़ा दिया। भारतीय सैनिकों के हाथ, पैर, सर हवा में उड़ने लगे। इस प्रकार पूरी पल्टन स्वतन्त्रता की बलिवेदी पर चढ़ गई।

मिर्ज़ा अबूबकर : ऐसे समाचार सुनकर मेरा खून तो मस्तिष्क की तरफ दौड़ने लगता है। ओह, ये सारे जुल्म हम चुप-चाप सह रहे हैं।

बहादुरशाह : बस पत्र समाप्त हो गया ?

मिर्ज़ा मुगल : नहीं जहांपनाह ! आगे लिखा है—१० नम्बर की भारतीय सेना को किश्ती में बिठाकर सिंध नदी में उतार दिया गया, जिसमें बाढ़ आ रही थी। बाद में इस नाव को डुबा दिया गया। लाहौर की २६ नम्बर की पल्टन ने विद्रोह किया। अंग्रेज़ों को समाचार मिला तो उन्होंने तुरन्त गोरी सेना एकत्र की और तोपों से विद्रोहियों पर आक्रमण किया। सैकड़ों सिपाही गोलों के शिकार हुए। बचे हुए सैनिक प्राण-रक्षा के लिए भाग खड़े हुए और रावी नदी पार करने का प्रयत्न करने लगे। इधर अंग्रेज़, जो संख्या में कई गुने थे, उनपर गोलियां बरसाने

लगे। अंत में दो सौ बयासी भारतीय सैनिक बंदी बनाए गए और ५० रावी के गर्भ में समा गए। उन बचे हुए सैनिकों को घनघोर वर्षा में अजनाले लाया गया। मध्य रात्रि में इन्हें तहसील में बन्द किया गया। ६६ सैनिक तहसील के छोटे-से गुंबद में बन्द कर दिए गए। प्रातःकाल इन्हें बाहर निकाल-निकाल कर तोप के गोलों से उड़ाया जाने वाला था लेकिन जब गुंबद में बन्द किए गए सैनिकों को निकाला जाने लगा तो उनमें से कोई हिला भी नहीं क्योंकि हवा न मिलने से पहले ही वे अल्ला मियां के प्यारे हो चुके थे। पास में एक कुआं था उसमें २८२ लाशें डाल दी गईं और कुएं को मिट्टी से भर दिया गया।

मिर्ज़ा अबूबकर : (पागलों की तरह) वह मारा ! मिल गया, बस मिल गया, भेड़िया, भेड़िया, मनुष्य भेड़िये से भी भयानक, हः हः हः ! अब मुझे मत रोको ! ऐसे कुएं बहुत बन सकते हैं ! हः हः बनेंगे। अवश्य बनेंगे !

बहादुरशाह : दिमाग फिर गया है तुम्हारा, अबूबकर !

मिर्ज़ा अबूबकर : (अपना सिर टटोलकर देखता हुआ) दिमाग, हां, है तो सही कुछ लेकिन मुझे अनुमति दीजिए कि इस दिमाग को कहीं फेंक आऊं।

[मिर्ज़ा अबूबकर तेजी से बाहर जाने लगता है और बाहर से आते हुए मिर्ज़ा जवांबक्त से टकरा जाता है। दोनों हो तेज़ी में होने के कारण टकराने से गिर पड़ते हैं।]

मिर्ज़ा अबूबकर : (उठकर बैठता हुआ) मैं चला तो था किसी पहाड़ से टकराने और सामने आ पड़े आप वलीअहद !

एक दिन मैंने समझा था जो वलीअहद होता है वह बहुत भाग्यवान होता है, इसलिए मुझे भी भाग्यवान होना चाहिए। लेकिन आज देखा, एक वलीअहद एक छोटी-सी टक्कर से गिर जाते हैं। वलीअहद ! आप मुझसे अप्रसन्न हैं क्योंकि मुझे एक दिन आपको वलीअहद कहा जाना पसन्द नहीं था—स्वीकार नहीं था—मुझे क्या सभी शाहज़ादों को नहीं था—लेकिन आज हम सारे शाहज़ादे अपने हृदय के खून से आपको वलीअहद बनाएंगे। है न आपके पास तलवार ? छेदो न कलेजे में। थोड़ी-सी नोंक ही घुसाना ताकि केवल तुम्हारे मस्तक पर टीका लगा सकूं। हिंदू रीति से। आपको हिंदुस्तान पर राज करना है न, इसलिए हिंदू रीति से ही आपका टीका होगा।

मिर्ज़ा जवांवक्त : (उठता हुआ) यह हमारी अन्तिम टक्कर है, भाई जान ! लोग मुगल साम्राज्य को मिट्टी में मिलाने के लिए हमें लड़ाते रहे हैं। वलीअहदी का बोझा मैं सदा के लिए अपने सर पर से दूर फेंकता हूं। (अपनी पगड़ी उतारकर फेंकता हुआ) जब इसे देखकर भाइयों के दिल में जलन होती है तो यह मुझे हिमालय पर्वत से भारी जान पड़ती है। उठाओ इसे। रखो भाईजान अपने सर पर। आप नहीं रखते तो मिर्ज़ा कोयाश साहब के सर पर। वे सबसे बड़े हैं। अंग्रेजों ने इन्हें वलीअहदी का लोभ भी दिया था।

बहादुरशाह : मेरे अच्छे शाहज़ादो ! यह समय वलीअहदी के लिए झगड़ने का नहीं है। सब मेरे पास आओ। अंग्रेज़

कौन होते हैं किसी को वलीअहद बनानेवाले ! समय अपने हाथ से योग्यतम व्यक्ति के मस्तक पर ताज रखेगा । अभी तो हम सबको सर पर कफन बांधकर वतन पर अपना सर चढ़ाने की तैयारी करनी चाहिए । इस समय तो तुम सब आपस में हाथ मिलाओ । दिल से दिल मिलाओ ।

[मिर्ज़ा अबूबकर और मिर्ज़ा जवांवक्त गले मिलते हैं ।]

[पटाक्षेप]

दूसरा अंक

पहला दृश्य

[स्थान—पूर्ववत् । समय—संध्या । सम्राट बहादुरशाह 'ज़फ़र' एक मसनद के सहारे बैठे हुए हुक्का पी रहे हैं । उनके हाथ में उर्दू भाषा का एक समाचारपत्र है जिसे वे पढ़ रहे हैं । ज़ीनत महल प्रवेश करती है । उसका अनुगमन एक दासी कर रही है जिसके हाथों में शराब से भरी एक सुराही और शराब पीने का पात्र है। वह सुराही और पात्र रखकर चली जाती है । बहादुरशाह 'ज़फ़र' समाचारपत्र से आंखें हटाकर ज़ीनत महल की तरफ देखते हैं, तब उनके चेहरे पर प्रसन्नता के भाव दृष्टिगोचर होते हैं, लेकिन जैसे ही सुराही और प्याले पर नज़र पड़ती है त्योंही उनकी आंखों में रोष दिखाई देता है।]

बहादुरशाह : मलिका !

ज़ीनत महल : जहांपनाह ! साकी सेवा में उपस्थित है।

बहादुरशाह : यह ठीक है कि जब हमारे पास कोई काम न था, तब हमें साकी और जाम की आवश्यकता अनुभव होती थी, लेकिन अब तो हम आठों पहर एक दूसरी ही मदिरा पिए रहते हैं। रण के मद में हमारी आंखें सदा ही लाल रहती हैं।

ज़ीनत महल : (प्याले में मदिरा ढालती हुई) किन्तु जहांपनाह, शरीर की शक्ति की भी एक सीमा होती है। रात-दिन रण के मद

में चूर रहना और अपने आराम और मनोरंजन का तनिक भी ध्यान न रखना क्या उचित है, आलीजाह ! आप अपना ध्यान न रखें तो मुझे तो हुज़ूरेआला का ध्यान रखना ही चाहिए।

[ज़ीनत महल मदिरा का पात्र भरकर बहादुरशाह 'ज़फ़र' के मुंह की तरफ बढ़ाती है, लेकिन वे उसे अपने हाथ में लेकर नीचे रख देते हैं।]

ज़ीनत महल (आंखों में नशा भरकर) जहांपनाह ने आज तक साकी का अपमान नहीं किया।

बहादुरशाह : ज़ीनत, तुम साकी भी हो और जाम भी। तुम्हें देख लिया, इतना ही पर्याप्त है हमें नशे में चूर होने के लिए। ले जाओ अपनी यह हलकी मदिरा।

ज़ीनत महल : आप थक जाते हैं कार्य करते हुए। नित्य दरबार करना, शासन-प्रबन्ध की छोटी-बड़ी बातों पर विचार करना, युद्ध की गतिविधि की जानकारी प्राप्त करना, नगर में हाथी पर बैठकर जाना और नागरिकों के सुख-दुःख सुनना और सैनिक शिविरों में पहुंचकर सैनिकों को आश्वासन और प्रोत्साहन देना आदि कितने कार्य करते हैं आप ! आपका बुढ़ापे से जीर्ण शरीर क्या इतना कार्य-भार सम्हाल सकता है? इसलिए ज़ीनत साकी बनकर आई है आपको नवीन स्फूर्ति प्रदान करने के लिए।

[ज़ीनत महल मदिरा-पात्र नीचे से उठाकर फिर बहादुरशाह 'ज़फ़र' के मुंह से लगाने का यत्न करती है।]

बहादुरशाह : (अपने हाथ से ज़ीनत महल के हाथ से मदिरा-पात्र लेकर

फिर नीचे रखते हुए) ज़ीनत ! हमें किसीके स्नेह से दिए हुए पात्र को अस्वीकार करते हुए हार्दिक खेद होता है, विशेष रूप से उसके हाथ का जो हमारे जीवन का जीवन है, लेकिन सत्य यह है कि हमने शपथ ले ली है कि अब इस अंगूर की बेटी को मुंह नहीं लगाएंगे । यह मुंह लगकर तुरन्त सर चढ़ती है ।

ज़ीनत महल : लेकिन हकीम एहसानुल्लाखां कहते थे कि आपने अचानक शराब छोड़ दी है, यह आपके स्वास्थ्य के लिए हितकर नहीं है ।

बहादुरशाह : कदाचित् हमें होश में न आने देने में हकीमजी का कुछ लाभ हो, लेकिन तुम्हें क्या लाभ है मलिका ?

ज़ीनत महल : मेरा आपसे पृथक् अस्तित्व ही क्या है ? आपके हित में ही मेरा हित है ।

बहादुरशाह : हमारे हित में ही यदि तुम्हारा हित है तो तुम मुझे जीवन-भर बेहोश न रखतीं और अब जब हम होश में आए हैं तब तुम हमें फिर से बेहोश करने का यत्न न करतीं ।

ज़ीनत महल : जहांपनाह की नज़रें दासी पर से फिर गई हैं तो मैं यहां से चली जाती हूं और फिर कभी मुंह न दिखाऊंगी ।

[ज़ीनत महल जाने लगती है । बहादुरशाह 'ज़फ़र' उठकर खड़े होते हैं और बढ़कर ज़ीनत महल का हाथ पकड़ते हैं]

बहादुरशाह : जीवन का बहुत थोड़ा मार्ग ही अब हमें पार करना रह गया है । इन अन्तिम घड़ियों में तो न रूठो ज़ीनत । वैसे तो रूठी हुई प्रियतमा को मनाने में भी आनन्द प्राप्त

होता है लेकिन अब हमारे रूठने और मनाने के दिन समाप्त हो गए हैं। यौवन के जो दिन हमने बेहोशी में काट दिए आज उनके स्मरण से भी हमें कष्ट होता है। शुक्र है खुदा का कि अब हमें अपने वास्तविक कर्तव्य का ध्यान आया है लेकिन तुम फिर पुराने पागलपन को जीवित करना चाहती हो ! इसपर हमें आश्चर्य भी होता है और दुःख भी ।

[ज़ीनत जाते-जाते रुक जाती है ।]

जीनत महल : लेकिन, जहांपनाह ! कई दिनों से मैं आपसे बहुत गंभीर चर्चा करना चाहती थी लेकिन आप रुख ही नहीं मिलाते । एक ही अवसर आपसे खुलकर बात करने का मुझे प्राप्त हो सकता है जब मैं साकी बनूं और आप पिएं ।

बहादुरशाह : छिः ज़ीनत ! तुम समझती हो कि हमसे बात करने के लिए तुम्हें शराब का सहारा लेना आवश्यक है । आज भारत पर अंग्रेज़ों का जो प्रभुत्व स्थापित हो सका है, इसका कुछ उत्तरदायित्व इस शराब पर भी है । जब मुगल सम्राटों का स्थान रणभूमि में होना चाहिए था तब वे सुकुमार साकियों के हाथ से जाम पीने में महलों में समय व्यतीत करते रहे; जब उनके हाथ में तलवार होनी चाहिए थी तब उनके हाथ में शराब का प्याला रहा । हम लोग होश में रहते तो संसार की किसी शक्ति का साहस न था कि वह मुगल साम्राज्य की एक गज़ भूमि पर भी अधिकार कर पाती । इस प्राणघातक वस्तु की दासता में हम नहीं पड़ेंगे,

कभी नहीं पड़ेंगे।

[बहादुरशाह 'ज़फ़र' ज़ीनत महल का हाथ छोड़कर फर्श पर रखी हुई सुराही को लात मारते हैं।]

ज़ीनत महल : जहांपनाह ने ज़ीनत को अपनी नज़रों से गिरा दिया है।

बहादुरशाह : नहीं ज़ीनत, तुम अपने-आपको पतन के पथ पर न ले जाओ तो किसकी शक्ति है जो हमारी नज़रों में तुम्हारे सम्मान को कम कर सके। हम तुमको साकी के रूप में नहीं देखना चाहते। हम तो तुमको उस रूप में देखना चाहते हैं जिसे हिन्दू लोग रणचण्डी कहते हैं जो सिंह की सवारी करती है, जिसके हाथ में तलवार होती है, जो असुरों का रक्त पीती है। बहुमूल्य वस्त्राभूषणों में सजधजकर अपने सौन्दर्य के आकर्षण से अपने प्रियतम पर विजय प्राप्त करने की आकांक्षा रखने वाली रमणी अब हमसे सम्मान नहीं पा सकती। हम तुम्हें राजपूत, बालाओं की भांति रण के साज में सजकर रणभूमि में पदार्पण करने वाली देखना चाहते हैं।

ज़ीनत महल : मैं जो कुछ हूं आपकी ही बनाई हुई हूं।

बहादुरशाह : लेकिन हम पहले जो थे, वे तुम्हारे बनाए हुए थे, और आज जो बन गए हैं उसमें भी किसी सीमा तक तुम्हारा हाथ है। तुमने ही कहा था, "अंग्रेज़ हमारे शत्रु हैं, वे हमारे साम्राज्य को निगल गए हैं और हमारे नाम-मात्र के राज-चिह्नों से भी वे हमें वंचित करके छोड़ेंगे।" अब जब तुम्हारी प्रेरणा से हमने अंग्रेज़ों से युद्ध छेड़ दिया है तो तुम

हमें शराब के नशे में गर्क करना चाहती हो ?

ज़ीनत महल : मैं जानती हूं, जहांपनाह, कि मैंने ही आपको इस भयानक स्थिति में डाल दिया है ।

बहादुरशाह : तुम इसे भयानक स्थिति कहती हो ? इसमें भयानकता क्या है ? तोपों का गर्जन सुनकर हमें वास्तविक आनन्द प्राप्त होता है। आज हमारे पौरुष की प्रसन्नता की सीमा नहीं है। मुगल राजसत्ता की ओर से आज से ७२ वर्ष पूर्व एक हलका-सा प्रयास अंग्रेज़ों को भारत से निकालने के लिए हुआ था और साहस, दूरदिशता के अभाव और पारस्परिक विद्वेष ने जब उस प्रयास को सफल न होने दिया तो हम लोग शान्त बैठ गए । ये जानवर भारत के नन्दन वन में खुलकर विचरने लगे। वे चर गए मुगल साम्राज्य को और भारत की सुख-समृद्धि को। आज इनको हम अपने चमन से निकाल बाहर करना चाहते हैं तो ये हमपर खूनी पंजों से आक्रमण कर रहे हैं। ठीक है, आज अंग्रेज़ों की तोपें हमपर अग्निवर्षा कर रही हैं, हमारी तोपें इसका उत्तर दे रही हैं किन्तु यह स्थिति हमें भयानक नहीं स्वाभाविक जान पड़ती है । जब हमारी सेनाएं रणनाद से आकाश को प्रकंपित करते हुए आगे बढ़ती हैं तो हमारे आनन्द की सीमा नहीं रहती।

ज़ीनत महल : लेकिन, जहांपनाह, जिस उद्देश्य से यह खूनी खेल खेलने की प्रेरणा मैंने आपको दी, वह तो पूर्ण नहीं हो रहा। मैं चाहती थी कि आप भारत के वास्तविक सम्राट बनें, किन्तु बात उलटी ही हो रही है ।

बहादुरशाह : उल्टी कैसे हो सकती है ?

ज़ीनत महल : जहांपनाह ने स्वयं ही मुगल सत्ता के मृत्यु-लेख पर हस्ताक्षर कर दिए हैं।

बहादुरशाह : यह तुम क्या कह रही हो ? तुम्हें ऐसा भ्रम क्यों हुआ है ? अलीगढ़, मैनपुरी नसीराबाद, बरेली, शाहजहांबाद, मुरादाबाद, बदायूं, आज़मगढ़, गोरखपुर, बनारस, जौनपुर, इलाहाबाद, कानपुर, लखनऊ, झांसी, नीमच आदि सभी स्थानों पर अंग्रेज़ों के विरुद्ध विप्लव की जो ज्वाला प्रज्वलित हुई है, उसमें सभी स्थानों पर विप्लवी हमारे झंडे के नीचे एकत्र हुए हैं। नाना साहब ने कानपुर में और महारानी लक्ष्मीबाई ने झांसी में घोषणा की : 'खल्क खुदा का राज बादशाह का।' सभी स्थानों पर हमारे सम्मान में १०१ तोपों की सलामी दी गई। रुहेलखंड के रुहेलों ने भी, जो लम्बी अवधि से हमारे शत्रु रहे हैं, हमारी प्रभुसत्ता स्वीकार कर अंग्रेज़ों से युद्ध प्रारम्भ किया है। जहां-जहां युद्ध प्रारम्भ हुआ सैनिक 'चलो दिल्ली' का नारा गुंजाते हुए वहां से चल पड़े और हमारी सेवा में उपस्थित हो गए।

ज़ीनत महल : फिर भी जहांपनाह !...

बहादुरशाह : पहले हमारी पूरी बात सुनो ! जहां-जहां अंग्रेज़ों के खज़ानों पर विप्लवी अधिकार कर सके उन्हें उन्होंने लाकर हमारे खज़ाने में जमा किया, जिससे युद्ध की आवश्यकताओं की पूर्ति की जा रही है। हमें अपने व्यक्तिगत सम्मान की चाह नहीं है, लेकिन जब भारत के विभिन्न

स्थानों से आई हुई सेनाएं भारत-सम्राट बहादुरशाह 'ज़फ़र' की जय' के नारों से दिशाओं को गुंजित करती हैं तो हम फूले नहीं समाते । असल में यह सम्मान हमारी अकिंचन हस्ती का नहीं है बल्कि उस वीरता, उदारता और स्नेह का है जो हमारे पूर्वजों के चरित्र की विशेषताएं हैं। हमें सन्तोष है, बल्कि इसपर गर्व है कि हमारे एक संकेत पर सहस्रों सैनिक अपने प्राण लुटाने को प्रस्तुत हैं।

ज़ीनत महल : और जहांपनाह इन सैनिकों के हाथ में बंदी हैं। सम्राट की जय ये अवश्य बोलते हैं लेकिन सम्राट के हाथ में अधिकार न रखकर स्वयं ही भारत के वास्तविक शासक बने हुए हैं। इन्होंने सेना तथा राज्य की प्रबंधकारिणी समिति के नाम से दस सदस्यों की समिति बनाकर सम्पूर्ण सत्ता अपने हाथ में कर ली है।

बहादुरशाह : नहीं, नहीं, हमने स्वयं ही राज्य-प्रबन्ध की सुव्यवस्था और युद्ध के सुचारु संचालन के लिए इस समिति को स्थापित किया है।

ज़ीनत महल : आप ऐसा कहकर अपने चित्त को आश्वस्त कर सकते हैं लेकिन वास्तविकता यह है कि आज सम्राट सैनिकों के हाथ की कठपुतली हैं, जिस प्रकार सम्राट औरंगज़ेब के पश्चात् सभी मुगल बादशाह अपने किसी वज़ीर या सेनापति के हाथ के खिलौने थे। ज़ीनत महल अंग्रेज़ों को भारत से निर्वासित देखना चाहती है लेकिन इस मूल्य पर नहीं कि सम्राट के हाथ में नाम-मात्र को भी सत्ता नहीं रहे।

बहादुरशाह : यही बात समझाने के लिए तुम हमें आज जाम पिलाकर पहले हमारे होश छीन लेना चाहती थीं मलिका ! जानता हूं, ज़ीनत, कि तुम अधिकार की—प्रभुता की भूखी हो—और यह स्वाभाविक भी है, शायद हमारे मन में भी प्रभुता की लिप्सा हो, लेकिन जो अधिकार और सम्मान सेवा, स्नेह और उदारता से प्राप्त किया जाता है, वही स्थायी होता है। हम प्रारम्भ ही से जानते रहे हैं कि जो उत्तरदायित्व प्रजा ने हमपर सौंपा है, वह सरल नहीं है। शाहज़ादों में अंग्रेज़ों से युद्ध करने का उत्साह है लेकिन उनमें वह चरित्र-बल नहीं जो शासन-प्रबन्ध और युद्ध-संचालन में आवश्यक है। वे समझते हैं, घर बैठे-बिठाए राज्य फिर से प्राप्त हो जाएगा।

ज़ीनत महल : शाहज़ादों की अयोग्यता का दंड आप क्यों भुगतें?

बहादुरशाह : यदि हम ही योग्य होते तो शाहज़ादों को भी योग्य बनाते न ? ज़ईफ़े से कांपनेवाले हमारे हाथों में न तो रण-भूमि में तलवार थामने की। शक्ति है, न शासन-प्रबन्ध का दण्ड थामने की। हमें ऐसा उपाय करना आवश्यक हो गया कि शासन-प्रबन्ध और युद्ध-संचालन व्यवस्थापूर्वक हो सके। इसीके लिए हमने इस समिति का संगठन किया है। हमें इसके लिए विवश नहीं किया गया। यह सच है कि मुगल-साम्राज्य के उस विशाल और भव्य भवन की, जो संसार को चकित किए हुए था, दीवारें धूल में मिल चुकी हैं, अब उसे पुनर्निर्मित नहीं किया जा सकता। अतः इस समय अंग्रेज़ों से जो युद्ध हो रहा है वह मुगल साम्राज्य

को पुनःस्थापित करने के लिए नहीं है। वह अब कभी स्थापित नहीं होगा। होगा तो उसका रूप ही कुछ और होगा।

ज़ीनत महल : क्या रूप होगा, जहांपनाह !

बहादुरशाह : अब जो राज्य स्थापित होगा वह प्रजा का राज्य होगा। प्रजा ही इस युद्ध को लड़ रही है, इसलिए हमने शासन-प्रबन्ध और युद्ध-संचालन दोनों कार्य प्रजा को सौंप दिए हैं। समिति की स्थापना इसी कारण हुई है। समिति ने यह स्वीकार किया है कि प्रत्येक अन्तिम निर्णय पर हमारी स्वीकृति आवश्यक है।

ज़ीनत महल : किन्तु यदि समिति और आपमें मतभेद हुआ तो क्या वास्तव में समिति आपके आदेश का पालन करेगी ? मैं कहती हूं, नहीं। इसलिए मैं यह भी कहती हूं कि प्रजा के प्रतिनिधियों को शासन में सम्मिलित करना अपने सर्व-नाश को आमन्त्रित करना है।

बहादुरशाह : मुझे तरस आता है तुम्हारी नादानी पर ज़ीनत। हमें अंग्रेज़ों की दासता तो स्वीकार हो जाती है और अपने ही देश के व्यक्तियों का शासन-प्रबन्ध में सम्मिलित होना नहीं ! यह तुम्हारी विचित्र मनोभावना है। ज़ीनत, पहले तो तुम ऐसी नहीं थीं। जान पड़ता है, तुम्हें बहकाया जाता है।

ज़ीनत महल : जहांपनाह, मुझे भय है कि अंग्रेजों के विरुद्ध यह विप्लव सफल नहीं होगा।

बहादुरशाह : हम इस विप्लव की दुर्बलताओं से अपरिचित नहीं

हैं। फिर भी हम इस विप्लव की अपार शक्ति को भी जानते हैं। पंजाब के कुछ राजा, नेपाल के महाराणा आज अंग्रेज़ों को धन, जन और शस्त्रों से सहायता दे रहे हैं लेकिन भारत की प्रजा एकमत से विप्लव के साथ है। ग्वालियर के महाराजा ने विप्लव का साथ नहीं दिया लेकिन उनकी सेना विप्लवियों की समर्थक है, इन्दौर में भी वहां के महाराजा की इच्छा के विरुद्ध सेना ने अंग्रेज़ों के विरुद्ध विद्रोह कर दिया है, राजस्थान के कुछ राजाओं ने अंग्रेजों की सहायता के लिए जो अपनी सेनाएं भेजी थीं वे स्वाधीनता के समर्थकों में सम्मिलित हो गई हैं। पूरा रुहेलखण्ड, अवध, गंगा-जमुना के बीच का दोआब—कानपुर और इलाहाबाद सहित—अब स्वतन्त्र है। महारानी लक्ष्मीबाई ने झांसी में अंग्रेज़ी शक्ति को धूल चटा दी है, बिहार का सिंह कुंअरसिंह अंग्रेज़ों का शिकार करने की तैयारी में है। यहां दिल्ली में भी हमारे सैनिक अंग्रेज़ों को इतने दिनों से छका रहे हैं। विप्लव की सफलता असम्भव है, यह सोचना कहां तक उचित है?

ज़ीनत महल : किंतु जहांपनाह, इन विपरीत परिस्थितियों में अंग्रेज़ों के उत्साह में, उनकी आशा में, उनके प्रयत्नों में रत्ती-भर कमी नहीं आई है। उनकी अन्तिम विजय पर केवल उन्हें ही विश्वास नहीं है अपितु भारत के राजाओं को विशेष रूप से और प्रजा में भी अनेक को उनकी अजेयता पर भरोसा है। अन्यथा हैदराबाद के निज़ाम, राजस्थान के राजा लोग, ग्वालियर, इन्दौर और बड़ौदा

के मराठा नरेश आज तक कभी के हमारे झंडे के नीचे दिखाई देते। जहां-तहां अंग्रेज़ों के विरुद्ध विद्रोह तो उठ खड़ा हुआ है और हिंसक सैनिकों एवं नागरिकों की भीड़ों ने अंग्रेज़ों को, जिनमें स्त्री-बच्चे भी थे, क्रूरता से मौत के घाट उतार दिया है किन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि अंग्रेज़ों की सत्ता समाप्त हो गई है। भारतवासियों के रोष के प्रथम अन्धड़ को हानि सहकर उन्होंने संभाल लिया है। उनका इतने दिनों तक इस विपत्ति के तूफान में टिके रहना ही उनकी विजय है, और ज्यों-ज्यों हमें पूर्ण सफलता प्राप्त करने में विलम्ब हो रहा है, अर्थात् युद्ध लम्बा हो रहा है, अंग्रेज़ों की स्थिति में सुधार हो रहा है। मुझे आशंका हो रही है कि अन्त में अंग्रेज़ ही विजयी होंगे।

बहादुरशाह : खुदा को यही मंज़ूर है तो यही होने दो।

ज़ीनत महल : वह तो सम्भवतः होगा ही लेकिन क्यों नहीं हम अपनी रक्षा का प्रबन्ध करें?

बहादुरशाह : रक्षा का प्रबन्ध किस प्रकार?

ज़ीनत महल : अंग्रेज़ों से सन्धि करके। मिर्ज़ा इलाहीबख्श और हकीम एहसानुल्लाखां कहते हैं कि उन्हें विश्वस्त रूप से ज्ञात हुआ है कि अंग्रेज़ शासक-दल का विश्वास है कि सम्राट स्वेच्छा से इस विप्लव में सम्मिलित नहीं हुए, उन्हें विद्रोहियों ने बलपूर्वक अपनी तरफ खींच लिया है। अंग्रेज़ यह भी वचन देने को प्रस्तुत हैं कि यदि सम्राट इस विप्लव से पृथक् हो जाएं तो वे उनके हितों और सम्मान की रक्षा करेंगे। उनकी पेंशन चालू रहेगी, उनके खिताब

कायम रहेंगे।

बहादुरशाह : लेकिन यदि अंग्रेज़ों को विश्वास है कि अन्तिम विजय उन्हें प्राप्त होगी, तब किसलिए वे मुझसे सन्धि करना चाहते हैं? वे विजय प्राप्त करें और मुगल साम्राज्य के अन्तिम नामलेवा को भी मौत के घाट उतारकर भारत पर निष्कंटक राज्य करें। भारत की सम्पत्ति से इंग्लैंड को समृद्ध करें। हिंदुओं और मुसलमानों को परस्पर लड़ाकर शताब्दियों तक इस देश का खून चूसें।

ज़ीनत महल : उनका विश्वास है कि यदि इस समय जहांपनाह अंग्रेज़ों के समर्थक बन जाएं तो भारत में हो रहा भारत-वासियों और अंग्रेज़ों का नरसंहार किसी सीमा तक रुक जाएगा। मुगल सम्राट के नाम पर जो एकता भारत-भर के विप्लवियों में स्थापित हुई है, वह ताश के किले की भांति छिन्न-भिन्न हो जाएगी। अंग्रेज़ सम्राट की कृपा के सदा ऋणी रहेंगे।

बहादुरशाह : और उस ऋण को उसी प्रकार चुकाएंगे जिस प्रकार आज तक चुकाते रहे हैं! अंग्रेज़ों में कृतज्ञता की भावना कितनी है, इसे मुगल राजवंश ही नहीं, भारत का बच्चा-बच्चा जानता है। केवल हम ही नहीं बल्कि बंगाल और अवध के नवाब, पंजाब में महाराजा रणजीतसिंह के वंशज, महाराष्ट्र का पेशवा वंश, नागपुर के भोंसले, सिंध के अमीर, किन-किन का नाम गिनाऊं, सभी अंग्रेज़ की मित्रता के मूल्य चुका चुके हैं। उनके वचनों पर विश्वास करके 'ज़फ़र' अपने देश के प्रति विश्वासघात करेगा ऐसा

मूर्ख वह नहीं है ।

ज़ीनत महल : आपके पश्चात् आपकी ज़ीनत दर-दर भीख मांगती फिरे, क्या यही आपको स्वीकार है ?

बहादुरशाह : भारत की सम्राज्ञी दर-दर की भीख मांगेगी उस दिन यह धरती और आकाश कायम नहीं रहेंगे । जब तक वह जीवित रहेगी, तब तक आकाश के नक्षत्र भी उसके आगे मस्तक झुकाएंगे ।

ज़ीनत महल : कल्पना और सत्य में बहुत अन्तर होता है। सम्राट औरंगज़ेब ने चाहा था कि उनकी मृत्यु के पश्चात् उनकी प्रियतमा उदयपुरी बेगम सुख और सम्मान के साथ रह सके और इसलिए उन्होंने वसीयत करके अपना राज्य चारों शाहज़ादों में विभक्त कर उस इतिहास को दोहराया जाना रोकना चाहा जिसका सूत्रपात स्वयं उन्होंने किया था—लेकिन हुआ क्या ? वही भाई ने भाई का खून किया । उदयपुरी बेगम के पुत्र को भी संसार से विदा लेनी पड़ी । उसके पश्चात् उदयपुरी की हस्ती ही क्या रह गई । आप अंग्रेज़ों को भारत से निकाल भी पाए तब भी मेरी और जवांबख्त की रक्षा तो आप नहीं कर पाएंगे । जहांपनाह, आपका मुझपर जो स्नेह रहा है, मैं उसीकी शपथ आपको दिलाती हूं । आप मेरी बात पर ध्यान दीजिए ।

बहादुरशाह : सुनो ज़ीनत, हमारे दुर्भाग्यपूर्ण जीवन का एकमात्र सुख तुम हो—एक विस्तृत रेगिस्तान में जैसे कोई एक झरना फूट पड़ा हो । तुम्हारी सेवा और तुम्हारा स्नेह

पाकर मैं धन्य हो उठा। ज़माने ने जितने घाव मेरे हृदय में किए उन्हें तुम्हारे वरद हाथों के स्पर्श ने भर दिया। तुम्हारे और राजसिंहासन दोनों में से एक को चुनने के लिए भाग्य यदि मुझे आदेश देता तो मैं तुम्हें ही चुनता।

ज़ीनत महल : आलीजाह, आपकी प्रत्येक मुस्कान में मैंने अरुणोदय देखा है, आपकी प्रत्येक सांस में मैंने वसंत का सौरभ पाया है, आपकी कृपा-कोर चांदनी की भांति शीतल रही है। आपने मेरी सारी अभिलाषाएं पूर्ण की हैं, अब आप मुझपर निर्दय हो जाएंगे, इसपर मैं विश्वास नहीं करती।

[ज़ीनत महल बहादुरशाह 'ज़फ़र' का हाथ पकड़कर बैठाती है।]

ज़ीनत महल : बैठिए, जहांपनाह ! कुछ क्षणों के लिए तोपों के गर्जन और तलवारों की आवाज़ों को भूल जाइए। फिर उसी संसार में आइए जिसमें आप हों और मैं हूं और सामने प्रीति से भरे हुए जाम हों। हमारा जीवन प्रेम की रागिनी बन जाए।

बहादुरशाह : नहीं ज़ीनत, अब यह असमय की शहनाई मत बजाओ।

ज़ीनत महल : मुझसे कोई अपराध हुआ है जिसके कारण आप मुझे अनिश्चित भविष्य के अंधकार में फेंक देना चाहते हैं, जहां हिंसक जंतु मुझे नोच-नोचकर खा जाएंगे, जहां प्रत्येक सांस में सहस्रों वृश्चिकों का दंशन भरा होगा ! (बहादुरशाह 'ज़फ़र' की गोद में सर रखते हुए) यदि इतना ही क्रोध है मुझपर तो अपने हाथ से ही गला घोंट दीजिए मेरा।

बहादुरशाह : ज़ीनत, तुम हमारे पास होती हो तो हमें ऐसा जान

पड़ता है कि संसार की नियामतें हमारी गोद में पड़ी हैं। लेकिन एक चीज़ तुमसे भी बड़ी है। उसके लिए यदि हमें तुम्हारा भी बलिदान करना पड़े तो हम करेंगे। जानती हो, वह वस्तु क्या है? वह है हमारा देश। हमारा आह्वान सुनकर अपने देश की स्वाधीनता के लिए प्राण देने के लिए जब सहस्रों व्यक्ति सर पर कफन बांधकर निकल पड़े हैं तो हम क्या मुंह छिपाए बैठे रहें या उनकी पीठ में छुरा भोंकें? तुमने हमारे लिए बहुत कुरबानियां की हैं ज़ीनत! अब जीवन की अन्तिम डगर पर चलते हुए हम तुमसे अन्तिम कुरबानी चाहते हैं। संकीर्णता से ऊपर उठो, देश की पुकार सुनो, अपने और अपनी संतान के सुख-दुख को देश के सुख-दुख में विलीन कर दो। हो सकता है इस संघर्ष में मुगल साम्राज्य का अंतिम चिह्न भी मिट जाए, हो सकता है हमारे पास सर छुपाने के लिए एक झोंपड़ी भी न रहे लेकिन हमारा देश जीवित रहना चाहिए।

[ज़ीनत गोद से उठकर बैठती है।]

ज़ीनत महल : जहांपनाह, आप आदर्शों के जिस ऊंचे संसार की बात करते हैं, वहां तक उड़ पाना मेरे लिए सम्भव नहीं है। मैं तो स्त्री हूं, मेरा खुदा मेरा पति है, मेरा देश मेरा पुत्र है। इससे अधिक मेरा संसार नहीं है। जहांपनाह, अंग्रेज़ जवांबख्त को वलीअहद मानने को तैयार हो गए हैं, फिर किसलिए यह रक्त वर्षा कराई जाती है?

बहादुरशाह : तुम साधारण स्त्री नहीं हो, ज़ीनत, तुम हो मालिक-

ए-हिन्दुस्तान। हिन्दुस्तान का प्रत्येक व्यक्ति तुम्हारी संतान है। करोड़ों जवांबख्त की भी कुरबानी करनी पड़े तो करनी होगी।

[एक दासी का प्रवेश]

दासी : जहांपनाह, हकीम एहसानुल्ला खां हुजूरेम्राला के दर्शन करना चाहते हैं।

बहादुरशाह : ग्राने दो उन्हें।

[दासी का प्रस्थान]

बहादुरशाह : ज़ीनत, मनुष्य ग्रौर पशु में ग्रन्तर क्या है, यह जानती हो ? पशु केवल ग्रपना सुख-दुःख देख पाता है लेकिन इन्सान इसलिए इन्सान है कि वह पराये सुख-दुःख का ध्यान भी रखता है। वह दूसरों के सुख में प्रसन्न होता है ग्रौर उनके दुःखों से उसका हृदय व्यथित होता है। ग्रपने ग्रौर ग्रपने परिवार के वर्तमान ग्रौर भविष्य को सुखी देखना ग्रौर उसके लिए प्रयत्न करना भी मनुष्य के लिए स्वाभाविक है लेकिन इतना ही उसका कर्तव्य नहीं है। उसका प्रत्येक ऐसा कार्य, जिससे उसे या उसके परिवार को तो ऐहिक सुख प्राप्त हो जाएं लेकिन ग्रन्य लोगों को—समाज या देश को—हानि पहुंचे, पाप है; घोर पाप है। तुम्हारे हाथों हम ऐसा पाप नहीं होने देंगे। तुम ग्रपने महल में प्रकाश करने के लिए लाखों कुटियाग्रों में ग्रंधकार भरने का नीच कार्य नहीं करोगी, हमें तुमसे यही ग्राशा है।

[हकीम एहसानुल्ला खां का प्रवेश। उसके हाथ में एक प्रार्थना-पत्र है।]

हकीम एहसानुल्लाखां : (कोर्निश करता हुआ) जहांपनाह को हकीम एहसानुल्ला खां कोर्निश अदा करता है।

बहादुरशाह : आओ हकीमजी, बैठो।

[हकीम एहसानुल्ला खां स्थान ग्रहण करता है]

बहादुरशाह : कहो, किसलिए आना हुआ।

हकीम एहसानुल्ला खां : जहांपनाह, अब सम्राट जहांगीर के समय का सोने को ज़ंजीर से बंधा न्याय का घंटा तो है नहीं कि आपकी प्रजा ज़ंजीर खींचकर घंटा बजाकर अपनी पुकार अपने न्यायकर्ता के पास पहुंचा सके। एक प्रजाजन ने मुझे ही न्याय का घंटा बना लिया है।

बहादुरशाह : बात क्या है साफ कहो!

हकीम एहसानुल्ला खां : आपकी प्रजा में से एक व्यक्ति आपकी सेवा में कुछ निवेदन करना चाहता था।

बहादुरशाह : हमारी प्रजा में से प्रत्येक व्यक्ति को कुछ भी निवेदन करना हो उसके लिए हमारे द्वार खुले हुए हैं। वह आ सकता है।

हकीम एहसानुल्ला खां : लेकिन उसे भय था कि यदि वह स्वयं निवेदन करने आएगा तो उसकी जान खतरे में पड़ जाएगी।

बहादुरशाह : ऐसा क्यों?

हकीम एहसानुल्ला खां : जिनपर आपने प्रजा की रक्षा का भार सौंपा है वे स्वयं ही प्रजा के भक्षक बन जाएं तो किसकी जान की खैर है?

बहादुरशाह : हमारा न्याय अपराधी को क्षमा नहीं करता, चाहे वह कोई भी हो।

हकीम एहसानुल्ला खां : मोहल्ला बहरामखां में रहनेवाले एक एहसानुलहक नाम के व्यक्ति का यह प्रार्थना-पत्र है।

बहादुरशाह : आप ही पढ़कर सुनाइए।

हकीम एहसानुल्ला खां : लिखा है—जहांपनाह की सेवा में निवेदन है कि मिर्ज़ा अबूबकर साहब, शाहज़ादी फरखुंदाज़मानी के घर में···।

ज़ीनत महल : शाहज़ादी फरखुंदाज़मानी, वह आपकी उस दासी की लड़की जिसपर आपकी कभी कृपा रही थी! वह अपने-आपको शाहज़ादी कहती है?

हकीम एहसानुल्ला खां : क्यों न कहेगी, आखिर वह है तो शाहंशाह की ही बेटी। यह उसका दुर्भाग्य है कि उसकी मां एक साधारण दासी थी, फिर भी उसकी नसों में शाही रक्त तो है ही। उसे शाही खज़ाने से वज़ीफा भी अन्य शाहज़ादे-शाहज़ादियों की भांति प्राप्त होता ही है।

बहादुरशाह : (कुछ क्रोध से) यह आप प्रार्थना-पत्र सुना रहे हैं या शाही खानदान के इतिहास की विवेचना कर रहे हैं?

हकीम एहसानुल्ला खां : अपनी धृष्टता के लिए मैं जहांपनाह से क्षमा चाहता हूं।

बहादुरशाह : कोई बात नहीं। प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में कमज़ोरी के क्षण आते हैं। एक बार सम्राट जहांगीर को जब कि वह शाहज़ादा सलीम थे एक साधारण नर्तकी अनारकली के सौन्दर्य ने पागल कर दिया था।

ज़ीनत महल : लेकिन उस बेचारी को तो दीवार में चुन दिया

गया था।

बहादरशाह : हां, सलीम और बहादुरशाह की स्थिति में अन्तर था—वे शाहज़ादा थे और हम बादशाह। हमपर किसका नियंत्रण रह सकता था। जवानी ने अपना निर्लज्ज खेल खेला।

ज़ीनत महल : लेकिन जहांपनाह, जूठी पत्तल की भांति फेंके जाने से तो दीवार में चुना जाना अधिक गौरवमय है। अनारकली के प्यार को ज़माना याद रखेगा लेकिन फरखुंदा-ज़मानी की मां के नाम पर इतिहास थूकेगा।

बहादुरशाह : लेकिन उसे थूकना तो हमारे नाम पर चाहिए। जो कुछ हुआ उसमें फरखुंदाज़मानी की मां का अपराध क्या है? वह हमारे हरम में दासी थी—नीच वंश में जन्मी थी, यह भी उसका अपराध न था, खुदा ने उसे सुन्दर बनाया था, यह भी उसका अपराध न था।

ज़ीनत महल : और जहांपनाह को सौंदर्य का पारखी हृदय खुदा ने दिया है, यह भी उसका अपराध नहीं था।

बहादुरशाह : लेकिन वह मलिका से प्रतिद्वन्द्विता करने चली थी यही उसका अपराध था। आज वह शाही हरम में न होकर एकाकी जीवन व्यतीत कर रही है।

ज़ीनत महल : उसने जहांपनाह को भले ही क्षमा कर दिया हो, क्योंकि वह केवल दासी थी—पैसे से सेवा बेचनेवाली, उसने प्रेम भी बेच दिया तो कौन-सी नई बात हुई लेकिन उसकी बेटी ने सम्राट को क्षमा नहीं किया। वह अपने-आपको शाहज़ादी कहकर भी अपने मनमाने चाल-चलन

से शाही वंश को लजाने में ही आनन्द पा रही है। यह बदला लेने का तरीका है।

बहादुरशाह : खैर, जाने दो इन बातों को। हकीमजी, प्रार्थना-पत्र सुनाइए।

हकीम एहसानुल्ला खां : मिर्ज़ा अबूबकर, शाहज़ादी फरखुंदा-ज़मानी के घर में, जो बहरामखां के तिराहे पर है, जाया करते हैं। किस भावना से जाते हैं यह तो जहांपनाह जानते ही हैं।

बहादुरशाह : ठहरो हकीमजी! (ज़ीनत महल से) किसी को भेजकर शाहज़ादा अबूबकर को बुलवाओ।

ज़ीनत महल : जो आज्ञा जहांपनाह! मैं स्वयं जाती हूं।

[ज़ीनत महल का प्रस्थान]

बहादुरशाह : (हकीम एहसानुल्ला खां से) आगे पढ़िए।

हकीम एहसानुल्ला खां : मदिरा-पान के पश्चात् कोई व्यक्ति जिस प्रकार का आचरण कर सकता है; उसी प्रकार का वे करते हैं। कल मध्याह्न के पूर्व वह शाहज़ादी के घर पर आए और दिन-भर मदिरा-पान करते रहे और संगीत सुनते रहे। सूर्यास्त के डेढ़ घंटे के उपरान्त वे जाने के लिए तैयार हुए किन्तु संयोगवश गली के दरवाज़े की चाभी चौकीदार के पास थी। उसके तुरन्त न पहुंचने के कारण शाहज़ादा को विलम्ब हो गया। उन्हें जल्दी थी, अतः उन्होंने सेवक पर, जो अपने द्वार पर मित्रों सहित बैठा था, पिस्तौल चलाई, यद्यपि इसके लिए कोई कारण न था। शाहज़ादा ने बहुत कोलाहल किया और अपशब्द कहे और

सेवक के घर में प्रवेश करके उसे लूट लेना चाहा। सेवक ने द्वार बन्द कर लिया। मिर्ज़ा ने द्वार पर तलवार के कई वार किए और अपने सेवकों को दीवारों तथा द्वार पर पत्थर बरसाने का आदेश दिया। उन्होंने सेना को भी घर लूट लेने का आदेश दिया। फ़ैज़ बाज़ार का चौकीदार वहां आ पहुंचा, शाहज़ादा ने उसे भी मार-मारकर अध-मरा कर दिया।

[बहादुरशाह 'ज़फ़र' उठकर बेचैनी से कमरे में घूमने लगते हैं।]

हकीम एहसानुल्ला खां : मुझे खेद है जहांपनाह, कि यह प्रार्थना पत्र लाकर मैंने आपको बेचैन कर दिया है। इसमें कोई नई बात तो है नहीं, शाहज़ादों के लिए साधारण-सी बात है।

बहादरशाह : यही तो दुःख की बात है कि जिन करतूतों पर एक सभ्य मनुष्य का सर लज्जा से झुक जाना चाहिए, वे शाहज़ादों के लिए साधारण हैं। नीच और बाज़ारू लोग इनके साथियों में हैं। हमारे सामने देश और मुग़लवंश के सम्मान के लिए प्राण देने की बात करते हैं। और अपने साथियों में पहुंचकर सब-कुछ भूल जाते हैं। अंग्रेज़ों से युद्ध करने के लिए इन लोगों को सेनापतित्व सौंपा गया है, इससे बड़ा दुर्भाग्य भारत का क्या हो सकता है।

हकीम एहसानुल्ला खां : और ऐसे सेनापतित्व में हमें कितनी सफलता प्राप्त हो सकती है, इसका अनुमान जहांपनाह लगा सकते हैं। इसमें सन्देह नहीं कि देश के अनेक नगरों से सैनिकों की बहुत बड़ी संख्या दिल्ली में जमा हो गई है

लेकिन कौन है जो उन्हें एक सूत्र में एकत्र करे। युद्ध की कोई निश्चित दिशा नहीं, कोई निश्चित योजना नहीं। अंग्रेज़ों की शक्ति दिल्ली की चहारदीवारी के बाहर बढ़ती ही जा रही हैं और सुना है अब गढ़-भंजक तोपें भी आने ही वाली है। इस स्थिति में जहांपनाह भविष्य के अक्षरों को पढ़ ले सकते हैं। अब भी समय है कि आप अपने-आपको विद्रोहियों से अलग कर लें।

[शाहज़ादा मिर्ज़ा अबूबकर का प्रवेश]

मिर्ज़ा अबूबकर : (कोर्निश करता हुआ) जहांपनाह ने सेवक को किसलिए याद किया है ?

बहादुरशाह : (हकीम एहसानुल्ला खां से) हकीमजी, शाहज़ादा को प्रार्थना-पत्र दो।

[हकीम एहसानुल्ला खां प्रार्थना-पत्र मिर्ज़ा अबूबकर को देता है।]

बहादुरशाह : (मिर्ज़ा अबूबकर से) पढ़ो इसे।

[मिर्ज़ा अबूबकर मन ही मन प्रार्थना-पत्र को पढ़ता है और उसके चेहरे पर रोष के भाव बढ़ जाते हैं।]

बहादुरशाह : मुग़ल राजवंश का नाम रोशन हो रहा है हमारे योग्य शाहज़ादों के कारण।

मिर्ज़ा अबूबकर : (हकीम एहसानुल्ला खां की तरफ क्रोधपूर्वक देखता हुआ) तो आप लाए हैं इस प्रार्थना-पत्र को ?

बहादुरशाह : यह क्रोध करने की बात नहीं शाहज़ादा, शर्म से डूब मरने की बात है।

मिर्ज़ा अबूबकर : जहांपनाह, एक अबूबकर को ही शर्म से डूब मरने के लिए क्यों कहा जा रहा हैं ? मुग़ल राजवंश में यदि

वास्तव में शर्म और हया होती, आत्म-सम्मान का लेश भी होता तो अबूबकर जैसे श्वान शाहज़ादों के परिधान में पलते ही क्यों ? और क्यों शाहज़ादी फरखुंदाज़मानी ही संसार में अवतरित होतीं । मुग़ल रक्त भारत के दिल्ली नगर में ही नहीं और भी न जाने कहां-कहां कीड़ों की तरह बिलबिला रहा है, अब किस-किसको शर्म से मरने के लिए कहेंगे ?

बहादुरशाह : शाहज़ादा अबूबकर, हम तुम्हारा प्रलाप नहीं सुनना चाहते । तुम अपराधी हो ।

मिर्ज़ा अबूबकर : अपराधी हूं ? किस बात का ? शराब पीने का ? शाहज़ादी फरखुंदाज़मानी के घर जाने का ? शराब पीना धर्म के विरुद्ध है फिर भी शासन के न्याय में वह दण्डनीय नहीं है । खुदा का न्याय जब होगा तब वह अबूबकर को दण्ड देगा। लेकिन उस समय जहांपनाह भी अपराधियों की पंक्ति में होंगे, और भी हमारे अनेक पूर्वज होंगे, और फरखुंदा के घर जाना अपराध है तो उसकी मां को महल में बुलवानेवाला भी अपराधी है। जो अपराध सर पर राजमुकुट होने से क्षम्य हो जाता है, वह राजमुकुटहीन व्यक्ति के लिए भी क्षम्य होना चाहिए ।

हकीम एहसानुल्ला खां : शाहज़ादा हुज़ूर, आपको जहांपनाह के सम्मान को ध्यान में रखकर बोलना चाहिए ।

बहादुरशाह : नहीं हकीमजी, इसे बोलने दो । यह इस ज़माने की आवाज़ है, इसके मुंह से इतिहास बोलता है। निश्चय ही शाहज़ादे, तुम्हारा पिता न ज़माने को मुंह दिखाने योग्य है न ख़ुदा की कृपा प्राप्त करने का अधिकारी । फिर भी

बेटे, पीने-पीने में अन्तर होता है। एक पीना है जहांगीर का और एक सड़क पर बैठकर पीनेवाले गुण्डे का ।

मिर्ज़ा अबूबकर : जी हां, लेकिन ज़िल्लेइलाही, दोनों में अन्तर है यही कि जहांगीर बेईमान है और गुण्डा ईमानदार। वह अपने ऐब को छुपाता नहीं है धर्म की दृष्टि से देखा जाए तो धर्म-विरुद्ध आचरण करके संसार से सम्मान की आशा करने वाला अधिक अपराधी है।

बहादुरशाह : मिर्ज़ा अबूबकर, तुम्हारी बात तलवार की तरह तीखी होकर भी सत्य है, लेकिन हम पूछते हैं कि तुम्हारे पूर्वजों ने यदि अपराध किए हैं तो उनके दण्डस्वरूप उन्होंने अपना राज-पाट गंवाया है, वैभव और ऐश्वर्य खोया है, इसे जानते हुए भी तुम उसी पथ पर क्यों अग्रसर होते हो ?

मिर्ज़ा अबूबकर : इसलिए कि अब हमारे पास खोने के लिए कुछ शेष नहीं रहा है। रह गया है केवल राजवंश का नाम और बड़प्पन की कृत्रिम सीमा-रेखाएं जो हमें उस विस्तृत जगत् में प्रवेश नहीं करने देतीं, जहां मानवता मुस्कराती हैं। जहांपनाह, मेरे मस्तक पर से शाहज़ादापन के कलंक को धो डालिए। मैं तो खुदा से कहता हूं—क्यों तूने मुझे जन्म लेते समय से ही इस अभिशाप के बोझ से लाद दिया।

बहादुरशाह : खुदा को जो स्वीकार था वह उसने तुम्हें बनाया। मनुष्य को उसकी व्यवस्था में हस्तक्षेप करने का कोई अधिकार नहीं है।

हकीम एहसानुल्ला खां : और न मनुष्य में इतनी शक्ति है।

बहादुरशाह : तुम शाहज़ादा हो या साधारण व्यक्ति; दोनों ही

अवस्थाओं में तुम्हें शासन और मनुष्यता के नियमों का पालन करना पड़ेगा। तुम फरखुंदा के पास जाते हो—शराब पीते हो, यह तुम्हारा व्यक्तिगत मामला है, खुदा तुम्हें बुद्धि दे कि इससे मुग़ल राजवंश की जो अपकीर्ति होती है उसे तुम समझो, समाज में जो अव्यवस्था होती है, उसे जानो। हमारी दृष्टि में तुम्हारा मुख्य अपराध यह है कि तुमने हमारी प्रजा को लूटने और उन्हें मारने-पीटने का आपत्तिजनक कार्य किया है।

मिर्ज़ा अबूबकर : अपराधी को भी अपना पक्ष उपस्थित करने का अधिकार होता है।

बहादुरशाह : तुम्हें कुछ कहना है ?

मिर्ज़ा अबूबकर : जी हां, जहांपनाह ! मैं जब शाहज़ादी के घर से चला और गली के द्वार पर ताला पड़ा पाया तो मुझे इसके पीछे किसीका षड्यंत्र दिखाई दिया।

हकीम एहसानुल्ला खां : षड्यंत्र कैसा और किसका ?

मिर्ज़ा अबूबकर : हकीमजी, मैं जहांपनाह से निवेदन कर रहा हूं। आप बीच में बोलते हैं तो मुझे चोर की दाढ़ी में तिनका जान पड़ता है। आप इस प्रार्थना-पत्र को लेकर आए हैं, इससे भी मेरे सन्देह की पुष्टि होती है—प्रजा के सामने हंगामा खड़ा कराने के लिए ही कुछ लोगों ने गली का द्वार बन्द कराकर चौकीदार को अंतर्धान करा दिया। जब हमने चौकीदार की खोज में इधर-उधर देखा तो एहसानुलहक को मुस्कराते पाया। वह मेरी परेशानी का आनंद ले रहा था। जहांपनाह, ये लोग मेरी और फरखुंदाज़मानी

की बात को सर्वसाधारण में चर्चा का विषय बनाने के लिए ही ऐसे षड्यंत्र करते हैं। इनसे इन्हें दो लाभ हैं। एक तो शाहज़ादे जहांपनाह की नजर में गिरते हैं, दूसरे सेना और नगरवासियों में शाहज़ादों का सम्मान घटता है। सम्मान घटने से न तो हम नगर में व्यवस्था रख सकते हैं न सेना पर नियंत्रण, परिणाम यही होगा कि हम अंग्रेज़ों से युद्ध कर रहे हैं, उसमें विजय पाना कठिन होगा।

बहादुरशाह : सम्मान चाहते हो तो अपने ऊपर उंगली उठाने का अवसर ही मत दो। अच्छा यह बताओ, तुमने एहसानुल-हक का घर लुटवाया ?

मिर्ज़ा अबूबकर : अगर मैं घर लुटवाता तो उसके घर की एक ईंट भी न बचती। मैं किसी को आधा मारकर छोड़ देने के पक्ष में नहीं हूं। अधूरा अत्याचार या अधूरी दया मेरे स्वभाव में नहीं है।

[मिर्ज़ा कोयाश का प्रवेश]

मिर्ज़ा कोयाश : जहांपनाह गज़ब हो गया।

बहादुरशाह : क्या अंग्रेज़ नगर में प्रवेश करने में सफल हो गए ?

मिर्ज़ा कोयाश : नहीं जहांपनाह, जिन अंग्रेज़ों को, जिनमें अधिकतर स्त्रियां और बच्चे थे, जहांपनाह ने शरण दी थी उन्हें गुंडों की भीड़ ने मार डाला है।

बहादुरशाह : गुंडों की भीड़ ने ? वह लालकिले में कैसे प्रवेश पा सकी ?

मिर्ज़ा कोयाश : अवश्य ही किले का भी कोई व्यक्ति इस षड्-

यंत्र में सम्मिलित होगा।

बहादरशाह : यह हमारे लिए डूब मरने की बात है। बेबस स्त्रियों और भोले बच्चों ने क्या बिगाड़ा था हमारा? भारत अपनी सभ्यता और दया के लिए प्रसिद्ध है, भले ही आज अंग्रेज़ इसे बदनाम करें। इसी भारत में मनुष्यता को लज्जित करनेवाली इस प्रकार की घटनाएं—वे भी सम्राट की नाक के नीचे—हों, यह कितने दुःख की बात है।

मिर्ज़ा अबूबकर : आंधी अंधी होती है—विवेकहीन, उसी प्रकार विप्लव भी—सर्वनाश उसका स्वभाव है। अंग्रेज़ तो अपराधी भी हैं। उन्होंने पिछले सौ वर्षों से क्या नहीं किया। और आज तो हिंसा का नंगा नाच वे कर रहे हैं। अजनाले में उन्होंने क्या किया? अंग्रेज़ी सेनाओं ने दिल्ली की ओर आते समय रास्ते में जिस तरह ग्रामों में आग लगाने और कत्ले आम के जघन्य कृत्य किए हैं उन्हें क्या हम चुपचाप सह लेंगे? उन्होंने हमारी प्रजा के पेट में संगीनें चुभोईं, लोगों के बाल खींचे, उन्हें ज़बर्दस्ती गाय का मांस खिलाया, स्त्रियों का धर्म लूटा, क्या नहीं किया? हिंसा का उत्तर तो हिंसा ही है, जहांपनाह!

बहादुरशाह : कुछ खुदा का खौफ खाओ, अबूबकर! अंग्रेज़ों ने जो अत्याचार किए हैं उनसे भारतवासियों का क्रोध से पागल हो उठना स्वाभाविक तो है लेकिन इस प्रकार निर्दोष स्त्री-बच्चों के रक्त से हाथ रंगना वीरता नहीं है। सच पूछो तो आज हमें जितना दुःख हुआ है उतना तब भी न होता जब कोई हमारे अपने बच्चे को निष्ठुरता से मार

डालता। खैर, जो हो चुका वह तो हो ही चुका, अब जिन गुंडों ने यह जघन्य अपराध किया है, उन्हें गिरफ्तार करके ऐसा दंड देना चाहिए कि लोग जान लें कि हम इस प्रकार के हत्याकाण्ड के विरुद्ध हैं। हम इसी समय घटनास्थल पर चलेंगे।

मिर्ज़ा कोयाश : जहांपनाह के लिए सवारी।

बहादुरशाह : नहीं, हम मृतात्माओं के सम्मान में पैदल ही जाएंगे।

[सबका प्रस्थान]

[पट-परिवर्तन]

दूसरा दृश्य

[स्थान—पूर्ववत्। समय—संध्या। शमाएं जलाई जा चुकी हैं। सम्राट बहादुरशाह 'ज़फ़र' मसनद के सहारे बैठे हुक्का पीते हुए विचारों में मग्न दिखाई देते हैं। मिर्ज़ा इलाहीबख्श, जिसके हाथों में 'देहली उर्दू अखबार' की प्रति है, प्रवेश करके कोर्निश करता है।

मिर्ज़ा इलाहीबख्श : जहांपनाह को मिर्ज़ा इलाहीबख्श कोर्निश अदा करता है।

बहादुरशाह : आओ मिर्ज़ा, बैठो!

[मिर्ज़ा इलाहीबख्श अपना स्थान ग्रहण करता है।]

बहादुरशाह : कहो मिर्ज़ा, नगर एवं रणक्षेत्र के क्या समाचार हैं?

मिर्ज़ा इलाहीबख्श : रणक्षेत्र के समाचार तो मुझसे अधिक

मिर्ज़ा मुग़ल बता सकते हैं क्योंकि वे प्रधान सेना-पति हैं। इतना आप भी जानते हैं, मैं भी जानता हूं, दिल्ली की प्रजा भी जानती है कि अंग्रेज़ी सेना दक्षिण में जो ढाई मील लम्बी पहाड़ी यमुना तट के किनारे-किनारे है उसपर सुदृढ़ मोर्चाबंदी करके डटी हुई है। पहाड़ी दिल्ली की भूमि से ६० फुट ऊंची है। उस पर हमारी तोपों द्वारा की जानेवाली अग्निवर्षा का भी प्रभाव नहीं पड़ता। हमारी जो तोपें लालकिले में हैं वे भी अंग्रेज़ी छावनी पर मार करने में सफल नहीं हो रहीं।

बहादुरशाह : इसमें तो सन्देह नहीं कि अंग्रेज़ सेनापति युद्ध कौशल में हमसे अधिक चतुर हैं । यदि हम लोगों में दूर दर्शिता होती तो हमारी सेना नगर की चहारदीवारी की आड़ न लेकर पहाड़ी पर पहले से ही अपना मोर्चा बनाती । फिर भी हम कहे बिना नहीं रहेंगे कि योग्य सेनापति के अभाव में भी हमारे सैनिक अंग्रेज़ी, सेना को नाकों चने चबवा रहे हैं।

मिर्ज़ा इलाहीबख्श : किन्तु इस युद्ध में समय का बहुत मूल्य है, जहांपनाह ! ज्यों-ज्यों समय व्यतीत हो रहा है त्यों त्यों अंग्रेज़ों की शक्ति बढ़ती जा रही है और हमारी कठिनाइयां बढ़ रही हैं । नगर को शासन व्यवस्था बिगड़ रही है, नागरिकों पर सेना के अत्याचार बढ़ते जा रहे हैं। दिल्ली के नागरिक आशंकित और भयभीत होते जा रहे हैं। यह देखिए आज के 'देहली उर्दू अखबार' ने क्या लिखा है।

[मिर्ज़ा इलाहीबख्श समाचारपत्र बहादुरशाह 'ज़फ़र' की तरफ़ बढ़ाता है लेकिन वह उसे अपने हाथ में नहीं लेता।]

बहादुरशाह : तुम ही सुनाओ, मिर्ज़ा !

मिर्ज़ा इलाहीबख्श : कुछ लोगों ने यह कार्य आरम्भ कर दिया है कि तिलंगों का वेश बनाकर नगर को लूटते हैं। शहर के लुच्चे कुछ तिलंगों को भी अपने साथ मिला लेते हैं और हर रोज़ किसी भलेमानस का घर लूटते हैं । अलीगंज, मल्लन जी हसनगढ़ तथा अलीपुर के गूजर जहां-तहां लूट-मार करते घूमते हैं। केवल गुंडे ही ऐसा करते हों। ऐसी बात नहीं है । मोहल्ला शाहगंज में शाही सेना अजमेरी द्वार से निकलकर घुस आती है और दुकानदारों से बिना मूल्य चुकाए सामान ले जाती है। सैनिक दीन-दुखियों के घरों में घुसकर बिछौने और लकड़ियां छीन ले जाते हैं। जो लोग उन्हें रोकने का प्रयत्न करते हैं उन्हें हथियारों से घायल कर देते हैं । जोधपुर से जो सवार आए हैं, उन्होंने दूकानों के सामने घोड़े बांध दिए हैं और बहुत-सी दूकानों पर अधिकार जमा लिया है। बहुत-से दूकानदार दुकानें छोड़कर भाग गए हैं और शेष भी भाग जाएंगे।

[बहादुरशाह 'ज़फ़र' यह सब सुनकर बेचैन हो उठते हैं और उठकर खड़े हो जाते हैं तथा कक्ष में घूमने लगते हैं । मिर्ज़ा इलाहीबख्श भी उठ खड़ा होता है।]

मिर्ज़ा इलाहीबख्श : मैं जानता हूं कि जहांपनाह को इन समाचारों से कष्ट होता है किन्तु मेरा निवेदन यही है कि अपने जी को दुखाने से लाभ क्या है ! सब जानते हैं कि

आपने नगर में शांति रखने के लिए क्या नहीं किया? सच बात तो यह है कि इस समय गुंडों और स्वच्छंद सैनिकों पर नियंत्रण रखना संभव भी नहीं हैं। ज्यों-ज्यों युद्ध लंबा होगा, प्रजा के कष्ट बढ़ेंगे और तब जो हमारे समर्थक हैं वे भी हमारे विरोधी बन जाएंगे और अंत में अंग्रेज़ विजयी होंगे। जो हो चुका सो हो चुका, अब भी यदि सम्राट चाहें तो अपने भविष्य को सुरक्षित और सुखी रखने का उपाय सोच सकते हैं।

बहादुरशाह : मिर्ज़ा ज़फ़र का भविष्य तो अब भारत के भविष्य में विलीन हो चुका है। भारत के भविष्य को भुलाकर अपने सुख की चिंता करने की आशा अब कोई हमसे न करे। हम अंग्रेजों से युद्ध बंद नहीं करेंगे लेकिन साथ ही हमारा यह भी कहना है कि यदि प्रजा पर अंग्रेज़ी राज के समान अत्याचार होता रहा तो हमारा राज व्यर्थ है। स्वतंत्रता का सुख शांति में ही है। युद्धकाल में भी हम सैनिकों को प्रजा पर अत्याचार नहीं करने देंगे।

[मिर्ज़ा मुग़ल का प्रवेश। उसके हाथ में अनेक कागज़ात हैं।]

मिर्ज़ा मुग़ल : [कोर्निश करता हुआ] जहापनाह को मिर्ज़ा मुग़ल कोर्निश अदा करता है।

बहादुरशाह : अच्छा हुआ तुम आ गए शाहज़ादे, नहीं तो हमें तुम्हें बुलाना पड़ता।

मिर्ज़ा मुग़ल : सेवक को क्या आज्ञा है जहांपनाह की ?

बहादुरशाह : तुमने आज का 'देहली उर्दू अखबार' पढ़ा है ?

मिर्ज़ा मुग़ल : जी हां ! उसमें गुंडों द्वारा जो कहीं-कहीं लूट-

मार की जाती है, उसके सम्बन्ध में समाचार प्रकाशित हुए हैं, आप सम्भवतः इसीसे दुःखी हैं।

बहादुरशाह : हां शाहज़ादे, हमारा हृदय चूर-चूर हो गया है। दुःख की बात तो यह है कि तुम्हारी सेना के आदमी भी हमारी प्रजा को कष्ट देते हैं। तुम्हारे सैनिक तलवार वाले हैं, उनके हाथों में शक्ति है, उसका प्रयोग वे अंग्रेज़ों के विरुद्ध करें, हमारी प्रजा पर नहीं। इससे पूर्व अंग्रेज़ मन-माने आदेश निकाला करते थे और हमारी प्रजा सर्वदा व्यथित और व्याकुल रहती थी। अब तुम लोग उसे कष्ट पहुंचाते और लूटते हो। यदि तुम्हारी यही दशा है तो इस जीवन के संध्याकाल में हमें राज्य तथा धन की इच्छा नहीं। हम ख्वाजा साहब की ओर प्रस्थान कर जाएंगे या मक्का शरीफ़ जाकर जीवन के शेष दिन काटेंगे और खुदा की उपासना में मन लगाएंगे।

[बहादुरशाह 'ज़फ़र' की आंखों में आंसू आ जाते हैं। मिर्ज़ा मुग़ल की आंखें भी गीली हो उठती हैं।]

मिर्ज़ा मुग़ल : जहांपनाह, आपके हृदय के दर्द को मैं समझता हूं और आपके इस दर्द का उपचार करने के लिए मैं अपने हृदय का रक्त भी देने को प्रस्तुत हूं। इस समय देश में जो अनिश्चित परिस्थिति है, उसका लाभ स्वेच्छाचारी लोग उठाना चाहते हैं। केवल दिल्ली में ही नहीं, अन्य स्थानों पर भी यही हो रहा है। जहांपनाह इन बातों से विचलित हो जाएंगे तो हम लोग अंग्रेज़ों से युद्ध करने का साहस कहां से पाएंगे ?

बहादुरशाह : लेकिन हम अंग्रेज़ों से युद्ध करने में तब तक सफल नहीं हो सकते जब तक हम अपनी सेना को अनुशासन में नहीं रख पाते। सेना का कार्य रक्षा करना है, ध्वंस तथा लूटमार नहीं। हम यह पसन्द नहीं कर सकते कि हमारे नगर लुटें—अपने ही सैनिकों से; अंग्रेज़ तो नष्ट न हों किन्तु अपने ही देशवाले नष्ट हो जाएं। हमें यह स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है कि अन्त में अंग्रेज़ दिल्ली पर विजय प्राप्त कर लेंगे और हमारी हत्या कर डालेंगे।

मिर्ज़ा इलाहीबख्श : जहांपनाह, इसलिए मैं कहता हूं कि आप एक बार फिर विचार करें कि क्या आपका विद्रोहियों के साथ रहना उचित है ? मैं भी मुग़ल हूं जहांपनाह, मुग़ल साम्राज्य का वैभव फिर लौटे, यह मेरी भी आन्तरिक अभिलाषा है लेकिन उसकी कोई सम्भावना भी तो हो। अंग्रेज़ों के साथ हमारा आज भी मेल हो सकता है।

मिर्ज़ा मुग़ल : जहांपनाह, दुःख की बात है कि आज भी हमारे नगर में और हमारे महल में और शायद हमारी सेना में भी कुछ ऐसे देशद्रोही मौजूद हैं जो ऐसा वातावरण बना रहे हैं कि जहांपनाह निराश होकर अपने आपको अंग्रेज़ों के चंगुल में फंसा दें ताकि अंग्रेज़ों से जो भारतवासी सम्राट के झंडे के नीचे युद्ध लड़ रहे हैं वे स्वयं ही अपनी मौत मर जाएं। मैं जानता हूं और मानता हूं कि कहीं-कहीं कुछ गुंडे सिर उठाते हैं लेकिन यह बात सर्वथा झूठी है और देशद्रोहियों की फैलाई हुई है कि सैनिक प्रजा पर मनमाने अत्याचार कर रहे हैं। विघ्नसंतोषी लोग प्रजा में जान-बूझकर आतंक का

वातावरण उत्पन्न करते हैं। दरीबे में सिर्फ एक सर्राफ की दुकान लुटी थी जिसपर सब सर्राफों ने अपना सोना, गहना तथा रुपया घर चलता किया और अपनी दुकानों के सामने विलाप करने लगे कि हाय हम लुट गए, यद्यपि सभी गली-कूचों में स्थिति साधारण थी ।

बहादुरशाह : लेकिन हम नहीं चाहते कि हमारी प्रजा की एक झोंपड़ी को भी हमारे आदमी आंच पहुंचाएं। हमें उपद्रवियों का कठोरता से दमन करना होगा।

मिर्ज़ा मुग़ल : जहांपनाह की आज्ञापूर्ति के लिए मैंने कुछ उठा नहीं रखा है । कल पांच आदमी ऐसे पकड़े गए जो वेश-भूषा में हमारे सैनिक जान पड़ते थे, उनके पास बंदूकें भी थीं, जो नगर में लूट-मार कर रहे थे । ज्ञात हुआ कि इनमें से एक साइमन साहब का कहार था, एक अहीर और एक चमार जो छावनी में मुण्डे बनाता था । भेद खुलने पर सैनिकों ने उनको खूब जूते मारे, अब वे कैद में हैं। दुर्भाग्य से दिल्ली में ऐसे भी लोग हैं जो प्रलोभन देकर लोगों से उत्पात कराते हैं, उसका दोष सैनिकों के सिर लादना चाहते हैं और प्रजा और सेना में मतभेद उत्पन्न कर हमारी समस्याओं को बढ़ाते हैं और चाहते हैं कि अंत में अंग्रेज़ों की विजय हो।

[मिर्ज़ा कोयाश का प्रवेश जो मिर्ज़ा मुग़ल के कथन का कुछ अंश प्रवेश करने से पूर्व सुन चुका है।]

मिर्ज़ा कोयाश : (कोर्निश करता हुआ) जहांपनाह को कोयाश कोर्निश अदा करता है।

बहादुरशाह : आओ शाहज़ादे ! क्या समाचार लाए हो ?

मिर्ज़ा कोयाश : जहांपनाह, समाचार बहुत अच्छे नहीं हैं। आप पहले ही कुछ परेशान जान पड़ते हैं, इसलिए मैं सोचता हूं, इस समय मैं परेशानी और क्यों बढ़ाऊं।

बहादुरशाह : ओखली में सर देकर क्या मूसली से डरना होगा शाहज़ादे ? जो कहना चाहते हो कहो।

मिर्ज़ा कोयाश : जहांपनाह, जान पड़ता है हमारे नगर में कुछ लोग अंग्रेज़ों के क्रीतदास हैं जो ऐसे षड्यंत्रों में लगे हुए हैं जिससे हम निश्चित रूप से पराजित हों।

मिर्ज़ा मुग़ल : यही बात मैं जहांपनाह से कह रहा था।

मिर्ज़ा इलाहीबख्श : (मिर्ज़ा कोयाश से) आप किस षड्यंत्र का पता लेकर आए हैं ?

मिर्ज़ा कोयाश : इस षड्यंत्र का कि कुछ मुसलमान ईद के दिन गाय की कुरबानी करके दिल्ली के हिंदुओं और मुसलमानों में भयंकर झगड़ा कराकर हमारे संगठन को तोड़ने पर आमादा हैं। हमारी सेना में मुसलमान भी हैं और हिन्दू भी। यदि खुदा न करे ईद के दिन गोवध हो ही गया तो हमारी सेना भी दो भागों में बंट जाएगी, नगर निवासी तो बटेंगे ही और दिल्ली की गलियों में दोनों धर्मावलम्बियों के रक्त की बाढ़ आ जाएगी जिसमें भारत की स्वाधीनता का सपना भी बह जाएगा।

बहादुरशाह : नहीं, नहीं, नहीं, हम ऐसा नहीं होने देंगे। हम प्राणों की बाज़ी लगा देंगे। ईद के दिन मुसलमान यदि गाय काटना चाहेंगे तो पहले उन्हें हमारे गले पर छुरी

चलानी होगी। मुग़ल राज्य में गो-वध कभी नहीं हुआ, यहां तक कि औरंगज़ेब के काल में भी नहीं हुआ। यह दुर्भाग्य क्या हमारे लिए बचा था ? बैठो मिर्ज़ा मुग़ल, हम ऐलान लिखते हैं।

[मिर्ज़ा मुग़ल अपने कागज़ात लेकर फर्श पर रखी छोटी-सी मेज़ के पास बैठता है। कलम और कागज़ लेकर लिखने के लिए तैयार होता है।]

बहादुरशाह : हम ऐलान का विषय लिखाते हैं जिसे शहर कोतवाल के पास भेज दिया जाए जिसे वह नगर के कोने-कोने में एवं सेना की छावनियों में डंके की चोट के साथ घोषित कर दें।

[मिर्ज़ा मुग़ल कागज़ पर लिखने लगता है।]

बहादुरशाह : हमने बोला तो कुछ है नहीं, तुम लिखने क्या लगे ?

मिर्ज़ा मुग़ल : जी मैंने लिखा है—खल्क खुदा की, राज बादशाह का, हुक्म फ़ौज के बड़े सरदार का। भारत-सम्राट ग़ाज़ी बहादुरशाह 'ज़फ़र' घोषित करते हैं कि—

बहादुरशाह : अच्छा, अच्छा, आगे लिखो—दिल्ली में रहनेवाले हर मुसलमान को, चाहे वह साधारण नागरिक हो या सेना में कार्य करता हो, आदेश दिया जाता है कि ईद के पवित्र त्योहार पर कोई गाय ज़िबह नहीं की जाए। यदि किसी मुसलमान ने इस आदेश के विरुद्ध कार्य किया तो उसे तोप के मुंह से बांधकर उड़ा दिया जाएगा। यदि किसी मुसलमान ने गो-वध हेतु किसीको प्रोत्साहित किया तो

उसको भी प्राण-दण्ड दिया जाएगा । हिंदू और मुसलमान दोनों भारत की सन्तान हैं, दोनों भाई-भाई हैं, दोनों को एक दूसरे की धार्मिक भावनाओं का ध्यान रखना आवश्यक है। इस समय जबकि भारत की स्वतन्त्रता के लिए हिन्दू और मुसलमान दोनों अपने मस्तक कटा रहे हैं, हमें अपनी राष्ट्रीय एकता हर कीमत पर कायम रखनी है ।

मिर्ज़ा इलाहीबख्श : जहांपनाह, इस सम्बन्ध में यदि मौलवियों से परामर्श कर लिया जाए और उनकी अनुमति ले ली जाए तो मुसलमानों की धार्मिक भावना भी सन्तुष्ट हो जाएगी।

बहादुरशाह : लेकिन मौलवियों से परामर्श लेने की आवश्यकता क्या है ? हम भारत के शासक हैं, जिस भारत में हिन्दू भी हैं और मुसलमान भी । अगर हिन्दू गो-वध से दुःखी होते हैं तो हमारा कर्तव्य है कि यदि कोई मौलवी भी धर्म के नाम पर गो-वध करने का आदेश दे तो हम उसे रोकें । गो-वध करना ही तो मुसलमान का धर्म नहीं है । धर्म तो आत्मा के ऊंचे गुणों का नाम है और प्रत्येक धर्म इस सम्बन्ध में एक-सा है ।

मिर्ज़ा कोयाश : किन्तु जहांपनाह, क्या केवल इस घोषणा से गो-वध रुक जाएगा ? जहां तक मुझे ज्ञात हुआ है, मैं कह सकता हूं कि अंग्रेज़ों ने कुछ मौलवियों को बड़ी रकमें चटाकर इस अवसर पर उत्पात कराने का प्रबन्ध किया है ।

बहादुरशाह : अंग्रेज़ों ने कुछ भी षड्यंत्र किया हो लेकिन हमारा दृढ़ निश्चय है कि हम गो-वध नहीं होने देंगे—चाहे सूर्य

पश्चिम से उदय हो। अंग्रेज़ों से हमारा जो युद्ध हो रहा है उसका परिणाम चाहे कुछ भी हो लेकिन कम से कम इस मोर्चे पर हम उनसे नहीं हारेंगे। हिन्दू और मुसलमानों के जीवन अब एक-दूसरे से इतने गुँथ गए हैं कि अब दोनों के पृथक् अस्तित्व की कल्पना करना भी घातक है : दोनों के बीच भ्रातृत्व रखे बिना भारत स्वतन्त्र हो नहीं सकता और स्वतन्त्र रह नहीं सकता।

मिर्ज़ा मुग़ल : और कुछ भी आज्ञा है मुझे, जहांपनाह !

बहादुरशाह : हां, हां, अभी तो बहुत काम करना है तुम्हें। लिखो······

मिर्ज़ा मुग़ल : लिखाइए जहांपनाह !

बहादुरशाह : वीर मुबारकशाह खां कोतवाल शहर को ज्ञात हो—इस आज्ञा-पत्र के साथ भेजे हुए हमारे आदेश की घोषणा कल करा दी जाए। इसके अतिरिक्त तुम्हें आज्ञा दी जाती है कि नगर के द्वारों पर इस प्रकार का प्रबंध करो कि कोई भी गाय का व्यापारी आज से बकरीद के तीन दिन तक नगर में गाय तथा भैंस बेचने के लिए न ला सके और जिन मुसलमानों के घरों में गाय पली हों उन्हें लेकर कोतवाली में बंधवा दिया जाए। यदि कोई खुल्लमखुल्ला अथवा छिपाकर पली हुई गायों की अपने घर में कुरबानी करेगा तो उसे प्राण-दण्ड दिया जाएगा। ईदुज्ज़ुहा के अवसर पर गो-वध के सम्बन्ध में इस प्रकार का प्रबन्ध हो कि गाय बिकने के लिए भी न आए और पली हुई गौओं का भी वध न हो। कोतवाली की ओर से इस सम्बन्ध में जितनी

भी चेष्टा की जाएगी वह हमारी प्रसन्नता का कारण बनेगी।

मिर्ज़ा मुग़ल : जहांपनाह, सेवक के मन में एक आशंका उत्पन्न हुई है। आज्ञा हो तो निवेदन करूं।

बहादुरशाह : अवश्य।

मिर्ज़ा मुग़ल : आपने कोतवाल को जो आज्ञा दी है वह उचित है लेकिन कोतवाली में तो इतना स्थान नहीं कि पचास भी रासें बांधी जा सकें, यदि नगर के समस्त मुसलमानों के घरों में पली हुई गौएं मंगाई जाएंगी तो उनके लिए स्थान न हो सकेगा। इसके लिए विस्तृत अहाता होना चाहिए जिसमें वे वहां छः दिन बंद रखी जा सकें।

बहादुरशाह : ठीक कहते हो शाहज़ादे ! इतना बड़ा अहाता प्राप्त नहीं होगा। इसलिए कोतवाल को लिखे गए आज्ञा-पत्र में आगे जो हम बोलें बढ़ा दो।

मिर्ज़ा मुग़ल : बोलिए जहांपनाह !

बहादुरशाह : अगर इतनी गायों को बांधने योग्य स्थान प्राप्त न हो तो उन मुसलमानों के, जिनके घरों में गौएं हैं, नाम लिख लिए जाएं, उनकी गायों की संख्या उनसे ले ली जाए और उनसे मुचलके तथा आश्वासन-पत्र लिखवा लिए जाएं कि वे न तो खुल्लमखुल्ला और न चोरी से गोवध करेंगे। जिन घरों में गौएं बंधी हों वे उसी प्रकार बंधी रहें। उन्हें तीन दिन तक दाना-चारा उसी स्थान पर खिलाया जाए और चरने के लिये लेशमात्र न छोड़ा जाए। उन्हें भली भांति समझ लेना चाहिए कि तीन दिन

उपरांत यदि सूची के अनुसार गौएं नहीं मिलीं और यदि किसी ने छिपाकर उन्हें ज़िबह कर दिया तो उसे प्राण-दंड मिलेगा ।

मिर्ज़ा इलाहीबख्श : जहांपनाह की उदारता हिन्दुओं का हृदय अवश्य जीत लेगी लेकिन मुझे भय है कि इससे मुसलमान मन में समझेंगे कि अब भविष्य में उन्हें हिन्दुओं की कृपा पर जीवित रहना पड़ेगा। उनके मन में एक असन्तोष घर कर ले, यह भी संभव है ।

बहादुरशाह : यदि ऐसा हो तो उसे अज्ञान की उपज ही कहा जाना चाहिए । प्रत्येक देश का अपना अतीत होता है, अपना इतिहास, अपनी परम्पराएं और अपनी संस्कृति । उस देश के प्रत्येक निवासी को, चाहे वह किसी धर्म का पालन करने वाला हो उसकी विशेषताओं को मान्यता देनी ही चाहिए । अरब, ईरान और तुर्किस्तान में मुसलमानों का जीवन कुछ भी रहा हो, कुछ भी हो, लेकिन भारत में आकर तो उन्हें भारत की आत्मा में अपनी आत्मा मिलानी ही होगी । तभी यह देश उन्हें प्यार कर सकेगा। एक हिन्दू अपने रीति-रिवाज बदलने को कहे तो किसी सीमा तक हम उसपर आपत्ति कर भी सकते हैं लेकिन जब एक मुसलमान ही अपने स्वधर्मियों को जिस देश में वह रह रहा है उसके अनुसार परिवर्तित होने को कहे तो उसमें आपत्ति का क्या कारण हो सकता है ? हमें स्वेच्छा से एक-दूसरे की परम्पराओं का ध्यान रखना है। तुम तो जानते हो, मुग़ल शासक होली, दीवाली

आदि त्योहार मनाते रहे हैं और उसी प्रकार ईद की खुशियों में हिन्दू मुसलमानों के साथ सम्मिलित होते रहे हैं। हमें एक दूसरे के सुख-दुःख का साथी बनना ही चाहिए।

[मिर्ज़ा अबूबकर का प्रवेश]

मिर्ज़ा इलाहीबख्श : (कोर्निश करता हुआ) जहांपनाह को अबूबकर कोर्निश अदा करता है।

बहादुरशाह : कहो शाहज़ादे, तुम क्या समाचार लाए हो ?

मिर्ज़ा अबूबकर : जहांपनाह, मैं समाचार भी लाया हूं और शिकायत भी।

बहादुरशाह : पहले हम शिकायत सुनेंगे।

मिर्ज़ा अबूबकर : शिकायत करनी है मुझे सैनिकों की ओर से। उन्हें व्यवस्था के अनुसार वेतन प्राप्त नहीं होता। जीवन की आवश्यक वस्तुएं प्राप्त करना भी उन्हें असम्भव हो गया है। यही स्थिति रही तो लूटमार करके अपनी आवश्यकताओं का प्रबन्ध स्वयं करेंगे या अपने घरों को लौट जाएंगे।

बहादुरशाह : मिर्ज़ा मुग़ल, इस शिकायत के सम्बन्ध में तुम्हारा क्या कथन है, तुम सेना के मुख्य सेनापति हो।

मिर्ज़ा मुग़ल : जहांपनाह, मैं मुख्य सेनापति हूं और युद्ध का संचालन मैं देखता हूं किन्तु सैनिकों को वेतन बांटने का कार्य हकीम एहसानुल्ला खां को आपने सौंपा है। वह किसी सेना को मासिक वेतन देते हैं किसीको दैनिक। कुछ सैनिक ऐसे हैं जिन्हें नित्य का भोजन भी उपलब्ध नहीं और कुछ गुलछर्रे उड़ा रहे हैं। इस प्रकार सैनिकों

में परस्पर मन-मुटाव उत्पन्न होता है।

मिर्ज़ा कोयाश : मैं तो समझता हूं कि हकीमजी जान-बूझकर वेतन बांटने के अपने तरीके से सेनाओं में असंतोष पैदा कर रहे हैं। खुदा जाने क्यों, वे प्रारम्भ से ही अंग्रेज़ों से युद्ध करने के पक्ष में नहीं हैं। किसी न किसी प्रकार वे जहांपनाह को बाध्य कर देना चाहते हैं कि वे युद्ध का नेतृत्व छोड़ दें।

मिर्ज़ा इलाहीबख्श : जहां तक मैं समझता हूं, हकीमजी पर इस प्रकार के आरोप लगाना उनपर अन्याय करना है। अंग्रेज़ों से युद्ध करना चाहिए था या नहीं, इस संबंध में हकीमजी का मत आप लोगों से नहीं मिलता। मेरी भी आपसे अलग राय है, और हमने अपना मत प्रकट किया, किंतु जब ज़िल्लेइलाही इस संग्राम में कूद पड़े तो हमारा यह कर्त्तव्य है कि अपनी शक्ति-भर युद्ध में भाग लें। जहांपनाह के भाग्य के साथ हमारा भाग्य भी जुड़ा हुआ है।

बहादुरशाह : और सारे देश के भाग्य के साथ हमारा भाग्य जुड़ा हुआ है। खैर, हमें असली विषय पर आना चाहिए। हमें ठीक ज्ञात नहीं कि खज़ाने की स्थिति क्या है ?

मिर्ज़ा मुग़ल : जहांपनाह, धन एकत्र करने के सभी उपाय किए गए हैं। ऋण भी लिया गया, है विभिन्न स्थानों से जो सेनाएं आई हैं वे भी अपने साथ धन लाई हैं, वह भी खज़ाने में जमा होता रहा है, फिर भी युद्ध तो युद्ध है। पहले

हमारे पास कुल ५००० सैनिक थे, अब तीस हज़ार के लगभग हैं और नये-नये लोग सेना में भरती होने के लिए आ रहे हैं।

बहादुरशाह : नई भरती सर्वथा बंद कर दो। जब हम वर्तमान सैनिकों को ही भरपेट भोजन नहीं दे पाते तो नई सेनाओं की भीड़ क्यों बढ़ाएं?

मिर्ज़ा मुग़ल : आपकी आज्ञा का पालन होगा जहांपनाह! सेना के वेतन के अतिरिक्त अस्त्र-शस्त्र मोल लेने या अपने कारखानों में बनवाने में भी कम व्यय नहीं हुआ। इस कारण इस समय स्थिति यह है कि हमारा खज़ाना शून्य के लगभग है।

बहादुरशाह : कुछ भी हो, सभी सैनिकों को दैनिक वेतन मिलना चाहिए। हम जहां यह चाहते हैं कि सैनिक नगर में लूटमार न करें वहीं हम यह भी चाहते हैं कि उन्हें समय पर वेतन और रसद प्राप्त हो। यदि वे भूखे रहे तो युद्ध क्या खाक करेंगे? (अपने गले से मोतियों का हार उतारते हुए) ले जाओ हमारा यह हार। इसे बेच दो और रुपया सैनिकों में बांट दो।

मिर्ज़ा इलाहीबख्श : जहांपनाह, यह पुश्तैनी हार......

बहादुरशाह : जब हमारे सैनिकों को रोटियां नसीब नहीं हो रहीं तब हमें क्या अधिकार है कि हम बहुमूल्य आभूषण पहने रहें। हम अपने और बेगमात के सभी आभूषण बेच डालेंगे लेकिन जो सैनिक हमारे लिए और अपने देश के लिए प्राण न्योछावर करने आए हैं वे रोटियों के लिए तरसें यह हमें

मंजूर न होगा।

मिर्ज़ा अबूबकर : जहांपनाह की उदारता की सीमा नहीं। आप मनुष्य नहीं फ़रिश्ता हैं। दुर्भाग्य भारत का कि आप सम्राट औरंगज़ेब के तुरन्त बाद नहीं उत्पन्न हुए। उनकी कठोरता के प्रहार से भारत का जो हृदय विदीर्ण हुआ था उसे आप अपनी उदारता से जोड़ देते और देश की महान शक्ति अक्षुण्ण बनी रहती। अंग्रेज़ अपने पांव न पसार पाते।

मिर्ज़ा मुग़ल : इस समय तो जहांपनाह, यह हार अपने पास रखें। हम लोग प्रयत्न करेंगे कि सैनिकों का कष्ट दूर हो। वैसे तो सैनिक जब सुनेंगे कि उनके लिए जहांपनाह अपने आभूषण बेचने को प्रस्तुत हैं तो वे भूखे पेट भी काम करने में अपना सौभाग्य समझेंगे। सम्राट के प्रति सेना में अटूट श्रद्धा है।

मिर्ज़ा अबूबकर : आज्ञा हो तो अब मैं जहांपनाह को एक शुभ समाचार भी दे दूं।

बहादुरशाह : कहो।

मिर्ज़ा अबबकर : समाचार यह है कि बरेली के सरदार बख्तखां अपनी सेना, खज़ाने और तोपखाने के साथ जमना के उस पार आ पहुंचे हैं। नदी में बाढ़ होने के कारण बरेली की सेना अभी उसी तट पर टिकी हुई है।

बहादुरशाह : शुक्र खुदा का, उसने हमारे पास एक ऐसा आदमी भेजा जिसने अनेक युद्धों में भाग लिया है।

मिर्ज़ा इलाहीबख्श : अंग्रेज़ की ओर से !

बहादुरशाह : किसीकी ओर से सही, लेकिन युद्धक्षेत्र का उसे प्रत्यक्ष अनुभव है। अब हमारा युद्ध एक नया मोड़ लेगा। मिर्ज़ा मुग़ल, पुल के प्रबन्धकों को आदेश दो कि वे जितनी नावें एकत्र कर सकते हों एकत्र कर लें और इस सेना को नदी के पार उतार दें। नौकाओं द्वारा सेना थोड़ी थोड़ी करके पार उतर सकेगी, एक साथ नहीं, इसलिए तुम सेना के अधिकारियों के नाम भी आदेश निकाल दो कि न तो कोई सैनिक और न कोई अन्य अधिकारी नौकाओं से पार उतरते समय प्रबंधक अथवा मल्लाहों के साथ दुर्व्यवहार अथवा अत्याचार करे। सैनिकों को थोड़ी-बहुत असुविधा हो तो वे प्रसन्नतापूर्वक सहन कर लें।

मिर्ज़ा मुग़ल : जहांपनाह की आज्ञा का पालन होगा।

बहादुरशाह : अब समय काफी हो चुका है। आज की हमारी बैठक समाप्त होती है। कल हम लोग फिर एकत्र होंगे जिसमें सरदार बख्तखां का स्वागत किया जाएगा एवं भविष्य के लिए योजनाएं बनाई जाएंगी।

[सबका एक ओर, दूसरी ओर बहादुरशाह 'ज़फ़र' का प्रस्थान।]

[पट-परिवर्तन]

तीसरा दृश्य

[स्थान—पूर्ववत् । समय—दिन । कक्ष आज विशेष रूप से सजा हुआ है और अनेक लोगों के बैठने के लिए मसनद रखे हुए हैं। ज़ीनत महल और हकीम एहसानुल्लाखां बैठे हुए परस्पर चर्चाएं कर रहे हैं।]

ज़ीनत महल : हकीमजी, आप तो कहते थे कि विजय अंग्रेज़ों की होगी किंतु दिल्ली में हमारे झंडे को फहराए हुए ४२ दिन हो गए हैं लेकिन शत्रु का एक परिंदा भी दिल्ली की चहारदीवारी के अंदर प्रवेश करने में सफल नहीं हो सका । देश के अन्य भागों में भी फिरंगियों का सूर्य अस्ताचल की ओर बड़ी शीघ्रता से बढ़रहा है । झांसी और कानपुर में अंग्रेज़ी राज्य समाप्त हो गया और प्रत्येक गोरे का, यहां तक कि स्त्री–बच्चों तक का सफाया किया जा चुका है। लखनऊ में भी अंग्रेज़ रेज़ीडेंसी के भीतर पिंजरे में पड़े चूहे की भांति बेबस घिरे पड़े हैं। अब भी क्या आप वही राग अलापे जाएंगे कि विजय अंग्रेज़ों की होगी ?

[मिर्ज़ा जवांबक्त का प्रवेश]

जवांबक्त : नहीं, नहीं, अंग्रेज़ों को विजय प्राप्त नहीं होगी—कभी नहीं होगी । अवध से जो समाचार हमें प्राप्त हुए हैं, उनसे जान पड़ता है कि अंग्रेज़ों की न केवल वे सेनाएं जो भारतीय सैनिकों से निर्मित हुई हैं, इस संग्राम में हमारे झंडे के नीचे आ गई हैं बल्कि अवध के नवाब के ६० हज़ार आदमी भी जिन्हें अंग्रेज़ों ने पदच्युत कर दिया है, बेगम

हज़रत महल के नेतृत्व में अंग्रेज़ों से लोहा लेने मैदान में उतर पड़े हैं। अवध और रुहेलखण्ड के अधिकतर ज़मींदार, उनके सिपाही, तीन सौ किले, जिनमें बहुतों पर भारी तोपें लगी हैं, सब अंग्रेज़ों के विरुद्ध खड़े हो गए हैं। अंग्रेज़ी सेना से जो सैनिक पेंशन पा चुके थे, वे भी हमारे पक्ष में विप्लव में सम्मिलित हो गए हैं। भारत की सोई हुई शक्ति जाग पड़ी है। अब अंग्रेज़ भारत में कुछ समय के ही मेहमान हैं।

[मिर्ज़ा जवांबक्त बैठता है।]

हकीम एहसानुल्लाखां : ये घटनाएं हमें अवश्य ही एक आशा दिलाती हैं कि अंग्रेज़ों की प्रभुता का सूर्य सदा के लिए अस्त हो जाएगा, अंग्रेज़ों के लिए काल-रात्रि का आगमन हो गया है लेकिन जो दृष्टि दूर तक झांक सकती है, वह भ्रम में नहीं पड़ेगी। कानपुर में १००० अंग्रेज़ छोटी-सी और शीघ्रता में बनाई हुई गढ़ी में २३ दिन तक नानासाहब के सहस्रों सैनिकों का सामना करते रहे, यह क्या साधारण बात है? नाना साहब और तांत्या टोपे जैसे रण-कुशल सेनापतियों को उन्होंने क्या कम छकाया? आठों पहर की गोलाबारी में भी उन्होंने धीरज नहीं छोड़ा। दिल्ली नगर पर तो उस कहर का दसवां हिस्सा भी अभी नहीं टूटा। खुदा न करे वह बुरा दिन आए, लेकिन यदि आया तो देखना जो आज बड़ी-बड़ी डींगें मारते हैं, उनके दर्शन मिलने भी कठिन हो जाएंगे।

ज़ीनत महल : किंतु ऐसे कुसमय की आप कल्पना ही क्यों करते

हैं हकीमजी !

हकीम एहसानुल्ला खां : मैं तो ऐसे कुसमय को दिल्ली से दूर ही रखना चाहता हूं। जीवन-भर मैं जहांपनाह की सेहत का रखवाला रहा हूं, इस कारण वे मेरा विश्वास करते हैं, मेरी सम्मति का आदर करते हैं लेकिन इस बार शाहज़ादे उनपर हावी हो गए हैं, मेरी बात ही नहीं सुनते। शाहज़ादों ने कभी घोड़े की रास भी नहीं थामी और कदाचित् एक चिड़िया भी नहीं मारी, आज वे सेनापति बने हैं। और क्यों न बनते ? उनको अपना भविष्य इसीमें सुरक्षित नज़र आता है। कल तक उन्हें अपने मनोरंजनों के लिए सदा ही धनाभाव रहता था—आज वे सैनिकों के व्यय के नाम पर नगर के धनी साहूकारों से मनमाना रुपया लूटकर अमीर बन गए हैं। सैनिक अपनी जानें खपाते हैं, ये ऐश करते हैं। मैं कहता हूं यह क्या युद्ध करने का तरीका है ? हमारा उससे भी बुरा हाल होगा जैसा अंग्रेज़ों का कानपुर में हुआ है।

जवांवक्त : (अट्टहास करके) बुरा हाल होगा ? मैं कहता हूं, दिल्ली में भी अंग्रेज़ों का वही हाल होगा जो कानपुर और झांसी में हो चुका है। अब हमारे बीच भी एक चतुर सेनापति आ गया है ! मिर्ज़ा मुग़ल, मिर्ज़ा कोयाश, मिर्ज़ा अबूबकर और मिर्ज़ा खिज्र सुलतान के अनाड़ी और दुर्बल हाथों में अब युद्ध का संचालन नहीं रहेगा।

ज़ीनत महल : मैं रुहेलों से घृणा करती हूं, फिर भी एक प्रकार से यह अच्छा समाचार है, यही कहूंगी। सच पूछो तो ये

शाहज़ादे इतने शक्तिशाली हो उठे थे कि हमारे लिए संकट ही बन गए थे। अब इनकी शक्ति पर अंकुश तो लगेगा।

हकीम एहसानुल्ला खां : इतना तो अच्छा है कि जो शाहज़ादे वलीअहद के मार्ग के कांटे हैं उनकी स्थिति अब कमज़ोर हो जाएगी लेकिन साथ ही यह रुहेला सरदार अंत में जहांपनाह के लिए भी एक विपत्ति बन जाएगा ऐसी मुझे आशंका है। रुहेलों और मुगलों की वंशानुगत शत्रुता रही है और समय पाकर वह बदला चुकाएगा।

[बहादुरशाह 'ज़फ़र' का प्रवेश। उनके पीछे-पीछे एक नौकर हुक्का लिए आता है जो उसे सम्राट के आसन के पास रखकर चला जाता है। सम्राट पूरी पोशाक में हैं। उनके आते ही सब खड़े होते हैं।]

बहादुरशाह : यहां तो मलिका का दरबार लगा हुआ है।

ज़ीनत महल : नहीं जहांपनाह, दरबार तो सम्राट का ही लग सकता है। हम लोग तो आपके सुख-सौभाग्य के सम्बन्ध में चर्चाएं कर रहे थे। सुना है, बरेली का सरदार बख्तखां दिल्ली आ पहुंचा है।

बहादुरशाह : हां, विजयी सेनापति सरदार बख्तखां बरेली में अंग्रेज़ी राज का अंत करके अब हमारी सेवा में उपस्थित हुआ है। हमने उसे यहीं बुलाया है। आज सचमुच बहुत प्रसन्नता का दिन है। अभी-अभी बिठूर से भी एक अश्वारोही समाचार लाया है कि परसों वहां नाना साहब पेशवा का राज्याभिषेक बड़ी धूमधाम से हुआ है।

हकीम एहसानुल्ला खां : तब मेरी आशंका सत्य ही सिद्ध हो रही है।

बहादुरशाह : कैसी आशंका ?

हकीम एहसानुल्ला खां : यह मराठा ब्राह्मण बहुत चालाक है। यहां तो आपसे कह गया था कि भारत से अंग्रेज़ों को निकालकर मुगल सम्राट को फिर से भारत का शासक बनाएगा लेकिन उसने आपको बाला-ए-ताक रखकर अपना राज्याभिषेक भी करा लिया। असल में ये भारत में हिन्दू राज्य स्थापित करना चाहते हैं।

बहादुरशाह : (मुसकराते हैं।) बस, इतनी-सी बात के लिए हकीमजी का दम निकलने लगा। तुमको मालूम होना चाहिए कि पेशवा के राज्याभिषेक के समय सबसे पहले १०१ तोपों की सलामी देकर हमारा सम्मान किया गया और हमें भारत का सर्वोपरि शासक स्वीकार किया गया है।

हकीम एहसानुल्ला खां : नाना साहब की ईमानदारी की परीक्षा का समय कदाचित् अभी आया नहीं। यदि सचमुच ही अंग्रेज़ भारत से चले गए तो देखेंगे कि कौन भारत का वास्तविक शासक बनेगा।

ज़ीनत महल : दिल्ली सदा से ही भारत के शासन का केन्द्र रही है और जो दिल्ली का अधिपति होगा वही भारत का सम्राट होगा, इसमें सन्देह करने का कोई कारण नहीं है।

हकीम एहसानुल्ला खां : लेकिन अंग्रज़ों के चले जाने के बाद नाना साहब जैसे कछुए अपने हाथ-पैर बाहर निकालेंगे। तब देखना कि दिल्ली पर वास्तविक अधिकार किसका होगा। कहीं ऐसा तो नहीं होगा कि जहांपनाह मराठों के

उसी प्रकार आश्रित बने रहेंगे जिस प्रकार अंग्रेज़ों के थे।

बहादुरशाह : हकीमजी, याद रखिए, विश्वास करने से विश्वास उत्पन्न होता है। हमारे हृदय में यदि कपट नहीं है तो हमसे भी कोई कपट नहीं करेगा, यदि उसमें लेशमात्र भी इन्सानियत है। नाना साहब और हम एक ही नौका के यात्री हैं और सम्मिलित प्रयत्न से ही भंवर से अपनी नौका को पार लगा सकते हैं। यह संकट हम सारे भारतवासियों को एक सूत्र में बांधने के लिए आया है और एक प्रकार से अभिशाप के रूप में हमें वरदान सिद्ध होगा। हम जानते हैं हकीमजी, कि आप जो कुछ कहते हैं हमारे प्रति हितचिंतन से ही कहते हैं लेकिन हमें ऐसा लगता है कि आजकल आपकी दृष्टि धुंधली पड़ गई है।

[बहादुरशाह 'ज़फ़र' अपने विशेष मसनद के सहारे बैठते हैं और हुक्के का लेजम हाथ में लेकर कश खींचते हैं।]

हकीम एहसानुल्ला खां : यदि मेरा परामर्श जहांपनाह को अनुचित जान पड़ता है तो मैं इसके लिए क्षमाप्रार्थी हूं। मैं जो कुछ कहता हूं, अपने विश्वास के अनुसार ही कहता हूं। आपके सेवक के नाते आपकी आज्ञाओं का पालन भी करता हूं चाहे उनसे सहमत न होऊं।

बहादुरशाह : बैठो मलिका! तुम भी बैठो हकीमजी, शाहज़ादे तुम भी, अभी थोड़ी देर बाद ही सरदार बख्तखां आएगा। उसे हम नियमपूर्वक मुख्य सेनापति बनाएंगे तथा भविष्य में नगर का प्रबन्ध और युद्ध का संचालन कैसे किया जाए, इस सम्बन्ध में भी निर्णय लेंगे। तुम लोग अपनी सम्मति दे

सकते हो।

[हकीम एहसानुल्ला खां और मिर्ज़ा जवांवक्त बैठ जाते हैं लेकिन ज़ीनत महल नहीं बैठती।]

बहादुरशाह : तुम भी बैठो मेरी नूरजहां! तुम्हारे बिना तो कोई भी महत्त्वपूर्ण निर्णय नहीं लिया जा सकता।

ज़ीनत महल : क्षमा कीजिए जहांपनाह। अब न तो आप जहांगीर हैं न मैं नूरजहां। वे दिन गए जब शाहंशाहे हिंद को एक स्त्री के परामर्श की आवश्यकता थी। मेरा स्थान हरम में है। मैं जाने की आज्ञा चाहती हूं।

बहादुरशाह : लेकिन आज तक हर महफिल में, हर मजलिस में तुम हमारे साथ रही हो, आज क्या बिल्ली रास्ता काट गई ?

ज़ीनत महल : असल बात यह है कि जहांपनाह तो राग-द्वेष से ऊपर उठकर फरिश्ता बन गए हैं लेकिन मैं तो इसी जगत में रहनेवाली नारी हूं। आखिर बख्तखां रुहेला है, उसकी रगों में ऐसे व्यक्ति का रक्त है जिसने कभी मुग़ल शाहज़ादियों को निर्वस्त्र होकर अपने सामने नृत्य करने को बाध्य किया था। मैं किसी रुहेले की शक्ल नहीं देखना चाहती।

[ज़ीनत महल का प्रस्थान।]

बहादुरशाह : कितने दुःख की बात है कि मनुष्य बाप-दादों के अपराध के लिए उनकी संतान को दंड देते हैं। किसके पुरखों ने किसीके पुरखों के साथ क्या किया, इसका हिसाब लगाया जाए तो सारे संसार में एक भी व्यक्ति ऐसा न

निकलेगा जो किसी दूसरे व्यक्ति की गर्दन काटने के लिए तैयार न होगा। इन्सानियत वैर को याद रखने में नहीं, भूल जाने में है। आज हम सारे अतीत काल के वैर-भावों को भुलाकर एक जान होकर अपने देश की पराधीनता की बेड़ियां काटने के लिए अग्रसर हुए हैं। हमें एक क्षण के लिए भी अपना लक्ष्य नहीं भुलाना चाहिए।

[बख्तखां का प्रवेश। वह प्रौढ़ आयु का लंबे और बलिष्ठ शरीरवाला व्यक्ति है। उसका व्यक्तित्व आकर्षक और प्रभावशाली है।]

बख्तखां : (कोर्निश करता हुआ) जहांपनाह को मुहम्मद बख्तखां कोर्निश अदा करता है।

बहादुरशाह : हम वीरवर सरदार बख्तखां का स्वागत करते हैं। आओ, बैठो हमारे पास।

बख्तखां : जहांपनाह, मैं सिपाही आदमी हूं, राजसभा में शाहंशाहे हिन्द के पास बैठने की धृष्टता मैं नहीं कर सकता। घोड़े की पीठ ही मेरे लिए सबसे ऊंचा स्थान है।

[मिर्ज़ा मुग़ल, मिर्ज़ा कोयाश और मिर्ज़ा अबूबकर का प्रवेश।]

मिर्ज़ा मुग़ल : (कोर्निश करता हुआ) जहांपनाह को मिर्ज़ा मुग़ल कोर्निश अदा करता है।

मिर्ज़ा कोयाश : (कोर्निश करता हुआ) जहांपनाह को कोयाश कोर्निश अदा करता है।

मिर्ज़ा अबूबकर : (कोर्निश करता हुआ) जहांपनाह को अबूबकर कोर्निश अदा करता है।

बहादुरशाह : बैठो शाहज़ादो।

[तीनों शाहज़ादे बैठते हैं।]

बहादुरशाह : हम कहते हैं, बख्तखां, तुम भी बैठो !

बख्तखां : जहांपनाह, बख्तखां तभी बैठेगा जब वह उस उद्देश्य की पूर्ति कर लेगा जिसके लिए वह यहां आया है।

हकीम एहसानुल्ला खां : दिल्लीवालों को आपसे बहुत आशाएं हैं।

मिर्ज़ा जवांबक्त : हम ४२ दिन से दिल्ली की स्वाधीनता के लिए जूझ रहे हैं लेकिन अभी तक न तो अंग्रेज़ दिल्ली नगर में प्रवेश करने में सफल हुए न हम उन्हें पहाड़ी पर से हटाने में।

बख्तखां : दिल्ली के युद्ध पर सारे भारत की दृष्टि गड़ी हुई है। यहां सम्पूर्ण भारत की प्रतिष्ठा दांव पर लगी हुई है। इस कारण यह हम सभी का कर्त्तव्य है कि हम पूर्ण पराक्रम, संगठन, उत्साह और अनुशासन से यहां के युद्ध का संचालन करें। मैं बरेली में रहकर भी दिल्ली की परिस्थिति के समाचार एकत्रित करता रहा हूं। और मुझे आप लोग क्षमा करें कि उन समाचारों से मेरे मन को सन्तोष नहीं हुआ इसीलिए मैंने शाहंशाह की सेवा में उपस्थित होने का निर्णय लिया। मैं अपने साथ चार पदाति पलटनें, सात सौ अश्वारोही सैनिक, छः घुड़चढ़ी तोपें, तीन बड़ी तोपें और अस्त्र-शस्त्र लेकर आया हूं। मैंने अपनी सेना का छः महीने का वेतन अग्रिम दे दिया है। इसके पश्चात् भी मेरे पास चार लाख रुपये शेष हैं जो शाही कोष में जमा करा दूंगा।

बहादुरशाह : हम तुम्हारी इस सहायता के लिए बहुत आभारी हैं। लेकिन हमारे लिए सेना, शस्त्रों और धन से अधिक

मूल्यवान तुम्हारा युद्धक्षेत्र का अनुभव है। युद्ध के संचालन का भार भी हम तुमको सौंपना चाहते हैं।

बख्तखां : जहांपनाह, मैं अक्खड़ पठान हूं, आन के लिए प्राण चढ़ा देना हम पठानों के लिए एक खेल है। लेकिन अंग्रेज़ों से युद्ध करके सफलता पाने के लिए केवल व्यक्तिगत वीरता ही पर्याप्त नहीं है। वीरता में हम भारतीय किसी भी प्रकार अंग्रेज़ों से हीन नहीं हैं, अंग्रेज़ों की भारत में हुई सभी लड़ाइयां उनके लिए हमींने जीती हैं। आज भी दिल्ली को पुनः जीतने अंग्रेज़ों की जो सेनाएं आई हैं उनमें भी बहुसंख्या भारतीयों की है। अंग्रेज़ यदि श्रेष्ठ हैं तो अनुशासन और सैन्य-संगठन में—योजना के अनुसार कार्य करने में, सेना और शस्त्रों का समयानुकूल प्रयोग करने में। यह तभी सम्भव है जब सारी सेनाएं किसी एक अनुभवी, योग्य और साहसी व्यक्ति की अधीनता में हों, सेना के पास पर्याप्त शस्त्रास्त्र हों, उसे समय पर राशन प्राप्त हो।

मिर्ज़ा जवांवक्त : आपसे अधिक योग्य व्यक्ति हमें और कौन प्राप्त होगा ? भाग्य से खुदा ने आपको यहां भेज दिया है।

मिर्ज़ा कोयाश : हम आपके आदेशों का पालन करेंगे।

मिर्ज़ा अबूबकर : मैं तो एक साधारण सैनिक के रूप में भी युद्ध-भूमि में कार्य करने को प्रस्तुत हूं।

हकीम एहसानुल्ला खां : किन्तु, एक कठिनाई है कि विभिन्न स्थानों से आई हुई सेनाएं क्या बख्तखां बहादुर के नेतृत्व

में युद्धभूमि में कार्य करने को प्रस्तुत होंगी ? शाहज़ादे आखिर मुग़ल राजवंश के दीपक हैं, उनके व्यक्तित्व की पृष्ठभूमि में एक गौरवपूर्ण इतिहास है जिसके कारण प्रत्येक सैनिक उनका सम्मान करता है और उनकी आज्ञा मानता है। भारत में परम्परा ऐसी ही चली आई है कि सेनापति प्राय: राजवंश में से ही होते चले आए हैं।

मिर्ज़ा मुग़ल : मुझे व्यक्तिगत रूप से मुख्य सेनापति बने रहने का चाव नहीं है। लेकिन देश के व्यापक हित में मुझे कहना पड़ता है कि मुग़ल साम्राज्य में जो प्रसिद्ध सेनापति, हिंदू अथवा मुसलमान हुए हैं वे सभी राजवंशों में से होते आए हैं, इसलिए सम्राट कोई नई परम्परा डालने से पूर्व उसके परिणामों को सोच लें।

बहादुरशाह : समय और परिस्थिति के अनुसार परम्पराओं को परिवर्तित करनेवाले देश ही जीवित रह सकते हैं। यदि राजवंश के व्यक्तियों में युद्ध-संचालन की योग्यता हो, साहस हो, नैतिक बल और आत्मविश्वास हो तो निश्चय ही उनके सेनापतित्व में सेना उत्साह से भाग लेगी। लेकिन उनमें इन गुणों का अभाव हो तो मुख्य सेनापतित्व की पगड़ी उसी व्यक्ति के सर पर बांधी जानी चाहिए जिसने युद्धों का प्रत्यक्ष अनुभव प्राप्त किया हो। इसलिए हमारा यह निश्चय है कि आज से सेना के मुख्य सेनापति सरदार बख्तखां बहादुर होंगे जिन्हें आज हम अपना पुत्र स्वीकार करते हैं। मुख्य सेनापति के साथ हम उन्हें दिल्ली का मुख्य शासक भी नियुक्त करते हैं……

हकीम एहसानुल्ला खां : किंतु, जहांपनाह !...

बहादुरशाह : ठहरो, अभी हमारी बात पूरी नहीं हुई। शाहज़ादा मिर्ज़ा मुग़ल मुख्य सेनापति का सहायक होगा। इसके अतिरिक्त बख्तखां जिस व्यक्ति को जो काम सौंपना चाहें, सौंपें। इन्हें पूर्ण स्वतन्त्रता होगी।

बख्तखां : जहांपनाह सेवक से क्या अपेक्षा करते हैं ?

बहादुरशाह : हमारी तुमसे पांच अपेक्षाएं हैं। पहली यह कि शत्रुओं के मोर्चों को तोड़ो जिन्हें तोड़ने का हम इतने दिनों से प्रयत्न कर रहे हैं; दूसरी यह कि जो सवार तथा सिपाही किले के भीतर तथा नगर में ज़बर्दस्ती घुस आए हैं उनके लिए ऐसा प्रबन्ध करो कि वे शहरपनाह के बाहर ठहरें और लूट-मार तथा प्रजा को कष्ट पहुंचाने से उन्हें रोका जाए; तीसरी यह कि नवीन तथा प्राचीन सेवकों का वेतन बंट जाए; चौथी यह कि लगान की वसूली तथा थानों का प्रबन्ध सेना द्वारा किया जाए; पांचवीं यह कि शहर के अधिकतर दुष्ट तिलंगों का वेश बनाकर शरीफों तथा भले आदमियों के घरों में ये बहाना बनाकर घुस आते हैं कि वे शत्रुओं को शरण दिए हुए हैं अथवा रसद या समाचार शत्रुओं को पहुंचाते हैं और उनकी धन-सम्पत्ति लूट लेते हैं, उनकी रोकथाम की जाए।

बख्तखां : जहांपनाह ने सैनिक और नागरिक दोनों शासनों का उत्तरदायित्व मुझपर डाला उसको मैं सफलतापूर्वक निभा सकूं इसके लिए मुझे आशीर्वाद दीजिए। मैं गंवार पठान आदमी हूं, मुझे घुमा-फिराकर बात करना नहीं आता,

इसलिए मैं स्पष्ट कहता हूं कि मेरा शासन कठोर होगा, यदि शाहज़ादे हुज़ूरों ने भी नागरिकों से अपने लिए धन प्राप्त करने की कोशिश की तो मेरा शासन-दंड उन-पर भी चलेगा, उस समय सम्राट पितृ-प्रेम के कारण दया करना चाहेंगे तो मुझे बहुत निराशा होगी।

बहादुरशाह : हम ऐसा ही कठोर शासन चाहते हैं। शाहज़ादों को भी नियम, नियन्त्रण और अनुशासन में रहना होगा।

बख्तखां : जहांपनाह, मैं गरीब लोगों में से हूं और समझता हूं कि सर्वसाधारण प्रजा की सहानुभूति ही वह बल है जो हमें विजय के निकट ले जाएगी, अतः मैं चाहता हूं कि अंग्रेज़ी राज और हमारे राज का अन्तर वे तुरन्त समझें।

मिर्ज़ा कोयाश : इसके लिए क्या किया जाए ?

बख्तखां : जहांपनाह नमक और शक्कर पर से कर उठा दें।

हकीम एहसानुल्ला खां : युद्ध के समय हमें आमदनी बढ़ाने का यत्न करना चाहिए न कि घटाने का।

बख्तखां : युद्ध एक असाधारण स्थिति है और उसमें व्यय भी असाधारण होता है और उसके लिए प्रजा को भी और शासकों को भी त्याग करना पड़ता है और कष्ट सहने पड़ते हैं। फिर भी शासक का कर्तव्य है कि निर्धन प्रजा के कष्टों का ध्यान रखें। धन तो प्राप्त करना ही होगा, लेकिन उन्हींसे जिनके पास है। जो गाय भूखी है वह दूध क्या देगी ? हमें रईसों, जागीरदारों, सेठ-साहूकारों का विश्वास और सहयोग प्राप्त कर युद्ध के व्यय का प्रबन्ध करना होगा, मालगुज़ारी की वसूली का ठीक प्रबन्ध करना होगा तथा

अपने व्यक्तिगत खर्चे कम करने होंगे।

बहादुरशाह : हम तुमसे सहमत हैं, बख्तखां ! तुम जिस तरह भी चाहो राज का प्रबन्ध करो, हमारी एकमात्र अभिलाषा यह है कि सैनिकों को वेतन समय पर मिले, उनका जो पिछला बकाया हो वह भी दे दिया जाए, साथ ही प्रजा पर भी ऐसा आर्थिक बोझ न पड़े कि वह हमारे राज को अभिशाप समझने लगे। हम आशा करते हैं कि राजवंश से सम्बन्ध रखनेवाले व्यक्ति सादा जीवन बिताकर अपने खर्चों में कमी करेंगे। हमने शराब पीनी छोड़ दी है, हम शाहज़ादों से भी चाहेंगे कि वे समय की मांग को समझें।

बख्तखां : जहांपनाह की उदारता ने मेरे हृदय को जीत लिया है। बड़े भाग्य से ही किसी देश को पिता के समान स्नेहशील शासक प्राप्त होता है। एक निवेदन मेरा और है।

बहादुरशाह : कहो। निस्संकोच कहो।

बख्तखां : शत्रु दो प्रकार के होते हैं। एक आंतरिक दूसरे बाह्य। बाह्य शत्रु को हम देख पाते हैं और उससे लोहा ले सकते है। किन्तु जो विश्वासघाती सांप बिलों में छुपे बैठे रहते हैं और रात्रि के अन्धकार में बाहर निकलकर आघात करते हैं वे अधिक भयानक होते हैं। मैं यद्यपि दिल्ली में नहीं था फिर भी मुझे इसके समाचार प्राप्त होते रहे हैं कि अंग्रेज़ों ने यहां अपने समर्थक प्राप्त कर लिए हैं। उनके गुप्तचर हमारी सामरिक योजनाएं उनको पहुंचाते रहते हैं। दिल्ली से रसद, शराब और अस्त्र-शस्त्र भी उन्हें प्राप्त

होते रहते हैं । शत्रु ने हमारी सुरक्षा के दुर्ग में जो गुप्त सेंध लगा रखी है, उसका भी प्रवन्ध करना होगा ।

मिर्ज़ा जवांवक्त : निश्चय ही हमें देशद्रोहियों का पता लगाकर उन्हें तोपों से उड़ा देना होगा ।

बख्तखां : हां, हम इस सम्बन्ध में अपराधियों पर दया नहीं कर सकते । मुझे अंग्रेज़ों की सेना का डर नहीं, उनकी तोपों का हम उचित उत्तर देने में समर्थ हैं—लेकिन हिंदुओं में कहावत है कि घर का भेदी लंका ढहावे । उसके अनुसार हमारा सम्पूर्ण साहस, सारी वीरता और सामरिक योजनाएं विफल हो जाएंगी यदि हम देशद्रोह के षड्यन्त्रों को समाप्त न कर सके ।

मिर्ज़ा अबूबकर : इस संवंध में आप क्या कदम उठाना चाहते हैं ?

बख्तखां : पहले हमें इस बात पर सोचना होगा कि अंग्रेज़ों से मिलकर देशद्रोह करने में व्यक्तिगत लाभ किसे हो सकता है, एवं स्वराज्य में किन व्यक्तियों को कष्ट प्राप्त होने की आशंका है । उदाहरण के लिए उन लोगों को लीजिए जो अंग्रेज़ों से पेंशन पाते हैं । इस अनिश्चित समय में उनकी पेंशनें बंद हैं तथा वे समझते हैं कि यदि अंग्रेज़ पराजित हुए तों उन्हें भविष्य में पेंशनें नहीं मिलेंगी । ये लोग, स्वाभाविक है कि, अंग्रेज़ों की विजय चाहते होंगे और उन्हें गुप्त समाचार पहुंचाने में सहायक होंगे ।

बहादुरशाह : हम समझ गए तुम्हारे आशय को, बख्तखां ! पहले हमें ऐसे उपाय करने चाहिए जिनसे उनके भय दूर

हो जाएं और वे भी स्वाधीनता के सग्राम में हमारे समर्थक बन जाएं।

बख्तखां : इसलिए यह आवश्यक है कि जहांपनाह घोषणा करें कि यह बात सबपर विदित है कि बहुत-से पेंशन पानेवाले, माफी की भूमि के स्वामी आदि जो इस शहर तथा आस-पास रहते हैं, उन्हें इस बात की शंका हो सकती है कि अंग्रेज़ों का राज्य समाप्त होने के कारण उनकी जीविका का साधन बंद हो जाएगा और इस विचार से वे अंग्रेज़ों के हितैषी बनकर षड्यन्त्र रच सकते हैं, समाचार और रसद पहुंचा सकते हैं, अतः यह आम हुक्म दिया जाता है कि विजय के उपरान्त प्रमाण मिल जाने पर जो जिसका होगा उसे प्रदान किया जाएगा, अशांति के कारण जितने दिन बंद रहेगा, वह भी उन्हें प्राप्त होगा। इस आदेश के प्राप्त होने के पश्चात् जो व्यक्ति किसी प्रकार के समाचार अथवा रसद अंग्रेज़ों को पहुंचाएगा उसे कठोर दंड दिया जाएगा। कोतवाल शहर को आदेश दिया जाता है कि तुम अपने इलाके के माफीदारों, जागीरदारों तथा पेंशनदारों को हमारा यह आदेश पहुंचा दो।

मिर्ज़ा अबूबकर : इससे उन लोगों के भय तो दूर हो जाएंगे जिनके हित अंग्रेज़ों से संलग्न हैं; लेकिन जिन लोगों को अंग्रेज़ प्रलोभन देकर हमारे विरुद्ध षड्यंत्र करने के लिए राज़ी कर रहे हैं, उनका भी तो उपाय होना चाहिए।

बख्तखां : हमें अपने गुप्तचर विभाग का उसी प्रकार संगठन

करना चाहिए जिस प्रकार अंग्रेज़ों ने हमारे विरुद्ध किया है। खैर, ये बातें हैं जो हमें सोच-विचारकर निश्चय करनी हैं। इस समय तो जहांपनाह आज्ञा दें तो दिल्ली में पहले से आई हुई सेनाओं का मुआयना करना चाहूंगा। दो-एक दिन के भीतर ही संपूर्ण सेना को एक सूत्र में बांधकर अंग्रेज़ों को पहाड़ी पर से हटाने के लिए सुयोजित आक्रमण करूंगा और मुझे विश्वास है कि खुदा की मर्ज़ी, जहांपनाह का आशीर्वाद सौर शाहज़ादों का सहयोग मुझे मिला तो शीघ्र ही हम अंग्रेज़ों पर विजय प्राप्त करेंगे।

बहादुरशाह : बहादुर बख्तखां, हम तुम्हारी वीरता, लगन, देश-प्रेम और सूझबूझ से बहुत प्रसन्न हुए। हम तुरन्त ही तुम्हारे मुख्य सेनापति और मुख्य शासक नियुक्त होने की घोषणा कराते हैं। उसके पश्चात् हम स्वयं छावनियों में तुम्हारे साथ चलेंगे और सेनाधिकारियों से शपथ लेंगे कि सारी सेनाएं तुम्हारे अनुशासन में युद्ध करेंगी। तुम उन्हें ज्वालामुखी के मुंह में कूद जाने को कहो तब भी संकोच न करेंगी। आज की खुशी के उपलक्ष्य में हम हकीम एहसानुल्लाखां को आज्ञा देते हैं कि ४००० रुपया तुरन्त सरदार बख्तखां को प्रदान किया जाए जो वे अपनी सेना में बंटवा दें।

[बहादुरशाह 'ज़फ़र' अपने स्थान से उठकर बख्तखां के पास आते हैं और उसके सर पर अपना हाथ रखते हैं।]

बहादुरशाह : तुम न केवल सेनानायक हो अपितु हमारे पुत्र

से भी बढ़कर हो। (अपनी कमर से तलवार खोलकर बख्तखां को देते हुए) हम तुम्हें अपनी निजी तलवार भेंट करते हैं। यह हमारे स्नेह और विश्वास की प्रतीक है। इसके यश और सम्मान का ध्यान रखना।

[बख्तखां तलवार लेकर अपने माथे से लगाता है।]

[पटाक्षेप]

तीसरा अंक

पहला दृश्य

[स्थान—पूर्ववत्। समय संध्या। सम्राट् बहादुरशाह 'ज़फ़र' मसनद के सहारे बैठे हैं और मिर्ज़ा जवांवक्त पास में बैठा हुआ समाचारपत्र पढ़कर सुना रहा है।]

बहादुरशाह : पढ़ो, आज के देहली उर्दू अखबार ने क्या लिखा है।

जवांवक्त : (समाचारपत्र पढ़ता है।) जो सूरत और उठान सरदार बख्तखां के कार्यों की है, उससे ज्ञात होता है कि खुदा की कृपा से यह सेना तथा नगर की प्रजा का सौभाग्य है कि यह उच्च पदाधिकारी राज्य-व्यवस्था तथा युद्ध-संचालन के लिए नियुक्त हुआ। जो-जो अफसर जिस-जिस कार्य के योग्य थे उनके लिए उसी प्रकार के कार्य नियमानुसार तथा राज्य के हित की दृष्टि से निश्चित किए गए। जो अधिकारी राज्य-प्रबन्ध समिति में सम्मिलित किए जाने योग्य थे, उन्हें उसमें लिया गया। वे अफसरों, सैनिकों तथा प्रजा से बड़ा सौजन्यपूर्ण व्यवहार करते हैं। उनके सुप्रबन्ध से इस सप्ताह में जो युद्ध हुआ, उसमें बहुत गोरे मारे गए, शत्रुओं की बहुत बड़ी भीड़ लूटी और मारी गई। एक दिन शत्रु की रसद पर अधिकार

जमा लिया गया। पूर्ण विश्वास है कि यदि इसी प्रकार इन्हीं के हाथ में शासन और युद्ध-संचालन रहा तो प्रजा भी सुखी रहेगी और अंग्रेज़ों पर भी विजय प्राप्त होगी।

बहादुरशाह : हमें संतोष है कि प्रजा ने बख्तखां के कार्यों का मूल्य समझा।

[मिर्ज़ा मुग़ल का प्रवेश]

मिर्ज़ा मुग़ल : जहांपनाह को मिर्ज़ा मुग़ल कोर्निश अदा करता है।

बहादुरशाह : आओ बैठो।

[मिर्ज़ा मुगल बैठता है।]

बहादुरशाह : कहो, कुछ नई बात है ?

मिर्ज़ा मुग़ल : बातें तो बहुत हैं, लेकिन जहांपनाह उनपर गम्भीरता से विचार करें तो मैं कुछ निवेदन करूं, नहीं तो मैं अपनी ज़बान पर ताला लगाए रखना ही उचित समझता हूं।

बहादुरशाह : हमारे पास साधारण से साधारण व्यक्ति भी स्वतन्त्रतापूर्वक अपनी बात कह सकता है। फिर तुम तो शाहज़ादे हो और जब से हम गद्दी पर बैठे हैं, तुम हमारे मुख्य दीवान के रूप में कार्य करते रहे हो। अन्य शाहजादों की भांति तुम तूफ़ानी प्रवृत्तियोंवाले नहीं हो, इसलिए भी हम तुम्हारी कद्र करते हैं। तुमने कभी वलीअहदी के लिए झगड़ा नहीं किया। हमने कुछ सोच-समझकर ही तुम्हें सेना का मुख्य सेनापति भी बनाया था।

[हकीम एहसानुल्ला खां का प्रवेश। उसके हाथ में कुछ कागजात हैं।]

हकीम एहसानुल्ला खां : (कोर्निश करता हुआ) जहांपनाह को हकीम

एहसानुल्ला खां कोर्निश अदा करता है।

बहादुरशाह : आओ हकीमजी, बैठो।

[हकीम एहसानुल्ला खां स्थान ग्रहण करता है।]

बहादुरशाह : (मिर्ज़ा मुग़ल से) तुम्हें जो कहना हो, निस्संकोच और निर्भय होकर कहो।

मिर्ज़ा मुग़ल : जब से बख्तखां का आगमन हुआ है, मुझे दुःख के साथ कहना पड़ता है कि नगर के रईसों और सेठ-साहूकारों में आतंक छा गया है। वे अपने उत्साह में इस बात को भूल गए हैं कि मुग़ल शासकों का इन रईसों से क्या परम्परागत सम्बन्ध है।

हकीम एहसानुल्ला खां : जी हां, जहांपनाह, मेरे पास भी अनेक प्रार्थना-पत्र आए हैं जिनमें इस रुहेला सरदार के कार्यों की आलोचना की गई है।

मिर्ज़ा जवांबख्त : किन्तु इस अखबार ने उनकी बहुत प्रशंसा की है।

हकीम एहसानुल्ला खां : अखबार में अपनी प्रशंसा प्रकाशित कराने की बख्तखां को आवश्यकता जान पड़ी, यही इस बात का प्रमाण है कि कुछ दाल में काला अवश्य है।

बहादुरशाह : हम अनुभव करते हैं कि बख्तखां के आगमन के दिन से ही तुम लोग उसके विरुद्ध हो। हम तो समझते हैं कि वह एक ईमानदार शासक और वीर योद्धा है। राज्य-प्रबन्ध में भी और सैन्य संचालन में भी कठोर अनुशासन देखना चाहता है, क्योंकि उसने अंग्रेज़ी सेना में रहकर स्वयं कठोर अनुशासन में जीवन व्यतीत किया है और वह उसके महत्त्व को समझता है।

मिर्ज़ा मुग़ल : क्षमा कीजिए जहांपनाह, आप जो देखते हैं अपने कानों से देखते हैं और हम लोग जो देखते हैं वह आंखों से देखते हैं; आप जो विचार करते हैं वह हृदय से करते हैं और हम लोग अपने मस्तिष्क का भी प्रयोग करते हैं। जिन्हें रात-दिन सैनिकों और प्रजा में रहने का अवसर मिलता है, वे ही उनकी वास्तविक भावनाओं और समस्याओं को जान पाते हैं।

हकीम एहासानुल्ला खां : (एक पत्र खोलता हुआ) यह देखिए, नगर के गण्यमान्य व्यक्तियों का यह पत्र है। इसमें लिखा है कि कोतवाल ने उन्हें आदेश दिया है कि वे सशस्त्र तथा संगठित होकर बरेली की सेना के आधीन तैयार रहें। पता नहीं इस आदेश का अर्थ क्या है। क्या उन लोगों को भी जिन्होंने कभी शस्त्र नहीं पकड़े अब युद्धभूमि में प्राण गंवाने जाना पड़ेगा ?

[बख्तखां का प्रवेश]

बख्तखां : जहांपनाह को बख्तखां कोर्निश अदा करता है।

बहादुरशाह : आओ बख्तखां, चर्चा तुम्हारे ही सम्बन्ध में हो रही थी।

बख्तखां : जी, अंतिम कथन मैंने सुन लिया है। मेरे मुंह से यदि कोई कठोर शब्द निकल जाए तो मैं उसके लिए पहले से ही क्षमा मांग लेता हूं। मानता हूं, मैंने नागरिकों को सशस्त्र रहने की आज्ञा दी है, जिनके पास शस्त्र न हों उन्हें मुफ्त शस्त्र देने का प्रबन्ध भी मैंने किया है। पता नहीं कोतवाल ने किस रूप में मेरी बात नागरिकों के पास पहुंचाई और विघ्न-

संतोषियों ने उसका क्या आशय उन्हें समझाकर भड़का दिया। मैंने उन्हें सेना में कार्य करने का आदेश तो नहीं दिया।

मिर्ज़ा जवांबख्त : नागरिकों को सशस्त्र करने से आपको क्या लाभ है ?

बख्तखां : लाभ प्रत्यक्ष है। सेना का कोई व्यक्ति हो, चाहे गुंडा हो, यदि वह नागरिकों को लूटने का यत्न करे तो वे अपनी रक्षा तुरन्त कर सकेंगे। नागरिकों में आत्मविश्वास और अपनी रक्षा स्वयं करने की भावना जागनी चाहिए। अपनी प्रजा को निश्शस्त्र वही शासक करता है जो विदेशी और अत्याचारी होता है, जिसे प्रजा का विश्वास प्राप्त नहीं है।

मिर्ज़ा मुग़ल : आपने मेरे विरुद्ध भी जांच जारी की है यह आरोप लगाकर कि मैंने सेठ-साहूकारों से बलपूर्वक धन एकत्र किया है और उसे राजकोष में जमा नहीं किया।

बख्तखां : मैंने शाहंशाह को प्रारम्भ में ही कह दिया था कि मैं शाहज़ादों की मनमानी भी नहीं चलने दूंगा। न्याय के सम्मुख छोटे और बड़े का भेद नहीं होता। आपकी जो आवश्यकताएं हैं, उनके अनुसार आपका वेतन नियत है। आपको कोई अधिकार नहीं कि आप अपने खर्चों के लिए या मौज-मज़े के लिए प्रजा से अनियमित तरीके से धन वसूल करें। आज आप ऐसा करेंगे तो कल साधारण सैनिक भी यही करेगा।

मिर्ज़ा मुग़ल : लेकिन आप मुझपर मिथ्या आरोप लगाकर शाहंशाह, प्रजा और सैनिकों में बदनाम करके मुझे

सबकी नजर में गिरा देना चाहते हैं—मेरा प्रभाव नष्ट कर देना चाहते हैं ताकि आपका कोई प्रतिद्वन्द्वी न रहे। मैं कह देना चाहता हूं कि मैंने कभी किसीके धन का अपहरण नहीं किया। मैं एक रुपया और एक लाख रुपये का मूल्य बराबर मानता हूं। आज आप शाहज़ादों को निश्शक्त बनाने में लगे हैं, कल के दिन शाहंशाह के ऊपर भी हाथ साफ करेंगे।

बख्तखां : नहीं शाहज़ादा हुज़ूर ! बख्तखां को सत्ता प्राप्त करने का मोह नहीं है। वह तो एक साधारण सैनिक है। वैसे तो खींचतान करने से उसका भी किसी राजवंश से सम्बन्ध स्थापित किया जा सकता है लेकिन वह राजवंश में जन्म लेने को कोई गौरव की बात नहीं मानता। शाहंशाह का आदर भी वह केवल इसलिए करता है कि वे एक उदार और स्नेही पुरुष हैं। आज भारत ने उन्हें भारतीय एकता का प्रतीक बनाया है। आज भारत को एक ऐसे व्यक्ति की आवश्यकता है जिसके नाम पर विशृंखल शक्तियां एकत्रित हो सकें। वह व्यक्ति है सम्राट बहादुरशाह 'ज़फ़र'। उनके सम्मान की रक्षा में भारत का सम्मान है और भारत का सम्मान आज उनके कार्यों पर निर्भर है। यदि वे चाहेंगे तो बख्तखां दिल्ली में रहेगा, नहीं तो चला जाएगा।

बहादुरशाह : तुम लोगों के झगड़ों ने हमें बहुत दुःखी कर दिया है। क्या हम भारतीय एकमत होकर कभी अपने देश की स्वतन्त्रता और उन्नति के लिए कार्य नहीं कर सकेंगे ?

मिर्ज़ा मुग़ल : एकमत होने का अर्थ यह नहीं है जहांपनाह, कि साधारण-सा व्यक्ति आकर सारी सत्ता पर अधिकार कर ले, अपने-आपको सम्राट का भी सम्राट समझे और हम सारे अपमान निरीह गधे की भांति सहते जाएं। इन्हें अंग्रेज़ों से लड़ने की उतनी चिन्ता नहीं है जितनी अपनी प्रभुता के प्रदर्शन की। आज मैं सेना को तैयार करके आक्रमण हेतु बाहर निकला किन्तु इन्होंने विघ्न डालकर पूरी सेना को व्यर्थ खड़ा रखा। यह कहकर कि इनकी अनुमति के बिना सेना बाहर नहीं जा सकती इन्होंने सेना को वापस लौटा दिया। इससे सैनिकों के सामने मेरा अपमान हुआ।

बख्तखां : मुझे दुःख है कि मुझे आपकी कार्रवाई में हस्तक्षप करना पड़ा किन्तु मेरा उद्देश्य आपका अपमान करना नहीं था। आपने आक्रमण की क्या योजना बनाई है, इसकी कोई जानकारी मेरे पास नहीं है। हमारे लिए यह बहुत ही नाज़ुक समय है, अंग्रेज युद्ध-कौशल में असाधारण योग्यता रखते हैं, उनपर हम जो भी आक्रमण करें उसे परस्पर भली भांति सोच-विचार कर योजनापूर्वक करें। एक-एक कदम समझदारी के साथ उठाएं, हमारी सेनाओं का पारस्परिक तारतम्य टूटने न पाए। इसी काम के लिए तो मुख्य सेनापति होता है। हो सकता है आज के आक्रमण में आपको कुछ सफलता भी मिल जाती—आपको कीर्ति भी प्राप्त होती किन्तु क्या किसी एक झड़प से हम पूर्ण विजय प्राप्त कर सरते हैं ? नहीं। ऐसी

स्थिति में मैं अपनी किसी सेना को स्वतन्त्र कार्रवाई करने की आज्ञा नहीं दे सकता।

मिर्ज़ा मुग़ल : इस अपमानजनक परिस्थिति में मैं इस युद्ध में कोई भाग नहीं ले सकता। शाहंशाह मुझे छुट्टी दे सकते हैं।

हकीम एहसानुल्ला खां : लेकिन इतनी सरलता से आप अपने उत्तरदायित्व से छुटकारा नहीं पा सकते। माना कि बरेली की सेना बख्तखां के इशारे पर प्राण देने को प्रस्तुत है, लेकिन दिल्ली में केवल बरेली की ही तो सेना नहीं है। देश के कोने-कोने से अनेक सेनाएं एकत्र हुई हैं, उनका विश्वास किसपर है, यह भी तो हमें मालूम करना चाहिए। अनेक सेनाओं ने यह प्रार्थना-पत्र शाहंशाह की सेवा में उपस्थित करने के लिए दिया है।

[हकीम एहसानुल्लाखां एक पत्र शाहंशाह बहादुरशाह 'ज़फ़र' को देने के लिए उठता है।]

बहादुरशाह : आप ही पढ़कर सुनाइए, हकीमजी !

हकीम एहसानुल्ला खां : इसका आशय यह है कि बख्तखां तोपखाने के अफ़सर थे। वे इसी काम को जानते हैं। युद्ध-क्षेत्र में सम्पूर्ण युद्ध के संचालन के वे योग्य नहीं। मिर्ज़ा मुग़ल को सेना के समस्त प्रबन्धों का जो अधिकार दिया गया था, वह उनके योग्य था। समस्त सेना चाहती है कि वे हमारे सेनापति नियुक्त हों।

बख्तखां : इस प्रकार के मैं भी अनेक प्रार्थना-पत्र लिखवा ला सकता हूं कि समस्त सेना बख्तखां को मुख्य सेनापति चाहती है और उसपर हस्ताक्षर करनेवाले वे लोग भी हो सकते

हैं जिन्होंने मिर्ज़ा मुग़ल द्वारा लिखवाए हुए इस प्रार्थना-पत्र पर हस्ताक्षर किए हैं। लेकिन मैं विवाद बढ़ाना नहीं चाहता।

[बख्तखां अपनी तलवार बहादुरशाह 'ज़फ़र' के चरणों में रखता है।]

बख्तखां : एक दिन बड़े उत्साह के साथ यह तलवार मैंने आपसे प्राप्त कर अपने मस्तक से लगाई थी। आज मैं बहुत दुःख के साथ इसे शाहंशाह को लौटा रहा हूं। मैं लौट जाऊंगा बरेली, वहां से चला जाऊंगा लखनऊ। आज तो सारे देश में अंग्रेज़ों के विरुद्ध आग भड़की हुई है। मेरे लिए क्षेत्र खुला हुआ है। अपने देश के लिए युद्ध करने की अपनी लालसा मैं अवश्य पूर्ण करूंगा। मैं आपसे विदा लेता हूं जहांपनाह !

[बख्तखां जाने लगता है। बहादुरशाह 'ज़फ़र' उठकर बख्तखां का हाथ थामता है। शेष लोग भी उठ खड़े होते हैं।]

बहादुरशाह : ठहरो बख्तखां ! अगर तुम लोग चले जाओगे तो इसे हम अपनी सबसे बड़ी हार समझेंगे। जब तक हमारा विश्वास तुमपर है, तुम्हें निराश होने की आवश्यकता नहीं।

बख्तखां : जहांपनाह, दिल्ली का वातावरण ही विचित्र है। जब यहां कोई सेना आती है तो बहुत उत्साह से भरी हुई आती है, लेकिन दिल्ली का पानी पीकर और चांदनी चौक के दो चक्कर लगाकर उनकी मनोवृति ही बदल जाती है, मानो वे युद्ध करने नहीं आए हैं। पता नहीं इस नगर की वायु में अफीम का प्रभाव है या क्या बात है ? मुझे

मुख्य कारण यह जान पड़ता है कि प्रारम्भ से ही इन्हें अनुशासन में रखने का यत्न नहीं किया गया। पहले से जो सैनिक यहां हैं उनका प्रभाव नवागंतुकों पर भी पड़ता है।

मिर्ज़ा मुग़ल : क्या आपसे पहले हमारी सेनाओं ने अंग्रेज़ों से युद्ध ही नहीं किया ?

बख्तखां : किया क्यों नहीं ? आखिर जो पलटनें यहां आईं, वे अंग्रेज़ों के नियन्त्रण में सैनिक शिक्षा पाई हुई थीं। उन्होंने युद्ध लड़े थे। उन्होंने अपनी परम्परा और अभ्यास के अनुसार युद्ध तो किए लेकिन नेतृत्व के अभाव में उनकी विजयें भी पराजय में परिणत हो गईं।

हकीम एहसानुल्ला खां : अब आप ही कुछ चमत्कार कर दिखाइए। अंग्रेज़ों की नकल तो आप बहुत करते हैं। आज मैगज़ीन का मुआयना करते हैं, कल नगर के रईसों को पुलिस द्वारा बुलवाते हैं, परसों राशनखाता देखते हैं। यही सब-कुछ करते रहने से तो आप अंग्रेज़ों को पहाड़ी पर से न हटा पाएंगे।

बख्तखां : लेकिन मैं यदि सभी ओर न देखूंगा तो अंग्रेज़ दस साल तक भी पहाड़ी पर से नहीं हटाए जाएंगे। यह युद्ध है, इसका प्रत्येक विभाग एक-दूसरे का पूरक है। एक विभाग की दुर्बलता से भी जीती बाज़ी हारी जा सकती है। मुझे खुशी होती कि मेरे पास योग्य और ईमानदार अधिकारी होते जो प्रत्येक विभाग को चुस्त रखते। योग्यता के सम्बन्ध में मैं बहुत बड़ा दावा नहीं करता, लेकिन ईमानदारी के सम्बन्ध में मैं कह सकता हूं कि मैं आप सब

लोगों से होड़ ले सकता हूं। आप सुनकर चौंकेंगे कि प्रयत्न करने पर भी हम अंग्रेज़ों के गुप्तचरों और देशद्रोहियों के प्रपंचों का जाल नहीं तोड़ पाए हैं। आज हम जो आपस में विवाद कर रहे हैं, यह भी अंग्रेज़ों के ज़रखरीद लोगों का कार्य है जो हमें परस्पर लड़ा रहे हैं।

हकीम एहसानुल्ला खां : आप समझते हैं कि हम अंग्रेज़ों के हाथ बिके हुए हैं ?

बख्तखां : यह न समझिए हकीम साहब कि मैं यहां अन्धा होकर लड़ रहा हूं। मेरी एक नहीं हज़ारों आंखें हैं, हज़ारों हाथ-पांव हैं मेरे। आपनें अनेक पत्र मेरे विरुद्ध जहांपनाह के सम्मुख उपस्थित किए। मेरे पास भी एक पत्र है जो मैं जहांपनाह के हाथों में ही दूंगा।

[बख्तखां जेब से एक पत्र निकालकर बहादुरशाह 'ज़फ़र' को देता है जिसे वे खोलकर पढ़ते हैं।]

बहादुरशाह : [मन ही मन पढ़ता है और पढ़ लेने के बाद] हमारी आंखें धोखा खा रही हैं या हम स्वप्न-लोक में हैं ?

हकीम एहसानुल्ला खां : इसमें है क्या जहांपनाह ?

बहादुरशाह : यह है आपका, मिर्ज़ा इलाहीबख्श और महबूब-अली का सम्मिलित पत्र अंग्रेज़ों के गुप्तचर विभाग के अधिकारी हडसन के नाम। हमारे सामरिक भेद इसमें दिए गए हैं और बख्तखां तथा अन्य लोगों को अंग्रेज़ों के हवाले कर देने की भी इसमें योजना है।

हकीम एहसानुल्ला खां : ज़रा मैं भी तो देखूं ?

[बहादुरशाह 'ज़फ़र' के पास जाकर पत्र देखता है।]

हकीम एहसानुल्ला खां : कितना ज़बर्दस्त जाल है यह !

बख्तखां : क्या मैंने जाल किया है ?

हकीम एहसानुल्लाखां : मैं यह तो नहीं कहता कि आपने जाल किया है। हो सकता है अंग्रेज़ों ने ही यह जाली पत्र बनाकर आपके हाथों तक पहुंचवा दिया ताकि हमारे सम्बन्ध एक-दूसरे से बिगड़ जाएं। शाहंशाह की सेवा में मेरा सम्पूर्ण जीवन व्यतीत हुआ है और आपका नमक मेरी रग-रग में बिंधा हुआ है। मैं देश को नहीं जानता, लेकिन शाहंशाह को अपना ख़ुदा मानता हूं। मैं अपनी मान्यता के अनुसार उनकी शुभ कामना के लिए कुछ भी निवेदन कर सकता हूं, लेकिन सम्राट से विश्वासघात करने की अपेक्षा गले में फांसी लगाना पसन्द करूंगा। जहांपनाह, मेरी गर्दन हाज़िर है, यदि आप समझते हैं कि यह पत्र जाली नहीं है तो चलाइए तलवार !

[हकीम एहसानुल्ला खां गर्दन झुकाते हैं।]

बहादुरशाह : उठिए हकीमजी ! जानते हो कि हम आप पर इतना विश्वास करते हैं कि आप कभी हमारे कलेजे में छुरी भी मार दोगे तो हम शिकायत न करेंगे। हमारी जान तो सदा ही तुम्हारे हाथों में रही है और अनेक बार तुमने हमें नई ज़िन्दगी दी है, कोई कारण नहीं कि आज तुम्हें हमसे अधिक अंग्रेज़ों की चिन्ता हो।

बख्तखां : अब मेरे लिए क्या आज्ञा है ?

बहादुरशाह : (तलवार बख्तखां को देते हुए) सँभालो अपनी तलवार, यही हमारी आज्ञा है। तुम पूर्ववत् मुख्य सेनापति

और मुख्य शासक हो, लेकिन कुछ ऐसा भी उपाय करना चाहिए जिससे शाहज़ादे भी उत्साहपूर्वक युद्ध में भाग ले सकें। इसपर हम विचार करेंगे। अब हम लोग विदा लें एक-दूसरे से। कल फिर मिलेंगे।

[सबका प्रस्थान]

[पट-परिवर्तन]

दूसरा दृश्य

[स्थान—पूर्ववत्। समय—दिन। जब पर्दा उठता है तब एक दासी सम्राट बहादुरशाह 'ज़फ़र' का चिरसंगी हुक्का लाकर रखते हुए दिखाई देती है। उसी समय मिर्ज़ा इलाहीबख्श और हकीम एहसानुल्ला खां प्रवेश करते हैं।]

मिर्ज़ा इलाहीबख्श : (दासी से) यदि मलिका-ए-हिन्द को अवकाश हो तो हम उनके दर्शन करना चाहते हैं।

दासी : आप तशरीफ रखिए, मैं उन्हें समाचार देती हूं।

[दासी का प्रस्थान। दोनों बैठते हैं।]

हकीम एहसानुल्ला खां : भाई मिर्ज़ा इलाहीबख्श, हम जो कुछ करते रहे हैं और जो कुछ करना चाहते हैं, उसके विरुद्ध मेरी ही आत्मा विद्रोह करती है। माना कि हमारे गुप्त सहयोग से अंग्रेज़ फिर से दिल्ली पर अधिकार कर लेंगे और यदि दिल्ली में अंग्रेज़ों को सफलता मिल गई तो उसका प्रभाव सारे भारत पर पड़ेगा, अंग्रेज़ों का साहस बढ़ जाएगा और भारतीय निराश होकर विशृंखल हो

जाएंगे, अंग्रेज़ों की सत्ता भारत पर और भी दृढ़ता से स्थापित हो जाएगी, इस स्थिति में वे हमें हमारे सहयोग के बदले में पुरस्कृत करेंगे, लेकिन इस बात से भी इन्कार नहीं किया जा सकता कि इतिहास हमारी करतूतों पर थूकेगा।

मिर्ज़ा इलाहीबख्श : हकीमजी, आपका कथन किसी सीमा तक उचित है, लेकिन जब मैं अपनी विधवा पुत्री को देखता हूं, तो प्रतिशोध की भावना मुझे अन्धा बना देती है। इस नीच औरत से बदला लेने का मैं निश्चय कर चुका था और खुदा ने वह दिन भी ला दिया तो उसका उपयोग क्यों नहीं किया जाए ? इस सम्बन्ध में आपने मुझे जो सहयोग दिया उसके लिए मैं चिर ऋणी रहूंगा। समय आपको इसका बदला देगा। अंग्रेज़ आपको मालामाल कर देंगे, एक बड़ी जागीर के आप स्वामी होंगे, आपकी पीढ़ियां जिसका उपभोग करेंगी।

हकीम एहसानुल्ला खां : समय ज़ीनत महल को उसकी दुष्टता के लिए दण्ड दे, इसमें तो मुझे कोई आपत्ति नहीं, लेकिन जब मैं बूढ़े बादशाह के भविष्य के सम्बन्ध में सोचता हूं तो मेरा कलेजा कांपता है। मेरा जी चाहता है कि मैं आत्महत्या कर लूं।

मिर्ज़ा इलाहीबख्श : शाहंशाह के लिए तो मेरे दिल में भी दर्द है, हालांकि नैतिक दृष्टि से वे भी अपराधी हैं। उन्होंने बाप होते हुए भी यह जानने की आवश्यकता न समझी

कि बेचारा मिर्ज़ा फखरू किसके षड्यन्त्र से मारा गया। इसके विपरीत ज़ीनत महल के कहने से उन्होंने सारे शाहज़ादों से उस कागज़ पर हस्ताक्षर लिए जिसमें जवांवक्त को उन्होंने वलीग्रहद स्वीकार किया है। उन्हें बाध्य किया कि यह लिखकर दें कि उन्हें सम्राट के निर्णय से सहमति है। खैर, कुछ भी हो, मेरा ग्राज भी यत्न यही है कि विजय के पश्चात् अंग्रेज़ उनके सुख ग्रौर सम्मान का ध्यान रखें।

[ज़ीनत महल का प्रवेश। उसके ग्राते ही मिर्ज़ा इलाहीबख्श ग्रौर हकीम एहसानुल्ला खां उठकर खड़े हो जाते हैं। जब ज़ीनत महल बैठ जाती है तो वे दोनों भी बैठ जाते हैं।]

ज़ीनत महल : कहिए, क्या कहना चाहते हैं ग्राप लोग ?

मिर्ज़ा इलाहीबख्श : मलिका-ए-हिन्द ! हम ग्रापसे यही निवेदन करने ग्राए थे कि मुग़ल राजवंश को सर्वनाश से बचाने के लिए यदि ग्राप ग्रब भी प्रयत्न कर लें तो ग्रच्छा होगा। अंग्रेज़ों का साथ देने में ही ग्रापका ग्रौर शाहंशाह का भला है।

हकीम एहसानुल्लाखां : ग्रन्त में एक दिन अंग्रेज़ विजय तो प्राप्त करेंगे ही, तब क्यों न शाहंशाह विद्रोहियों का ग्रभी से साथ छोड़कर अंग्रेज़ों की शरण में चले जाएं। उस स्थिति में हम यत्न करेंगे कि सम्राट का रुतबा ग्रौर उनका वज़ीफा पूर्ववत् कायम रहे।

ज़ीनत महल : लेकिन क्यों ? बख्तखां से रुहेला होने के कारण मैं घृणा करती हूं, लेकिन फिर भी इस बात से इन्कार नहीं कर सकती कि उसने युद्ध का रुख ही बदल दिया है। हमारी

सेना अधिक उत्साह से अंग्रेज़ों के मोर्चे पर आक्रमण कर रही है। मैंने सुना है, अंग्रेज़ निराश होकर दिल्ली से घेरा उठा लेने की बात सोच रहे हैं।

मिर्ज़ा इलाहीबख्श : यह सरासर भ्रम है। अंग्रेज़ दिल्ली पर अधिकार करने के लिए अपना सर्वस्व न्यौछावर कर देंगे। शाहंशाह के प्रति—या यों कहिए मुगल राजमुकुट के प्रति भारतीयों में सम्मान की भावना अभी तक शेष है, इसी कारण देश के कोने-कोने से इतनी सेनाएं उनके झंडे के नीचे एकत्र हो गई हैं और केवल संख्या-बल के कारण अंग्रेज़ों को दिल्ली में प्रवेश करने से ये लोग रोक पा रहे हैं। लेकिन इस बीच के समय का उन्होंने अपनी स्थिति को दृढ़ करने में उपयोग किया है। अभी-अभी गढ़ तोड़नेवाली २२ बड़ी-बड़ी तोपें उन्होंने मंगवा ली हैं। गोरों के अतिरिक्त बड़ी संख्या में सिखों और गोरखों की पलटनें दिल्ली पर अन्तिम आक्रमण करने जमा हो चुकी हैं। सुना है, आज ही महाराजा काश्मीर के राजकुमार के नेतृत्व में काश्मीर से एक बड़ी सेना आ पहुंची है। जींद-नरेश भी स्वयं अपनी सेना के साथ आए हैं। बख्तखां की क्षणिक सफलताओं से यह न समझना चाहिए कि अंग्रेज़ों के पांव उखड़ गए हैं।

हकीम एहसानुल्ला खां : और दूसरी बात यह है कि बख्तखां के बहुत प्रयत्न करने पर भी हमारी सेना में एकता और अनुशासन स्थापित नहीं हो सका है। शाहज़ादों और बख्तखां में मेल बना रहे, इसके लिए शाहंशाह ने उनसे

शपथें भी ली हैं, उनके हाथ भी मिलवा दिए हैं, लेकिन दिल तो नहीं मिल सके। बरेली की सेना बख्तखां के अधीन है और नीमच की मिर्ज़ा मुग़ल के। इन दोनों सेनाओं में कोई तालमेल नहीं है।

मिर्ज़ा इलाहीबख्श : उस दिन बख्तखां ने अंग्रेज़ों के नज़फगढ़-वाले मोर्चे पर आक्रमण किया जिसमें इन दोनों—अर्थात् बरेली और नीमच की सेनाओं का उपयोग किया। नीमच की सेना को जिस स्थान पर ठहरने की आज्ञा उसने दी वे वहां नहीं ठहरीं बल्कि उन्होंने आगे बढ़कर एक गांव में डेरा डाला। यह सेना शेष सेना से पृथक् हो गई और परिस्थिति का लाभ उठाकर अंग्रेज़ सेनापति निकलसन ने उसपर आक्रमण कर दिया। इसमें सन्देह नहीं कि नीमच की सेना प्राणों को हथेली पर लेकर लड़ी, लेकिन वह चारों ओर से घिरी हुई थी और लड़ते-लड़ते वीर-गति को प्राप्त करना ही उस सेना के भाग्य में था।

हकीम एहसानुल्लाखां : इससे दो हानिया हुईं, एक तो यह कि बख्तखां इस आक्रगण को जिस योजना के अनुसार सम्पन्न कर अंग्रेज़ों को नज़फगढ़ से खदेड़ देना चाहता था वह न हो सका, दूसरा यह कि हमारी सेना के इतने वीर और साहसी योद्धाओं की जानें व्यर्थ ही चली गईं।

मिर्ज़ा इलाहीबख्श : अब आप ही सोचिए, मलिका-ए-हिन्द, यदि हमारी सेनाओं का यह हाल रहा तो क्या हमें विजय प्राप्त हो जाएगी ? आप दो नावों पर बैठने का यत्न न कीजिए। इसमें डूब जाने का भय है। अब अन्तिम निर्णय का समय

आ गया है। अंग्रेज़ पहले धक्के को सम्हाल चुके हैं। उन्होंने कानपुर पर अधिकार कर लिया है। शीघ्र ही लखनऊ पर कर लेंगे। दिल्ली अधिक दिन नहीं टिकेगी।

[इसी समय एक भयानक विस्फोट सुनाई देता है। तीनों चौंककर उठ बैठते हैं।]

ज़ीनत महल : यह कैसा विस्फोट हुआ? आकाश को प्रकम्पित करनेवाली इस आवाज़ ने मेरे हृदय को भयभीत कर दिया है।

[बहादुरशाह का घबराए हुए प्रवेश।]

बहादुरशाह : यह विस्फोट कहां हुआ? कहीं अंग्रेज़ नगर की चहारदीवारी में सुरंग लगाने में सफल तो नहीं हुए!

मिर्ज़ा इलाहीबख्श : ऐसा ही हुआ हो तो इसमें आश्चर्य की क्या बात है जहांपनाह! अंग्रेज़ सैनिक इंजीनियर, सुना है कि अनेक स्थानों पर सुरंगें लगाने का यत्न कर रहे थे।

हकीम एहसानुल्लाखां : लेकिन यह आवाज़ तो किसी साधारण सुरंग के फटने की नहीं है। इस प्रकार की आवाज़ तो केवल उस समय हुई थी जब मेरठ की सेना दिल्ली आई थी और अंग्रेज़ों ने अपना शस्त्रागार उनके हाथ में न पड़ने देने के लिए उसमें स्वयं ही आग लगा दी थी। कहीं ऐसा तो नहीं हुआ कि हमारे शस्त्रागार पर अंग्रेजी तोपखाने ने गोला फेंका हो।

मिर्ज़ा इलाहीबख्श : जहांपनाह, यह तो अंग्रेजी सेना के वास्तविक आक्रमण का प्रारम्भ है। मैं कहता हूं, अब भी समय

है कि हम अपने लिए एक निश्चित मार्ग चुन लें। जिन अंग्रेज़ों से टीपू सुल्तान, जिसके पास फ्रांसीसियों द्वारा शिक्षित सेना, ज़बर्दस्त तोपें और कुशल सेनापति थे, पार न पा सका, जिन्होंने नैपोलियन जैसे विश्वविजयी सेनापति को भी पराजित कर दिया, उनसे ये विद्रोही सैनिक जीत सकेंगे, यह सोचना भ्रम है। आप चाहें तो आज भी वे आपका स्वागत करने को प्रस्तुत हैं। आप आज्ञा दें तो अंग्रेज़ अधिकारियों से आपकी गुप्तरूप से भेंट कराने का प्रयत्न किया जाए।

ज़ीनतमहल : जी हां, जहांपनाह, वक्त ऐसा आ गया है कि हमें हठ छोड़कर अपनी रक्षा का उपाय करना चाहिए। यदि सम्राट को भय हो कि अंग्रेज अधिकारियों से भेंट करना संकटमय है, सम्भव है कि हमारी सेना के अधिकारी बख्तखां आदि जान जाएं और आज सेना उनके अधिकार में है, इसलिए कदाचित् वे शाहंशाह को ही बंदी बना लेना चाहें, तो आप अंग्रेज़ अधिकारियों के नाम पत्र ही लिख सकते हैं।

बहादुरशाह : नहीं, नहीं, मलिका, हम मंझधार में नाव नहीं बदलेंगे दूसरे हमने अपने शारीरिक सुखों के लिए तो यह संग्राम नहीं छेड़ा है। बहुत गई थोड़ी रही, हम नदी किनारे के पेड़ हैं समय की एक लहर कभी भी हमें बहा ले जाएगी। किसलिए अपने क्षणिक सुखों के लिए हम देशद्रोह करें ? अगर हमें वस्त्राभूषणों में सजकर शान दिखाना, सुख की सेज पर सोना, और शराब के जाम पीकर सांसारिक

आनन्द का उपभोग करना होता तो क्यों न हम प्रारम्भ से ही अंग्रेज़ों का साथ देते ।

ज़ीनत महल : लेकिन जहांपनाह, आपके साथ और भी बहुत लोगों के भाग्य संबद्ध हैं। आप तो नदी किनारे के पेड़ हैं— लेकिन मुझे तो अभी जीवन की लंबी डगर पार करनी है, अभी आप साथ हैं—लेकिन खुदा न करे कल मैं सर्वथा अकेली हो जाऊं तो मेरा क्या सहारा होगा ? फिर जवांवक्त भी है, जिसे वलीअहद बनवाने के लिए मैंने कौन-सा पाप नहीं किया, उसी के लिए पहले अंग्रेज़ों से मेल किया, उसी के लिए अंग्रेज़ों से युद्ध छिड़वाया और उसी के लिए फिर उनसे मेल करना मैं आवश्यक समझती हूं। शाहंशाह, यदि आपको अपने ऊपर दया नहीं आती तो कम से कम मुझपर और जवांवक्त पर तो दया कीजिए ।

[ज़ीनत महल की आंखों में आंसू भर आते हैं ।]

बहादुरशाह : हमारी अच्छी बेगम ! तुम्हारे एक आंसू पर हम संसार भर के साम्राज्य को कुरबान कर सकते हैं, लेकिन संसार के साम्राज्य से भी बड़ी वस्तु है इंसानियत । ज़रा उन लोगों के विषय में सोचो जो हमारे लिए अपने प्राणों की बाज़ी लगाए हुए हैं। क्या उनके बीवी-बच्चे नहीं हैं ? यदि उनकी पत्नियां और बच्चे आंखों में आंसू भरकर उनकी राह में खड़े हो जाते और वे उन आंसुओं से प्रभावित होकर बलिदान के पथ पर अग्रसर न होते तो देश और धर्म के लिए लड़ता कौन ? सच्चा इंसान वह है जो

परमार्थ के लिए स्वार्थ को तिलांजलि देता है।

ज़ीनत महल : मैं नहीं जानती थी कि जहांपनाह का हृदय पत्थर का बना हुआ है।

बहादुरशाह : खुदा का चमत्कार देखो, ज़ीनत ! कि जो माखन की भांति नरम होता है वही पत्थर की भांति कठोर भी। देश के दीन-दुखियों की स्थिति से जिसका हृदय विचलित हो उठता है, वही उनके दुःखों को दूर करने के लिए तलवार पकड़ता है और वही स्वजनों के आंसुओं को बेदर्दी से कुचलता हुआ समरभूमि में प्राण चढ़ाने जाता है।

ज़ीनत महल : अंग्रेज़ों के हाथ से मेरी बेइज़्ज़ती कराने के पहले आप मेरा गला घोंट दीजिए, जहांपनाह ! मार डालिए मुझे। मार डालिए अपनी इस बेगम को जिसे आप अपनी जिंदगी कहते थे। आपने मुझे बेहद प्यार किया है; मैं आपके ही हाथ से मरना चाहती हूं।

बहादुरशाह : (भरे हुए गले से) बेगम, हमारी और परीक्षा न लो। मुगल घराने की महिलाओं को इतनी कायरता नहीं दिखानी चाहिए। धैर्य रखो, खुदा इतना निष्ठुर और अन्यायी नहीं है कि सत्य, धर्म और अपने देश को प्यार करनेवालों पर कहर ढाए। इसमें सन्देह नहीं कि हमारी नाव भंवर में है, लेकिन हाथ-पांव फुला लेने से तो लहरें हमें निगल जाएंगी। वीर हृदयवाला वह है जो विपत्ति में धैर्य नहीं छोड़ता।

[छः-सात सैनिकों के साथ बख्तखां का प्रवेश। बख्तखां के हाथ में नंगी तलवार है। सैनिक लोग बन्दूकें लिए हुए हैं। बख्तखां की आंखें

क्रोध से लाल हो रही हैं।]

बख्तखां : (सैनिकों से, एहसानुल्लाखां की ओर इंगित करके) बंदी बना लो इन्हें।

[एहसानुल्लाखां बहादुरशाह ज़फर के पीछे खड़ा हो जाता है।]

बहादुरशाह : ठहरो! कम से कम हमारे राजमहल में अभी हमारा ही राज है। हमारी अनुमति के बिना कोई किसी के शरीर पर हाथ नहीं लगा सकता।

मिर्ज़ा इलाहीबख्श : बख्तखां, तुम्हारा इतना साहस बढ़ गया कि शाहंशाह को कोर्निश अदा करने की भी आवश्यकता तुमने नहीं समझी और उनके सामने ही उनकी अनुमति के बिना उनके पुराने विश्वस्त साथी को गिरफ्तार करने लगे!

बख्तखां ; (शांहशाह को कोर्निश अदा करता हुआ) क्षमा कीजिए जहांपनाह! उत्तेजना की पराकाष्ठा में मैं साधारण शिष्टाचार को भी भूल गया, इससे सम्राट यह न समझें कि मैं आपका आदर नहीं करता। आपका आदर करते हुए ही मैं आपसे प्रार्थना करता हूं कि इस देशद्रोही को हमारे हवाले कर देने की कृपा कीजिए।

ज़ीनत महल : इन्होंने क्या देशद्रोह किया है ?

बख्तखां : ये अंग्रेज़ों से मिले हुए हैं। अभी आपने जो विस्फोट सुना है, वह हमारे शस्त्रागार के जलने से हुआ है और उसे जलवाया है इस कापुरुष देशद्रोही ने।

बहादुरशाह : क्यों हकीमजी, आपका क्या कहना है ?

हकीम एहसानुल्लाखां : जहांपनाह, मैं ऐसा कर सकता हूं, इस

पर यदि आप विश्वास कर सकते हैं तो मुझे कुत्ते की मौत दीजिए।

बख्तखां : कल मैंने लालकिले पर से दूरबीन से देखा था। ये जमुना में एक नौका पर हडसन के साथ बैठे हुए थे। आज हम देखते हैं कि हमारे शस्त्रागार में आग लगी हुई है। हम और भी प्रमाण एकत्र कर रहे हैं, लेकिन देशद्रोही को हम और भी अनर्थ करने के लिए खुला नहीं छोड़ सकते। जहांपनाह इन्हें हमारे हवाले कर दें इतनी ही मेरी प्रार्थना है।

जीनत महल : और जहांपनाह ऐसा न करें तो?

बख्तखां : तो ज़हर का घूंट पी जाऊंगा, लेकिन यह कहे बिना न रहूंगा कि स्वयं जहांपनाह मोहवश स्वाधीनता के युद्ध को विफल करने का कारण बन रहे हैं। मेरे आने के पूर्व भी हमारे सैनिक वीरता से लड़े हैं, यद्यपि उन लड़ाइयों के पीछे निश्चित योजना का अभाव था। मेरे आने के पश्चात् भी इतने दिनों तक हमारे सैनिक वीरता से लड़े हैं। उनमें पहले की अपेक्षा अधिक अनुशासन भी है, पर अभी भी पूर्ण एकता हम स्थापित नहीं कर पाए, इसका कारण अंग्रेज़ों के ऐसे क्रीतदास हैं। अब जबकि अंग्रेज अपनी शक्ति पूर्णरूपेण जुटा चुके हैं और हमपर निर्णायक आक्रमण करनेवाले हैं तो हमारे शस्त्रागार में आग लगाकर हमें अपाहिज बना देने का जघन्य कार्य ऐसे लोग कर रहे हैं। और जहांपनाह ऐसे देशद्रोहियों को शरण दे रहे हैं। ऐसी स्थिति में हम किस प्रकार युद्ध कर सकते हैं?

जीनत महल : तो आप युद्ध बन्द कर दीजिए और लालकिले पर सफेद झंडा फहरा दीजिए ।

बख्तखां : मैं जहांपनाह के मुंह से सुनना चाहता हूं ।

बहादुरशाह : नहीं बख्तखां, जब तक हमारे धड़ पर सर कायम है, लालकिले पर सफेद झंडा नहीं फहराया जाएगा ।

बख्तखां : और यदि जहांपनाह चाहते तब भी यह संग्राम बन्द नहीं होता । चिन्ता नहीं, आज किसीकी दुष्टता से हमारा शस्त्रागार जल गया है, फिर भी अंग्रेज़ों के हौसले पस्त करने की हमारे सैनिकों में अभिलाषा का अन्त नहीं हुआ है। हमारे पांच कारखाने काम कर रहे हैं, हमें थोड़ा भी समय मिल गया तो अस्त्र-शस्त्रों की कमी की पूर्ति हम कर लेंगे और नहीं भी कर पाए तो हमारे पास जो कुछ है, उसी साधन से हम लड़ेंगे । यह तो प्रजा का विदेशियों से संग्राम है, यह चन्द चांदी के टुकड़ों के लिए सैनिक का पेशा अपनाने वालों की भीड़ नहीं है—यह तो देश पर प्राण चढ़ानेवालों का दल है । यह तो आपकी अवज्ञा करके युद्ध जारी रखेगा ।

बहादुरशाह : हम अपने सैनिकों की लगन को देखकर बहुत प्रसन्न हुए ।

बख्तखां : हमें अंग्रजों की संगीन का डर नहीं, हम उनकी तोपों के आगे सीने अड़ा देंगे, लेकिन यदि विश्वासघात आपकी छत्रछाया में पलेगा तो हमारे सारे प्रयत्न, सम्पूर्ण साहस, सारी लगन और सारी रणचातुरी व्यर्थ जाएगी ।

हकीम एहसानुल्लाखां : जहांपनाह, निश्चय ही बख्तखां को

धोखा हुआ है। हो सकता है, हडसन ने किसी व्यक्ति को मेरे जैसे कपड़े पहनाकर, कुछ मेरे जैसा रूप भी उसका बनाकर चांदनी रात में यमुना की लहरों पर नाव में अपने साथ इसलिए घुमाया हो कि कोई हमारी ओर से देखे, धोखे में आए और फिर हममें परस्पर संघर्ष छिड़े । अंग्रेज़ों के लिए सब कुछ संभव है । वे अद्‌भुत शस्त्रों से लड़ते हैं।

बहादुरशाह : कुछ भी हो। बख्तखां, हम नहीं चाहते कि केवल सन्देह में ही किसीपर अत्याचार हो जाए, इसलिए हम जांच करेंगे । यदि एहसानुल्लाखां अपराधी पार गए तो हम स्वयं दण्ड देंगे यद्यपि हमपर इनके बहुत उपकार हैं। इन्होंने हमें अनेक बार मौत के मुंह में से बचाया है। फ़िलहाल ये हमारे पास रहेंगे, तुम चाहो तो लालकिले में ऐसा पहरा रख सकते हो कि इन्हें भाग जाने का अवसर न प्राप्तहो।

बख्तखां : जहांपनाह की आज्ञा को कैसे टाला जा सकता है!

बहादुरशाह : तो इस समय हम लोग एक-दूसरे से विदा लें।

[बहादुरशाह 'ज़फर', ज़ीनत महल और हकीम एहसानुल्लाखां का एक ओर और दूसरी ओर शेष सबका प्रस्थान ।

[पट-परिवर्तन]

तीसरा दृश्य

[स्थान—पूर्ववत्। समय—रात। पर्दा उठता है तब सम्राट बहादुरशाह 'ज़फर' कविता लिखते हुए दिखाई पड़ते हैं। उनके सामने एक शमा जल रही है। बख्तखां प्रवेश करता है।]

बख्तखां : (कोर्निश करता हुआ) जहांपनाह को सेवक बख्तखां कोर्निश अदा करता है।

बहादुरशाह : आओ बख्तखां, आज हम बादशाह नहीं, शायर हैं। पास बैठो। हम अपनी नई रचना सुनाएंगे।

[बख्तखां अपना स्थान ग्रहण करता है।]

बख्तखां : सुनाइए जहांपनाह!

बहादुरशाह : कहा है—

दुश्मन अज़ हर तरफ आबुर्द
या अलीमे वली बराये ख़ुदा।
फ़ौजे गैबी पये मदद बे फिदस्त,
अज़तु ख्वाहद हमीं ज़फ़र व दुआ॥

बख्तखां : यह तो फारसी है जहांपनाह! मैं तो शुद्ध हिन्दुस्तानी सैनिक हूं। मुझे तो हिन्दुस्तानी में अर्थ समझाएं तभी मैं पूरा आनन्द ले सकूंगा।

बहादुरशाह : अर्थ है—शत्रु ने प्रत्येक दिशा से घेर लिया है, हे इमाम हज़रतअली, खुदा के लिए सहायतार्थ दैवी सेना भेजिए, ज़फ़र तुमसे यही प्रार्थना करता है।

बख्तखां : जहांपनाह, आप जिस दैवी सहायता की याचना कर रहे हैं, वह तो हिन्दुस्तान के कोने-कोने में बिखरी पड़ी है। उसके लिए आपको दिल्ली छोड़कर चलना पड़ेगा।

भारत का प्रत्येक हृदय आपकी राजधानी है। लोग आपको सर-आंखों पर रखेंगे।

बहादुरशाह : क्यों बख्तखां, क्या दिल्ली सचमुच अंग्रेज़ों के हाथ में चली जाएगी ? तुमने तो कहा था—मैं मैगज़ीन को नगर के बाहर ले जा रहा हूं। मैं अंग्रेज़ों के गोलों की वर्षा का मुकाबला ४० तोपों से करूंगा जिसके लिए बैट्रियां तैयार कर रहा हूं जो अंग्रेज़ी सेना को रसद पहुंचना रोक देंगी। किन्तु हुआ क्या ? अंग्रेज़ों ने दिल्ली नगर में प्रवेश पा ही लिया।

बख्तखां : किन्तु जहांपनाह, इसमें मेरा वश क्या है ! हमारी प्रत्येक योजना से शत्रु पहले ही परिचित हो जाता था। शत्रु ने हमारे बीच गुप्तचरों का ऐसा जाल बिछा दिया कि हमारी कोई योजना गुप्त नहीं रही। हमारी पराजय हो, ऐसा चाहनेवाले और इसके लिए प्रयत्न करते रहनेवाले हम ही लोगों में भरे हुए थे और अभी तक भरे हुए हैं। फिर भी एक-एक चप्पा भूमि के लिए हम लड़े हैं। एक-तिहाई दिल्ली पर अधिकार करने में अंग्रेज़ी सेना के ६६ अफसर और ११०४ सैनिक खेत रहे। यह तो केवल एक दिन में हुआ; उसके पश्चात् भी हमने कम्पनी सरकार के लगभग ४००० व्यक्तियों को मौत के घाट उतारा। हमने अपना भी और शत्रु का भी रक्त पानी की तरह बहाया।

बहादुरशाह : इसी का तो अफसोस है कि दिल्ली की गली-गली में रक्त की बाढ़ आ गई, फिर भी हम शत्रु के बढ़ते हुए

कदम को रोक नहीं पाए। अब वे लालकिले पर भी आक्रमण करेंगे और मुगल साम्राज्य के गौरवपूर्ण अतीत की याद दिलानेवाला यह भव्य किला भी धूल में मिल जाएगा।

बख्तखां : किन्तु जहांपनाह, इस किले से भी अधिक भव्य, अधिक गौरवमय है मुगल राजवंश की कीर्ति। उसकी रक्षा करने के लिए यदि लालकिले को धूल में भी मिलना पड़े तो अफसोस करने की कोई बात नहीं। लेकिन मैं देखता हूं कि हमने गढ़ और चहारदीवारी की आड़ लेकर ही भूल की। हमने इन दीवारों की आड़ लेकर १३५ दिन युद्ध किया जबकि हमें चाहिए था पहले ही दिन से हम चहारदीवारी के बाहर निकलकर अंग्रेज़ों से युद्ध करते। यदि दिल्ली की तरफ आनेवाले रास्ते हम रोक बैठते तो कैसे वे हमसे लड़ने के लिए सेनाओं और तोपों का इतना जमाव कर पाते, और कैसे उन्हें हममें पारस्परिक फूट उत्पन्न करने का अवसर प्राप्त होता ?

[मिर्ज़ा इलाहीबख्श का प्रवेश]

मिर्ज़ा इलाहीबख्श : जहांपनाह को मिर्ज़ा इलाहीबख्श कोर्निश अदा करता है।

बहादुरशाह : बैठो।

[मिर्ज़ा इलाहीबख्श स्थान ग्रहण करता है।]

बख्तखां : जहांपनाह, अभी कुछ बिगड़ा नहीं है। यद्यपि हमारे सहस्रों सैनिक दिल्ली छोड़कर चले गए हैं, फिर भी अभी सहस्रों-लाखों तलवारें आपके संकेत पर उठने को

प्रस्तुत हैं। भारत की प्रजा का मुगल राजवंश से कितना लगाव है और अंग्रेज़ों से कितनी घृणा है, इसका अनुमान स्वयं आपको नहीं है। और जहांपनाह, मैं इस बात को भी नहीं मानता कि दिल्ली पूर्णत: हमारे हाथ से निकल गई है। लेकिन अब उसे बचाने का यत्न करना व्यर्थ है। फिर भी शत्रु के आगे मस्तक झुकाने की अपेक्षा शत्रु-सेना को चीरता हुआ मैं निकल जाऊंगा। भारत के करोड़ों आदमियों की ओर से मैं प्रार्थना करता हूं कि जहांपनाह मेरे साथ चलें। मैं आपका बाल भी बांका नहीं होने दूंगा।

मिर्ज़ा इलाहीबख्श : बाल तो बांका नहीं होने दोगे लेकिन जहांपनाह को अंग्रेज़ों के हवाले कर उनकी गर्दन अवश्य उड़वा दोगे।

[बख्तखां क्रोध में आकर उठ खड़ा होता है और अपनी तलवार निकाल लेता है।]

बख्तखां : हां, तुम्हारा सर अवश्य भुट्टे की तरह उड़ा दूंगा। अभी तक तुम लोग जहांपनाह के पीछे जोंक की तरह लगे हुए हो। हज़ारों भारतीय सैनिकों का खून तो तुम लोग पी भी चुके हो और अभी तक तुम्हारी प्यास नहीं बुझी है। आज मेरी तलवार तुम्हारा खून पिएगी। उठो और निकालो तलवार। मैं कसाई बनना नहीं चाहता बराबर का युद्ध करना मेरा धर्म है।

[मिर्ज़ा इलाहीबख्श उठकर तलवार निकालता है। बख्तखां और मिर्ज़ा इलाहीबख्श दोनों ही एक-दूसरे पर प्रहार करने के लिए

तलवारें तानते हैं। बहादुरशाह 'ज़फर' दोनों के बीच खड़े होकर दोनों के हाथ थामते हैं।]

बहादुरशाह : रुक जाओ बख्तखां और रुक जाओ इलाहीबख्श ! जो तलवारें अंग्रेज़ों के विरुद्ध उठनी चाहिए, क्या वे परस्पर भाई-भाई में ही टकराएंगी।

[बख्तखां और मिर्ज़ा इलाहीबख्श अपनी तलवारें नीचे करते हैं।]

बख्तखां : हमारी दिल्ली में जो पराजय हुई है उसके अनेक कारण हैं, किन्तु उनमें एक कारण जहांपनाह की क्षमाशीलता और कुछ विश्वासघातियों पर अंधविश्वास करना भी है। जिस महाविटप की छाया में ये बैठे थे, उसे ही जड़-मूल से काट डालना इन्होंने उचित समझा है; क्योंकि इन्हें आशा है कि इससे भी बड़े विटप की छायाएं वे पा सकेंगे। और आप सत्य से आंखें फेरकर बैठे हैं।

मिर्ज़ा इलाहीबख्श : पहले अपने अन्त:करण में झांककर देखो बख्तखां! तुम हो रुहेले पठान ! तुम्हारे बुज़ुर्गों ने क्या किया ? मुगलों ने पठानों से दिल्ली का तख्त छीना था—तलवार की ताकत से प्राप्त किया था, किन्तु रुहेलों ने खुशामद के ज़ोर पर अपने स्वामी मुगल सम्राट का विश्वास प्राप्त कर बाद में उनका ही नहीं हरम की महिलाओं का भी अपमान किया। अब तुम क्या उसी इतिहास को दोहराना चाहते हो ? बादशाह, बेगमात, शाहज़ादे और शाहज़ादियों को साथ ले जाकर उनके साथ क्या-क्या दुर्व्यवहार करोगे, इसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती।

बख्तखां : मिर्ज़ा इलाहीबख्श, मुगल और पठानों के बीच हुई कुछ दुर्भाग्यपूर्ण घटनाओं की दुहाई देकर सम्राट के उदार हृदय को विषाक्त न करो। स्वार्थ, लालच, सत्ता-प्राप्ति का लोभ और अदूरदर्शिता के कारण अनेक नृशंस कार्य मानव ने किए हैं । हिन्दुओं को मुसलमानों से शिकायत हो सकती है, मुसलमानों को हिन्दुओं से, शियाओं को सुन्नियों से तो सुन्नियों को शियाओं से, पठानों को मुगलों से तो मुगलों को पठानों से, मराठों को मुगलों से तो मुगलों को मराठों से, तात्पर्य यह है कि इतिहास के पृष्ठ खोलने पर हम एक-दूसरे से लड़ने के लिए बहुत मसाला खोज सकते हैं, किन्तु इससे लाभ किसे होगा ? बख्तखां रुहेला है—लेकिन है तो भारतीय, उसके साथ सहस्रों रुहेलों ने आकर भारत के सम्राट के लिए अपना रक्त बहाया है, वह क्या इसलिए कि अन्त में सम्राट और उनके परिवार का अपमान करेंगे ? मैं कहता हूं सम्राट, जहां आपका पसीना गिरेगा वहां हम अपना खून बहाएंगे। आप मेरे साथ दिल्ली से निकल चलिए। हम फिर आएंगे दिल्ली में विजय का डंका बजाते हुए ।

बहादुरशाह : बहादुर बख्तखां, हमें तुम्हारी हर बात पर विश्वास है और हम तुम्हारी बात को पसन्द करते हैं । मगर तुममें और हममें बहुत अन्तर है। अंग्रेज़ों से लोहा लेने का चाव जितना तुम्हें है उतना ही हमें भी है । लेकिन अब हमारे जिस्म में कुव्वत नहीं है। इस शव को सर पर लादे-लादे तुम कहां-कहां फिरोगे । हम अपना मामला भाग्य को

समर्पित करते हैं। हमें अंग्रेज़ तोप से उड़ा दें, फांसी लगा दें कुछ भी करें, तुम इसकी चिन्ता न करो, अन्तिम क्षण तक हम खुदा से दुआ मांगेंगे कि भारत की स्वाधीनता का यह संग्राम सफल हो। इससे पहले कि तुम भी यहां किसी मुसीबत में फंस जाओ, तुम चले जाओ। हम नहीं, हमारे खानदान में से नहीं, तो न सही तुम या कोई हिन्दुस्तान की लाज रखे। हमारी चिन्ता न करो, अपने कर्तव्य का पालन करो।

बख्तखां : अच्छी बात है, जहांपनाह, इस समय तो मैं जाता हूं—लेकिन आपसे मेरा निवेदन है कि आप एक बार मेरे प्रस्ताव पर गम्भीरता से विचार कीजिए। इलाहीबख्श, हकीमजी या मलिका ज़ीनत महल के दिमाग से नहीं, अपने दिमाग से सोचिए। माना कि आपके शरीर में कुव्वत नहीं है, लेकिन आपकी उपस्थिति-मात्र बिजली का सा प्रभाव करेगी। आप अंग्रेज़ों के हाथ पड़ गए तो हमारे स्वाधीनता संग्राम को बहुत हानि होगी। सोच देखिए जहांपनाह, यदि आप प्रारम्भ से ही इस संग्राम से अलग रहते तब भी कोई बात न थी। हम लोगों की इतनी शक्ति दिल्ली में नष्ट न होती। यह संग्राम तो छिड़ना था और छिड़ता ही और छिड़ गया है तो जारी रहेगा, लेकिन जहांपनाह का इससे अलग हो जाना हमारे हित में घातक होगा। खैर, अभी तो मैं जाता हूं, खुदा हाफ़िज़ !

बहादुरशाह : खुदा हाफ़िज़ !

[बख्तखां का प्रस्थान]

मिर्ज़ा इलाहीबख्श : जहांपनाह, आप मुझे चाहे विश्वासघाती कहें चाहे देशद्रोही, लेकिन वास्तविकता यह है कि मैं सदा ही आपका हित चाहता रहता हूं। मैं और हकीम एहसानुल्लाखां आपसे प्रार्थना करते रहे हैं कि आप विद्रोहियों को मुंह न लगाएं। हम ऐसा इसलिए नहीं कहते थे की अंग्रेज़ों की हुकूमत को हम पसन्द करते हैं, बल्कि इसलिए कहते थे कि अंग्रेज़ों को पराजित करने के लिए जिस एकता और संगठन की आवश्यकता है उसका भारतीय वायुमंडल में उत्पन्न होना असम्भव है। एक असम्भव अथवा संदिग्ध आशा के पीछे अपने सम्पूर्ण भविष्य को बाज़ी पर लगा देना उचित न था।

बहादुरशाह : हमने जो किया वही हमारा कर्तव्य था।

मिर्ज़ा इलाहीबख्श : खैर, जो हो गया सो हो गया, लेकिन अब अवसर मिला है कि आप अपने-आपको विद्रोहियों से अलग कर लें। यदि आप बख्तखां के बहकावे में आकर विद्रोहियों के साथ जाएंगे तो निश्चित रूप से आप कष्ट पाएंगे। विद्रोहियों की पराजय तो निश्चित है ही। जो यहां हुआ है वही उन सभी स्थानों पर होगा जहां विद्रोहियों को क्षणिक सफलताएं प्राप्त हुई हैं। यदि जहांपनाह अपने आपको विद्रोहियों से पूर्णतः पृथक् कर लेंगे तो अंग्रेज़ों को विश्वास हो जाएगा की आप स्वतः विद्रोह में सम्मिलित नहीं हुए, बल्कि सैनिकों का दबाव पड़ने पर और कोई चारा न रहने के कारण ऐसा हुआ और अवसर मिलते ही आप उन दगाबाज़ और नमकहरामों से पथक् हो गए। अपने-आपको

अंग्रेज़ों के समर्पित कर देने में आपके पुलाव की रकाबी कहीं नहीं गई।

बहादुरशाह : जब साम्राज्य ही चला गया तो क्या पुलाव की रकाबी की चिन्ता हम करेंगे इलाहीबख्श ? हमें कोई चीज़ दुर्बल बनाती है तो वह है इतना बड़ा शाही परिवार। अच्छे थे वे राजपूत जो अपनी पराजय को निश्चित समझ-कर उनमें से प्रत्येक पुरुष केसरिया बाना पहनकर रणभूमि में शत्रुओं से लोहा लेते हुए मर जाता था और प्रत्येक स्त्री जौहर की ज्वाला में जल जाती थी। यदि आज हमारा परिवार भी ऐसा कर पाता तो मुगल राजवंश का गौरव बढ़ता। दुःख की बात यह है कि हम चाहे कुछ भी सोचें, परिवार के अन्य लोग अभी तक पुलाव की रकाबी की ही बात सोचते हैं। हम चाहते थे कि जिस गौरव के साथ हम मुगल भारत में आए और जिस गौरव के साथ रहे, उसी गौरव के साथ उनका अवसान भी हो। किन्तु समय को यह स्वीकार नहीं हुआ तो हम क्या करें ? अच्छी बात है इलाही-बख्श, हमारे साथ आओ, मलिका से परामर्श करके हम अंतिम निर्णय कर लें।

[दोनों का प्रस्थान]

[पट-परिवर्तन]

चौथा दृश्य

[स्थान—पूर्ववत् । समय—संध्या । जब पर्दा उठता है तो कक्ष सूना दिखाई देता है । दीवारों पर चित्र भी नहीं हैं । बहादुरशाह 'ज़फर' का हुक्का भी अपने स्थान पर नहीं है । एक ओर से मिर्ज़ा कोयाश प्रवेश करता है और दूसरी ओर से बख्तखां ।]

बख्तखां : आप हैं शाहज़ादा ? सम्राट कहां हैं ?

मिर्ज़ा कोयाश : सम्राट हैं अंग्रेज़ों की हिरासत में ।

बख्तखां : हिरासत में ? मैं तो उन्हें ले जाने आया था ।

मिर्ज़ा कोयाश : लेकिन समय उन्हें जिधर ले गया उधर ही उन्हें जाना पड़ा । उनकी मलिका, इलाहीबख्श और हकीम एहसानुल्लाखां उन्हें ले गए हैं मौत के रास्ते पर ।

बख्तखां : मौत के रास्ते पर ?

मिर्ज़ा कोयाश : मैं इसे मौत का रास्ता ही कहूंगा । बेइज़्ज़ती के साथ जीवित रहना मृत्यु नहीं है तो क्या है ? वे लोग तो मुझे भी ले जाना चाहते थे, लेकिन मैं नहीं गया । मैं अपमान-पूर्वक जीवित रहना अथवा कीड़े-मकोड़े की भांति मरना पसन्द नहीं करता । मरता कौन नहीं है, मैं भी मरूंगा, लेकिन मरते दम तक मेरे हाथ में तलवार होगी । मिर्ज़ा मुगल, मिर्ज़ा अबूबकर और मिर्ज़ा खिज्र सुलतान की मौत मैं नहीं मरूंगा ।

बख्तखां : क्या कहा ? तीनों शाहज़ादे···

मिर्ज़ा कोयाश : हां, तीनों शाहज़ादे अब इस संसार में नहीं हैं । उनकी लाशें आज चौराहे पर पड़ी हैं । शेष शाहज़ादों का क्या हाल होनेवाला है, इसे ख़ुदा ही जानता है, लेकिन कुछ

भी हो, कोयाश ऐसी मौत नहीं मरेगा।

बख्तखां : लेकिन यह सब कैसे हुआ ?

मिर्ज़ा कोयाश : पिछले २४ घंटों में समय का चक्र इतनी शीघ्रता से घूमा, इतनी बेदर्दी से घूमा कि जिसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। जो कुछ मैंने अपनी आंखों से देखा और जो कुछ कानों से सुना, उसे ज़बान पर लाने से भी हृदय विदीर्ण होता है बख्तखां !

बख्तखां : फिर भी मैं सुनना चाहता हूं।

मिर्ज़ा कोयाश : तो सुनो। मुझे ज्ञात है कि कल संध्या को आप जहांपनाह से मिले थे। उसके पश्चात् मलिका ज़ीनत महल, इलाहीबख्श, हकीम एहसानुल्लाखां और सभी शाहज़ादों में परामर्श हुआ। निश्चय यह हुआ कि रात के समय नाव के द्वारा जमना के मार्ग से राज परिवार हुमायूं के मकबरे में चले जाएंगे। उन्हें डर था कि सूर्योदय तक रुके तो तुम फिर आकर सम्राट को ले जाने का यत्न करोगे। राजी से न गए तो सम्भवतः बल प्रयोग करोगे।

बख्तखां : निश्चय ही मैं इस समय इसी इरादे से आया था।

मिर्ज़ा कोयाश : लेकिन प्रारब्ध की गति मनुष्य के पुरुषार्थ से अधिक तेज़ है। नौकाओं में राज-परिवार निकला। सम्राट अलग नौका में थे, अन्य लोग अलग। परिवार के अन्य लोग सीधे हुमायूं के मकबरे में पहुंचे और जहांपनाह हज़रत निज़ामुद्दीन चले गए। वहां मज़ार के सिरहाने जा बैठे। उनके पास संदूकचा था। चेहरा उनका पीला हो रहा था, दाढ़ी धूल और गर्द से भरी हुई थी। साक्षात् करुणा की

मूर्ति बने हुए थे ।

बख्तखां : विपत्तियों का प्रहार मनुष्य के धैर्य को चकनाचूर कर देता है !

मिर्ज़ा कोयाश : किन्तु जहांपनाह की भावनाएं तो सांसारिक सीमाओं को पार कर चुकी थीं—उनका दर्द सीमा पार करके धैर्य और अधैर्य का मोहताज नहीं रहा था। शाहंशाह का आगमन सुनकर हज़रत निज़ामुद्दीन के तकिये के वर्तमान अधिकारी शाह साहब आए । जहांपनाह ने उन्हें सन्दूक दिया और कहा—"मुगल शासन का दीपक टिमटिमा रहा है और कुछ घड़ियों का मेहमान है । यह तुम्हारे सुपुर्द है, इसमें हज़रत मोहम्मद साहब की शुभ दाढ़ी के पांच बाल हैं जो हमारे वंश में बहुमूल्य धरोहर के रूप में चले आते हैं। अब आप इन्हें सम्हालिए ।"

बख्तखां : शाहंशाह का अपने धर्म में कितना विश्वास था। अन्त समय में भी उन्हें इस महान उपहार को सुरक्षित हाथों में सौंपने की याद रही ।

मिर्ज़ा कोयाश : इसके पश्चात् जहांपनाह बोले—"आज तीन दिन से भोजन करने का भी अवसर नहीं मिला । घर में कुछ तैयार हो तो लाओ ।" शाह जी मिस्सी रोटी और सिरके की चटनी लाए । उन्होंने खाकर ठण्डा पानी पिया और मकबरे की तरफ चल पड़े ।

बख्तखां : शाहंशाह को, जिनके लिए हर प्रकार के भोजन सदा तैयार रहते थे, रोटी-चटनी से पेट भरना पड़े, यह सुनकर कलेजा मुंह को आता है ।

मिर्ज़ा कोयाश : किन्तु उनके उन वंशजों को, जो अंग्रेज़ों के खूनी पंजे से बचकर सांस लेते रहेंगे, उन्हें यह भी नसीब होगा या नहीं, इसे कौन जाने। खैर, आगे सुनिए। जब शाहंशाह मकबरे पर पहुंचे तो जैसा देशद्रोहियों और अंग्रेज़ों से पहले से तय था, हडसन थोड़ी-सी सेना के साथ उन्हें बंदी बनाने आया। उसने अपने आदमियों को मकबरे के द्वार के निकट खंडहरों में छुपा दिया और अपने दो दूत मलिका ज़ीनत महल के पास भेजे, यह आश्वासन देने कि यदि सम्राट अपने-आपको अंग्रेज़ों को सुपुर्द कर देंगे तो 'उनकी, मलिका की और जवांवक्त के प्राणों के रक्षा की जाएगी।' ज़ीनत महल ये शब्द स्वयं हडसन के मुंह से सुनना चाहती थीं, अतः वह स्वयं भी आया। उसने आश्वासन को दोहराया, साथ ही यह भी कहा कि यदि हमारी आज्ञा को न माना गया तो सम्राट को कुत्ते की मौत मार डाला जाएगा।

बख्तखां : क्या वहां केवल राजपरिवार था? सैनिकों या प्रजा में से कोई नहीं था? किसीमें साहस न था कि हडसन को तलवार के घाट उतार देता?

मिर्ज़ा कोयाश : शाहंशाह को प्रजा कितना चाहती है, यह तुम जानते हो। सम्राट मकबरे पर हैं, यह समाचार पाते ही वहां लगभग दस हज़ार व्यक्तियों की भीड़ जमा हो गई थी। सबकी आंखों में खून उतर आया था। लेकिन जहांपनाह ने कहा—"हमारी प्राणों से प्यारी प्रजा! हम तुमको बहुत प्रकार के कष्टों की ज्वाला में से गुज़ार चुके

हैं, अब हम नहीं चाहते कि हमारे लिए तुम अपना या शत्रु का रक्त बहाओ। खुदा पर विश्वास रखो, वह सबके साथ न्याय करेगा। हम अपनी मर्ज़ी से अंग्रेज़ों के पास जा रहे हैं।" प्रजा खून का घूंट पीकर रह गई।

बख्तखां : लेकिन यदि शाहंशाह प्रजा को शान्त न करते तो मैं समझता हूं हडसन की एक बोटी भी न बचती।

मिर्ज़ा कोयाश : हां, आज भी दिल्ली में बहुत शक्ति है। लेकिन जाने दो इस बात को। शाहंशाह, मलिका और जवांवक्त को पालकियों में बिठाकर अंग्रेज़ ले गए। तभी देशद्रोही कृतघ्न विश्वासघाती मौलवी रजबअली ने आकर कहा—"अन्य शाहज़ादे तो मकबरे में ही रह गए हैं।" हडसन लौट पड़ा। उस समय मकबरे में मिर्ज़ा मुगल, मिर्ज़ा अबूबकर और मिर्ज़ा खिज्र सुलतान थे। उन्हें भी हडसन ने बंदी बनाया।

बख्तखां : और वे चुपचाप बंदी हो गए ?

मिर्ज़ा कोयाश : हां, क्योंकि जब शाहंशाह ने ही अपने-आपको अंग्रेज़ों के समर्पित कर दिया तो वे हतप्रभ हो गए। उनकी बुद्धि जड़ हो गई। वे चुपचाप पालकी में बैठ गए। जब दिल्ली एक मील रह गई तो शाहज़ादों को पालकी से उतारा गया। उनके कपड़े उतार लिए गए। हडसन ने स्वयं तीनों शाहज़ादों को गोली का शिकार बनाया। उनकी लाशें तड़पने लगीं। कहते हैं, हडसन ने इन शाहज़ादों का रक्त चुल्लू में लेकर पिया। संक्षेप में यही कहानी है शाहंशाह की गिरफ्तारी और शाहज़ादों की शहीदी

की । जिस मुगल राजवंश के व्यक्तियों के मकबरे संसार की आंखों में चकाचौंध भर रहे हैं, उन्हीं के वंश में ये शाहज़ादे भी थे, जिनके लिए मकबरे तो क्या बनेंगे, उनको गाड़ने के लिए पांच गज़ भूमि भी उपलब्ध नहीं हुई ।

बख्तखां : अब तुमने क्या सोचा है शाहज़ादे ?

मिर्ज़ा कोयाश : सोचना क्या है ? जब तक जीवित हूं, अंग्रेज़ों से उनकी इस निर्ममता का बदला लेने का यत्न करना ही मेरे जीवन का लक्ष्य है ।

बख्तखां : तब चलो मेरे साथ । भारत में अभी तक विप्लव की ज्वाला प्रचंड लपटों में प्रज्वलित है । दिल्ली में मुगलवंश के साथ जो मनुष्यता को लज्जित करनेवाला व्यवहार हुआ है उसे देश के कोने-कोने में पहुंचाना होगा । एक तुम ही नहीं भारत का बच्चा-बच्चा इस अत्याचार का प्रतिशोध लेने के लिए सर पर कफन बांधकर लड़ने को प्रस्तुत दिखाई देगा । शाहज़ादों का यह रक्तदान व्यर्थ नहीं जाएगा ।

मिर्ज़ा कोयाश : हां, बख्तखां ! चलो । दिल्ली गई, लेकिन भारत अभी जीवित है ।

बख्तखां : और भारत में मुगल राजवंश के लिए प्रेम और श्रद्धा भी जीवित है । चलो चलें ।

[दोनों का प्रस्थान ।]

[पट-परिवर्तन]

पांचवां दृश्य

[स्थान—पूर्ववत् । समय—प्रभात जब पर्दा उठता है तो बहादुर-शाह 'ज़फर' एक साधारण कालीन पर बिना मसनद के सहारे बैठे हुए हुक्का पीते नजर आते हैं । उनके पास एक तरफ बेगम ज़ीनत महल है तो दूसरी तरफ शाहज़ादा मिर्ज़ा जवांवक्त बैठे हैं । तीनों ही करुणा और निराशा की मूर्ति बने हुए हैं ।]

बहादुरशाह : जिस महल में लोग हमें तीन बार झुककर कोर्निश अदा करते थे—जहां हमारे बुज़ुर्गों के दर्शन करने के लिए संसार की बड़ी से बड़ी शक्तियों को महीनों प्रतीक्षा करनी पड़ती थी, जहां अंग्रेज़ हाथ जोड़े खड़े रहते थे, वहीं हम बंदी की भांति रखे गए हैं । नहीं, नहीं, बेगम, हम इस स्थिति को स्वीकार नहीं करेंगे । हम यहां एक क्षण भी नहीं रहेंगे । हम यहां से चले जाएंगे । हमारा स्थान भारत की दीन-दुःखी प्रजा के बीच है । हम अन्तिम क्षण तक अंग्रेज़ों से युद्ध करेंगे ।

[उठकर खड़े होते हैं और जाने लगते हैं । ज़ीनत महल और जवांवक्त भी उठकर खड़े होते हैं ।]

ज़ीनत महल : (बहादुरशाह का हाथ थामकर) जहांपनाह, कहां जाएगा ? बाहर अंग्रेज़ों का पहरा है ।

बहादुरशाह : पहरा है ! होने दो । हम उनसे युद्ध करेंगे । काश आज कोई बख्तखां को समाचार पहुंचा सके । वह आए और हमको ले चले । हमें नहीं चाहिए अंग्रेज़ों की दी हुई पुलाव की रकाबी । हम भारत के किसानों के साथ मक्के की रोटियां खाएंगे । हम अपने देश के लिए कंकड़ों पर

सोएंगे। नहीं चाहिए हमें यह शाही पोशाक। हमें चिन्ता नहीं, चाहे हमें पहनने के लिए वस्त्र भी उपलब्ध न हों—खाने को भोजन भी न मिले।

जवांवक्त : जहांपनाह यदि हम किसी प्रकार लालकिले के बाहर जा पाएं तो निश्चय ही यह हमारे लिए सौभाग्य की बात हो। मैं तो खुदा से कहता हूं कि क्यों उसने मुझे ऐसी मां दी जो मुझे देश की धूल से अलग रखकर दिल्ली के तख्त पर बैठाने के लिए ही जीवन-भर षड्यंत्र करती रही। मां, तुम्हारी ही आकांक्षाओं ने मुगलवंश के आकाश को चूमने वाले गौरव को धूल में मिला दिया है।

ज़ीनत महल : ओह, सब मुझे ही अपराधी मानते हैं—तुम भी मुझे कोसते हो जवांवक्त। बेटे, तुम मां होते तो समझते कि मैंने जो कुछ किया वह सर्वथा स्वाभाविक है।

जवांवक्त : वे भी माताएं होती हैं, जो अपने पुत्रों को शस्त्रों से सजाकर देश और धर्म के लिए प्राण देने भेज देती हैं। मां, तुम वही भारतीय नारी क्यों नहीं बनीं ? तुमने मेरे हृदय में अंग्रेज़ों के प्रति घृणा और क्रोध के भाव भरे थे और आश्चर्य है कि तुम्हींने उनके षड्यंत्र में फंसकर अपने देश के साथ विश्वासघात किया।

बहादुरशाह : हम पराजित हो गए, अंग्रेज़ों की तोपों से नहीं, अपने ही लोगों के विश्वासघात से—परस्पर की फूट से। अपने ही स्वजनों, प्रियजनों और मित्रों की स्वार्थपरता से। अपने स्वल्प लाभ के लिए हमारे साथियों ने देश के हितों को, देश की स्वाधीनता को विदेशियों के हाथ बेच दिया।

भारत की प्रजा तो आज भी अंग्रजों से जूझ रही है। लखनऊ, कानपुर, बरेली, पटना, झांसी आदि स्थानों पर अभी तक भारत की स्वाधीनता का संग्राम लड़ा जा रहा है। दिल्ली का हृदय भी अभी तक रोष की ज्वाला से धधक रहा है। जब हमें बंदी बनाया गया, उस समय सहस्रों व्यक्ति, जिनमें प्रजा भी थी और हमारे संशस्त्र सैनिक भी थे, उपस्थित थे। हमारे एक संकेत पर सहस्रों तलवारें बिजली की भांति कौंध उठतीं। पता नहीं हमें क्या हो गया कि हमने उन्हें शांत रहने की आज्ञा दी। अच्छा होता, हम वहीं शहीद हो जाते। हमारी शहादत भारतीयों के प्राणों में नवजीवन संचारित करती। अब भी हम चाहते हैं कि कोई हवा का तूफानी झोंका उठाकर हमें चांदनी चौक पर खड़ा कर दे, जामा मस्जिद की ऊंची बुर्ज पर पहुंचा दे। हमारी आवाज़ सुनकर आज भी अंग्रेज़ों से लोहा लेने के लिए सहस्रों योद्धा सर पर कफन बांधकर निकल पड़ेंगे। दिल्ली का बच्चा-बच्चा कट मरेगा हमारे लिए।

ज़ीनत महल : लेकिन जहांपनाह, इससे हमें क्या प्राप्त होगा? दिल्ली की चप्पा-चप्पा भूमि रक्त से नहा जाती, जमुना की नीली धार लाल हो उठती, लालकिले की दीवारें और भी गहरे लाल रंग से रंग जातीं, दिल्ली की प्रत्येक गली लाशों से पट जाती—फिर भी अंग्रेज़ों की विजय को हम रोक नहीं पाते। मुझे तो अब भी आशा है कि अंग्रेज़ हमपर दया करेंगे।

बहादुरशाह : हमारे बुज़ुर्ग अपने बाहुबल और भारत की प्रजा

के विश्वास पर भरोसा न करके अपनी सुरक्षा के लिए धोखेबाज़ अंग्रेज़ों की दया पर निर्भर रहने लगे, तभी से हमारी आत्मा पतित हो गई, ज़ीनत ! तुमने समझा ही नहीं कि अंग्रेज़ों से युद्ध किसलिए छेड़ा गया। क्या मुगल साम्राज्य को सम्पूर्ण भारत में फिर से स्थापित करने के लिए ? नहीं, नहीं। प्रजा की सहायता से भारत को स्वतंत्र करके उसे अपने देश का वास्तविक स्वामी बनाने के लिए यह संग्राम छेड़ा गया है। अंग्रेज़ों की पेंशन पर निर्भर रहने की अपेक्षा यह अच्छा था कि हम प्रजा के सेवक बनकर रहते। वह हमें जिस प्रकार रखती हम रहते। लेकिन, ज़ीनत ! तुम्हारा दिमाग साफ नहीं था। तुम्हें अंग्रेजों से नफरत थी—क्योंकि वे जवांवक्त को वलीअहद मानने को तैयार न थे। तुम हमसे मोहब्बत करने का दावा तो करती रहीं—लेकिन हमारे लिए कोई कुरबानी देने को तैयार न थीं। तुम जानती थीं कि हम नदी किनारे के पेड़ हैं, मृत्यु-नदी की धार किसी भी क्षण हमें बहा ले जाएगी—तब यदि तुम्हारा पुत्र मुगल राजगद्दी का स्वामी न हुआ तो तुम्हारी स्थिति दासी की भांति हो जाएगी। एक दिन नूरजहां ने भी ऐसा ही कुछ सोचा था। तुम अंग्रेज़ों से लड़ीं तो अपने व्यक्तिगत लाभ के लिए और उनसे मेल किया तो वह भी इसी कारण। हमने भी भूल की तुम्हें समझने में ज़ीनत ! जब बख्तखां हमें ले जाना चाहता था तब तुम हमारे पैरों की ज़ंजीर बन गईं।

ज़ीनतमहल : मुझसे जो भूल हो गई है। उसके लिए क्षमा चाहती हूं।

बहादुरशाह : हम तो तुम्हें क्षमा कर देंगे ज़ीनत, लेकिन क्या इतिहास तुम्हें क्षमा करेगा ! भूलें तो हमसे भी हुई हैं जो हमने तुमपर, मिर्ज़ा इलाहीबख्श और हकीम एहसानुल्लाखां जैसे आस्तीन के सांपों पर भरोसा किया। हमें कितनी बारव ख्तखां ने सावधान किया कि तुम लोग अंग्रेज़ों के हाथों बिक गए हो और हमारी पीठ में छुरा भोंकने का यत्न कर रहे हो, लेकिन हमारे अन्धविश्वासी मन ने इसे नहीं माना। खैर, जो हो गया है उसे मिटा सकना हमारे हाथ में नहीं। हमारा क्या होगा इसकी हमें चिन्ता नहीं, देश के इतिहास में एक बादशाह के जीवन-मरण का कोई मूल्य नहीं। प्रारब्ध हमें विपत्तियों, अभावों और अपमानों की चक्कियों में पीसेगा या कुत्ते की मौत मारेगा हम प्रत्येक परिस्थिति के लिए प्रस्तुत हैं—लेकिन हमारी निर्दोष प्रजा पर जो कहर की बिजली टूटेगी उसकी कल्पना करके हमारा दिल टूटता है। अंग्रेज़ प्रतिशोध की भावना में उन्मत्त हैं, उन्होंने अजनाला, इलाहाबाद, कानपुर और बिठूर में जिस नृशंसता का परिचय दिया, दिल्ली में उससे भी अधिक भयानकता का उदाहरण वे उपस्थित करेंगे। नादिरशाह ने भी ऐसा पैशाचिक हत्याकांड दिल्ली में नहीं किया था जैसा अब अंग्रेज़ यहां करेंगे। काश दिल्ली की प्रजा के खून में हम भी अपना खून मिला पाते।

[हडसन दो-तीन अंग्रेज़ सैनिकों सहित प्रवेश करता है। एक सैनिक के हाथों में एक बड़ा थाल है जो कपड़े से ढका हुआ है।]

हडसन : जहांपनाह को हडसन कोर्निश अदा करता है।

बहादुरशाह: कहो, अब और क्या चाहते हो हमसे ?

हडसन : जहांपनाह, मैं तो शिष्टाचार निभाने आया हूं। इस राजमहल में जब कोई आपसे मिलने आता था तो नज़र पेश करता था, अंग्रेज़ भी नज़रें पेश करते थे। कुछ दिनों से अंग्रेज़ों ने नज़र पेश करना बंद कर दिया था, इसलिए आपने विद्रोह किया। मैं फिर उस नज़र के रिवाज़ को प्रारम्भ करता हूं। आज मैं अंग्रेज़ कौम की नई भेंट आपके सम्मुख उपस्थित करने आया हूं।

[हडसन सैनिक से थाल लेकर बहादुरशाह 'ज़फर' के चरणों के पास रखकर उसके ऊपर का कपड़ा उठाता है। मिर्ज़ा मुगल, मिर्ज़ा अबूबकर और मिर्ज़ा खिज्र सुलतान के कटे हुए सर दिखाई देते हैं। देखते ही ज़ीनत चीख उठती है।]

ज़ीनत महल : हाय अल्ला !

जवांबक्त : मेरे भाई, मिर्ज़ा मुगल, मिर्ज़ा अबूबकर और मिर्ज़ा खिज्र सुलतान ! मुझे क्षमा करना। जीवन-भर मैं तुम्हारे रास्ते का कांटा बना रहा। मुझे मेरी करनी का दंड मिल गया है और तुमने पुरस्कार पाया है। तुम देश के लिए कुरबान हो गए हो। अमर हो गए हो।

हडसन : जहांपनाह को यह नज़र पसन्द नहीं आई ?

बहादुरशाह : पसन्द क्यों नहीं आई ? खुदा का चमत्कार इसे कहते हैं। तैमूर की औलाद इसी प्रकार सुर्खरू होकर बाप

के सामने आया करती थी । आज हमारा सीना आनन्द से फूला नहीं समाता । यह रोने का नहीं हंसने का समय है। हडसन, हम तुम्हें इनाम देना चाहते हैं, लेकिन हमारे पास अब कुछ है नहीं। क्या दें इस नज़र के बदले में ? लेकिन जो भी अत्याचार अंग्रेज़ों ने भारत पर किए हैं वे उसके सर पर ऋण के रूप में हैं । भारत बेईमान नहीं है, वह एक दिन यह ऋण चुकाकर रहेगा। यह रक्तदान व्यर्थ नहीजाएगा ।

[हडसन पैशाचिक हंसी हंसता है।]

[पटाक्षेप]

• • •

कुकरेजा प्रेस, गांधीनगर, दिल्ली-३१　　　　1488

राजपाल एण्ड सन्ज़, कश्मीरी गेट, दिल्ली